अनिवार्य हिन्दी तृतीयपत्र

(शास्त्री परीक्षा द्वितीयवर्ष)

अंक १००

3

लेखकः

श्री सुधीर कुमार सिन्हा

एम० ए०

महात्मा गान्धी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

शारदा संस्कृत संस्थान

वाराणसी-२२१००२

सन् २०००-२००१

मूल्य ४०/-

अनिवार्य हिन्दी तृतीय पत्र

शास्त्री द्वितीय वर्ष परीक्षा

अंक-१००

लेखक :

श्री सुधीर कुमार सिन्हा

एम० ए०

काशी विद्यापीठ, वाराणसी

शारदा संस्कृत संस्थान

वाराणसी-२२१००२

प्रकाशक :
शारदा संस्कृत संस्थान
सी. २७/५९, जगतगञ्ज
(सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय पूर्वी गेट के पास)
वाराणसी-२२१००२

अन्य प्राप्तिस्थान-
शारदा भवन
डी० ३६।४४, अगस्त्यकुण्ड, वाराणसी-२२१००१
दूरभाष ३२१३३८

मुद्रक :
मालती प्रेस
३०, विवेकानन्द नगर
वाराणसी

- गद्यपथ
- मेरे निबन्ध मेरी पसन्द के
- संस्कृति संगम
- [illegible]
- निबन्ध
- व्याकरण

गद्य पद्य

विषय-सूची

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द जी

विषय सूची

**

१. गद्यपथ

१. पेट

प्रश्न—'पेट' नामक निबन्ध का सारांश अपने शब्दों में लिखिए ?

उत्तर—भारतीय साहित्य के इतिहास में पं० प्रतापनरायण मिश्र बहुत ही उच्चकोटि के निबन्धकार हैं। इन्होंने व्यंगात्मक निबन्ध भी लिखे हैं। इन्होंने सरस निबन्धों की रचना की है। पेट जैसे विषय पर निबन्ध लिखकर इन्होंने आत्मव्यंजक शैली का परिचय दिया है, इस निबन्ध के माध्यम से इन्होंने पेट शब्द के व्यापक अर्थ पर प्रकाश डाला है। यह निबन्ध हमारी पाठ्य-पुस्तक "गद्यपथ" में संकलित किया गया है। इसमें लेखक ने पेट शब्द की, महिमा पर विचार व्यक्त किया है, और कहा है कि—

दो अक्षर वाले पेट की महिमा वर्णनातीत है, संसार का प्रत्येक प्राणी पेट से सर्वप्रथम परिचित होता है। लेखक के अनुसार पेट वह रस्सी है, जिसमें बँधे बिना कोई नहीं रह सकता। धर्म की दृष्टि से माँ का स्थान सर्वोपरि है क्योंकि बालक नौ माह माँ के पेट में रहकर फिर संसर में आँखें खोलता है। इतिहास के अध्ययन में भी हम महोदर, वृकोदर इत्यादि नामों वाले कुशल योद्धा को देखते हैं। प्राचीनकाल की सुन्दरियों के नाम भी उदर के नाम पर ही विख्यात थे यथा कृशोदरी मन्दोदरी आदि। देवताओं में भी लम्बोदर नाम प्रमुख है।

सृष्टि के सम्पूर्ण प्राणी से आरंभ होकर पेट में ही विलीन भी हो जाते हैं। संसार के समस्त प्राणी पेट के लिए ही उद्यम करते हैं। कुछ एक ऐसे व्यक्ति भी मिलेंगे जो दूसरों की चिन्ता करते हों परन्तु ऐसे लोगों की संख्या कम है। पेट के लिए संसार में मनुष्य क्या नहीं करता

"बुभुक्षित किं न करोति पापम्" पेट के लिए मनुष्य पाप-पुण्य का विवेक भी बहुधा भूल जाता है। पेट की आँच बहुत ही प्रचंड होती है, उसे सहना सबके वश की बात नहीं होती, इसकी प्रचंडता में लोक-परलोक धर्म-कर्म सभी विचार भस्म हो जाते हैं।

यदि इस पेट की पूर्ति थोड़े से प्रयास से हो जाती तो मानव की सभी इन्द्रियाँ चित्त बुद्धि-मन वास्तव में रसिक बने रहते, किसी भी प्रकार क्षुधापूर्ति होती रहे तो भी जीवन का पहिया इधर-इधर लुढ़कता पार पा ही जाता है। इस पेट की विशेषता है, कि प्राणी उत्तम व अधम विभूषित किए जाते हैं। पेट रूपी यन्त्र का नाम ही नर्क है, सभी प्राणी इस पेट की क्षुधा से बुभुक्षित होकर छटपटाते रहते हैं। बालक-वृद्ध-विद्वान-मूर्ख सभी यहाँ तक कि दरिद्र की बात ही छोड़ें धनी से धनी भी भाँति-भाँति के कर्तव्य पेट की खातिर करता है, सभी पेट की आँच की कठिनता को जानते हैं।

कुछ लोग ऐसे भी हैं, जो दूसरों को भूखा देख कर स्वयं उनसे भी भूखा होने का स्वांग भर लेते हैं, ये लोग अपना पेट भरने के अलावा दूसरे की चिन्ता नहीं करते हैं। ये लोग यही सोचते हैं, कि कहीं हमें दूसरे की सहायता न करनी पड़ जाये। जहाँ ऐसी स्थिति हो वहाँ चुपचाप बैठने से अच्छा है, कि कुछ कर्त्तव्य किया जाये, चुपचाप बैठने से इस नराधम पेट की भूख शान्त होने के बजाये और भभक उठेगी, भड़क उठेगी। जिस जगह ऐसा कुचक्र हो हमें उस पर ध्यान देना चाहिए अन्यथा अवश्य ही काल के पेट में समा जाना पड़ेगा।

अतः हम सभी लोगों का यह प्रमुख कर्त्तव्य है कि सभी को सहोदर भाव से देखते हुए सबके भरण-पोषण की चिन्ता करें। पेट चाहे मक्खन सा मुलायम हो या कठौती सा कठोर चाहे हांडी सा ही क्यों न हो चार रोटी सबको चाहिए, ईश्वर की कृपा से यदि हमें कुछ मिलता है तो हमें चाहिए कि स्वयं ही न खाकर उसका कुछ भाग दूसरों के पेट में डालने का यत्न करें और यह संकल्प भी हमें पेट से ही करना होगा कि अपने

और अपनों के पेट में जबतक साँसे हैं, इस कार्य में प्राण-प्रण से लगे रहेंगे।

वस्तुत: इस पेट नामक निबन्ध में पंडित प्रताप नारायण मिश्र ने दिखाया है कि पेट की लपेट अत्यंत विस्तृत है, इसी के कारण लोग दुखी या सुखी होते हैं। इन्होंने प्रत्येक मनुष्य को प्रत्येक मनुष्य के सुख-दुःख पर समान रूप से विचार करने व सहृयता पूर्वक व्यवहार करने को प्रेरित किया है। निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि इस संसार के सभी प्राणी समान रूप से पेट लेकर पैदा हुए हैं और सबके पेट का भरण-पोषण आवश्यक है इस आवश्कता की पूर्ति आपसी स्नेह-सौहार्द से ही संभव है। अत: हमें सुख-दुःख में समान रूप से एक दूसरे के प्रति प्रेम सहयोग व सहानुभूति से विचार करना चाहिए।

विशिष्ट स्थलों का भाव-पल्लवन

१—इन दो अक्षरों महिमा .... बच नहीं सकता है।

व्याख्या—यहाँ पर लेखक पेट के महात्म्य को प्रदर्शित करते हुए कहता है, कि दो अक्षरों से मिलकर बनने वाले पेट की महिमा अधिक नहीं तो बहुत बड़ी अवश्य है। क्योंकि संसार सभी के जीवित व निर्जीव प्राणी जो इसके निवासी हैं, ब्रह्माडो-दर्शी कहलाते हैं। इस संसार के सभी चर-अचर-गोचर-अगोचर वस्तुएँ ब्रह्मांड के पेट में समाई हुई हैं। इससे इस पेट की विशालता का पता चलता है। पेट का वर्णन पेट के बराबर ही बड़ी बात है। भगवान श्रीकृष्ण ने भी अपना नाम पेट से प्रभावित होकर ही दामोदर रखा और यह प्रमाणित किया कि पेट रूपी रस्सी की ही विलक्षणता है, कि इसके बन्धन में सभी लोग बँधे हुए हैं। इससे कोई भी अलग नहीं है अर्थात पेट ही वह चीज है जिसे लेकर सभी व्यक्ति परेशान हैं।

२. धर्म की दृष्टि से .... पेट में ही जाते हैं।

व्याख्या—प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक कई प्रकार से पेट की महिमा व्यक्त करते हुए कहते हैं कि धर्म की दृष्टि से भी पेट का स्थान महत्वपूर्ण है, क्योंकि सभी व्यक्तियों का जन्म माँ के पेट से ही होता है अत: माँ हमें

अपने पेट में धारण करने की वजह से ही महान होती हैं अतः माँ का स्थान व उसके अधिकार हमारे उपर असीमित हैं। प्राचीनकाल के वीरों का इतिहास भी यदि हम देखें तो राक्षसों में महावीर महोदर था, तथा देवताओं में युद्ध कला प्रवीण वृकोदर अर्थात भीमसेन थे। देवताओं में आदि देवता रूप में हम गणेश जी को पाते हैं जिनका नाम ही लम्बोदर है। आदि काल में कमनीय सुन्दरियाँ मन्दोदरी-वृशोदरी आदि नामों से सुशोभित हुई हैं। इस प्रकार जब प्रेमपात्रों की उत्पत्ति उदर से होती है, तो सामान्य जन की बात ही क्या। पेट तो उनके लिए परमावश्यक है। यदि जन्म-मृत्यु सत्य है, तो यह शाश्वत सत्य है, कि सभी पेट से पैदा होकर पेट में ही सन्निहित हो जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं, कि पेट ही समस्त संसार में किए जाने वाले कार्यों का मूल कारण है।

३. अघ रहा संसार में .... न करोति पापम्।

व्याख्या—इस संसार की ऐसी स्थिति है कि सभी लोग चाहे वह किसी भी वर्ग, किसी भी वर्ण, किसी भी श्रेणी के हों पेट के निमित्त कुछ न कुछ कार्य हमेशा ही करते रहते हैं। कुछ व्यक्ति ऐसे महान भी होते हैं जो अपने पेट की ही नहीं वरन् सदैव दूसरे के पेट की भी, दूसरों की भलाई में भी लगे रहते हैं। परन्तु ऐसे लोग हमें बहुत ही कम दिखाई देते हैं। ऐसे लोग अदृश्य देवतुल्य हैं। किन्तु ऐसे लोगों की संख्या ज्यादा ही है, जो अपना पेट पालने के लिए दूसरों का अहित करने में भी नहीं चूकते हैं, इन्हें वास्तव में राक्षसों की श्रेणी में हम रख सकते हैं। ऐसे भी लोग संख्या में कम ही हैं, परन्तु पेट को भरने में, जीवन यापन चलाने में कठिनाई हो रही है उसे देखते हुए अपना ही सोचने वालों की संख्या यदि बढ़ जाये तो कोई आश्चर्य को बात नहीं होगी क्योंकि भूखा व्यक्ति किसी भी प्रकार का कार्य चाहे वह पापकर्म ही क्यों नहीं हो, करने पर विवश हो जाता है। इस प्रकार लेखक का कथन है, कि इस अनाचार पाप का मूल कर्म कारण पाप ही है।

४. इसकी प्रचण्डता से .... लेख अर्थात नर्क है।

व्याख्या—लेखक के अनुसार पेट की भूख इतनी भयंकर होती है कि इसमें न तो व्यक्ति को इहलोक-परलोक का ध्यान रह पाता है और न ही धर्म-कर्म का। पेट की ज्वाला में सभी विचार नष्ट हो जाते हैं, सिर्फ पेट की भूख शान्त करने का विचार ही मन में शेष रह जाता है। यह चमड़े की थैली जैसा पेट यदि थोड़े ही परिश्रम से उचित खाद्य-पदार्थ पाता रहे तो जीवन सुखमय बीतेगा। सभी इन्द्रियाँ बलवती व शरीर पुष्ट होगा मन प्रसन्न रहेगा बुद्धि तेजमय होगी चित्तवृत्ति नीरस न रहेगी। परन्तु यदि कठोर श्रम से भी कुछ न कुछ मिलता रहेगा तो भी जीवन रूपी पहिया चलता ही रहेगा अर्थात् एक-एक क्षण जीवन का किसी न किसी प्रकार बीतता ही रहेगा भले ही सुख एवं निश्चितता जीवन में रहे। परन्तु ईश्वर न करें यदि किसी प्रकार कुछ न मिले तो इस जीवन का कहीं कोई ठिकाना नहीं रहता। इस भूख रूपी पेट की ज्वाला का नाम ही नरक है।

५. यदि दैव ने .... तब तक लगे रहेंगे।

व्याख्या—प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का कथन है, कि महलों का रहने वाला हो या झोंपड़ी का भिखारी सभी को पेट भरने को कुछ न कुछ मोटा, महीन चाहिए ही, अतः सभी को यह चाहिए कि यदि हमारे भीतर कुछ सामर्थ्य है, जो भी कुछ संभव हो हमें अपने अलावा दूसरों के लिए भी करना चाहिए, ऐसा करने वाला महान व्यक्ति है, परन्तु यदि यह नहीं हो पाता तो हमें पेट से प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि अपने पराये सभी की भूख की शांति के लिए जब तक सांस है, कर्तव्य करते रहेंगे। अपने सामर्थ्य भर कोई कमी नहीं रख छोड़ेंगे। ऐसा होने से संसार में सभी का पेट भरना संभव है।

२. कवि कर्तव्य

पाठ का सारांश—प्रस्तुत निबन्ध हमारी पाठ्य-पुस्तक गद्यपद्य में संग्रहीत निबन्धों में है। इसके लेखक श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी जी हैं।

इन्होंने हिन्दी कविता के वास्तविक स्वरुप का इस निवन्ध के माध्यम से अभिव्यक्ति किया है। कवियों का हिन्दी में क्या कर्त्तव्य होना चाहिए इस पर इन्होंने अपना विचार प्रकट किया है। लेखक के अनुसार छन्द में आबद्ध रचना को कविता मानना अपनी अज्ञानता प्रदर्शित करना है। छन्द भाषा विषय के सन्दर्भ में अपने आशय को व्यक्त करते हुये लेखक ने कहा है कि हिन्दी या संस्कृत में जो भी कवि हुए हैं वह अपने इन्हीं गुणों के कारण प्रसिद्ध हुए हैं।

इन्होंने इस लेखमें छन्द, भाषा, अर्थ और विषय की यथाक्रम समीक्षा की है। द्विवेदी जी के अनुसार हर छन्दोवद्ध रचना को काव्य मान लेना अपनी अज्ञानता का प्रदर्शन है गद्य के विषय में विशेष विशिष्टता ? की जरूरत नहीं है सिद्ध कवि चाहे जिस छन्द का प्रयोग करें किन्तु सामान्य कवियों को विषयानुकूल छन्द योजना करनी चाहिए। जैसे समय विशेष में राग विशेष के गाने का प्रभाव अलग होता है ठीक है वैसे वर्णनानुकूल वृत्त प्रयोग से चित्त चमत्कृत होता है। प्राचीन संस्कृत कवि इसका ध्यान रखते थे, कि किस ऋतु, किस समय के वर्णन में कौन सा छन्द प्रयुक्त करना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि नवीन कवियों को संस्कृत के भी कुछ छन्दों का प्रयोग करना चाहिए इससे कविता में कुछ नवीनता आयेगी। संस्कृत काव्यों में प्रयोग किये वृत्तों में दो चार उत्तम वृत्तों का प्रचार हिन्दी में भी किया जाना चाहिए। जो कवि एक ही प्रकार के छन्दोवद्ध काव्य लिख सकते हैं, उन्हें दूसरे प्रकार का छन्द लिखने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए। वैसे तो किसी भी परिपाटी का उलंघन होते देखकर प्राचीनता के पक्षपाती नाखुश होते हैं और अनेक प्रकार की कुचेष्टाएँ व दोष देने का कार्य करने लगते हैं, परन्तु यदि इस पर ध्यान दिया जाय तो नवीनता का लोप ही हो जायेगा छन्दों के साथ अनुप्रासहीन छन्द भी लिखे जायें कहने का तात्पर्य बस इतना ही है।

अब बात भाषा की आती है, तो भाषा सहज व सर्वग्राह्य हो कठिनाई से समझ में आने लायक न हो। कविता लिखने में व्याकरण के

नियमों का पूर्णतया पालन करना चाहिए ताकि शब्दों का मूल स्वरूप बना रहे। मुहावरों के उचित प्रयोग का भी ध्यान रखना चाहिए। विषयानुकूल शब्द रचना करनी चाहिए। गद्य व पद्य की भाषा अलग-अलग न होकर एक होनी चाहिए समाज के अनुरूप उसी भाषा में गद्य-पद्यात्मक होनी चाहिए। पद्य में अर्थ का चमत्कार अवश्य सन्निहित होना चाहिए। विषय से कवि का तादात्म्य ? होना चाहिए। पद्य में नीरसता नहीं होनी चाहिए मात्र तुकबन्दी कविता कहलाने योग्य नहीं होता है।

अब हम विषय की ओर देखें तो कविता का विषय मनोरंजक व उपदेशजनक होना चाहिए। हिन्दी में अनेक शास्त्रीय विषय अलंकार के भेदों, नायिका भेदों इत्यादि पर कविता लिखी गई है आवश्यकता इनसे परे हट कर कुछ करने की है। कवि को इच्छानुसार विषय चुनकर छोटी-छोटी स्वतंत्र कविता करनी चाहिए क्योंकि इसी कविताओं का सर्वथा अभाव है। पहुँचे पंडितों का कथन है, कि धर्मसंस्थापनार्थाय' कवि भी उत्पन्न होते हैं। जैसे तुलसीदास जी ने वैष्णव धर्म की स्थापना की व मत-मतान्तरों का भेद मिटाया है। इसी प्रकार का कार्य सूरदास, कबीरदास इत्यादि ने भी किया है। स्वभावतः कवि संसार के कल्याणार्थ सोचते हैं। कवि लोग ही अपनी कल्पना को साकार रूप देने के लिए छन्द काम में लाते हैं। आजकल हिन्दी की संक्रान्ति अवस्था में कवि का यह कर्त्तव्य होता है कि वह लोगों की रुचि का ध्यान रखकर अपनी कविता को ऐसा सहज व मनोहर रचे कि साधारण शिक्षित लोग भी नयी कविता को हृदयंगम कर सकें। फिर कवि लोगों को नैतिक-धार्मिक सामाजिक विषयों की शिक्षा दें। जैसे चंद्रकान्ता के समान उपन्यास सदोष देने पर भी जनसाधारण में पढ़ने की रुचि जागृत करती हैं, अतः जब बोलचाल की भाषा को, कविता को या दूसरे पद्यों को लोग पढ़ने लगें तो जानना चाहिए कि कवि व कविता दोनों लोक प्रिय हैं। यदि आजकल कविता में शास्त्रोक्त गुण छोड़ कर निम्न गुण हों तो भी वह लोकप्रिय होगी ही।

(१) कविता में साधारण लोगों की अवस्था, विचार और मनोविकारों का वर्णन हो। (२) उसमें धीरज, साहस, प्रेम, दया आदि गुण के उदाहरण हो। (३) कल्पना सूक्ष्म उपमादिक अलंकार गूढ़ न हों। ४ भाषा सहज, स्वाभाविक और मनोहर हो। (५ छन्द सीधा, परिचित, सुहावना और वर्णन के अनुकूल हो।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

गद्य और पद्य .... प्रयुक्त हो सकेगा।

व्याख्या—लेखक का विचार है कि कविता केवल पद्य में ही नहीं बल्कि गद्य में भी रची जा सकती है किन्तु रचना में कविता का लक्षण होना आवश्यक है। जो छन्दों में बँधा होता है वह सभी काव्य है यह समझना अपनी अज्ञानता को प्रकट करना है। वह इस प्रकार के है यदि कोई रचना छन्दों में बँधी हुई है और काव्य के लक्षणों से हीन है तो उसे काव्य नहीं कहा जा सकता। कविता में काव्य गुण होना अति आवश्क है यदि गद्य में भी काव्य गुण मिले तो वह भी कविता है. काव्य विषय निर्देश की जितनी आवश्यकता पद्य में पड़ती है उतनी गद्य में नहीं इसी कारण से लेखक ने पद्य पर विचार करने को कहा है किन्तु उसका अभिप्राय है कि भाषा अर्थ तथा विषय के सम्बन्ध में जो कुछ आगे कहा जायेगा वह निश्चित रूप से गद्य के विषय में भी उसका प्रयोग होगा।

२. जो सिद्ध कार्य .... शोभा वर्धक होगा।

व्याख्या—जो प्रतिभाशाली कवि हैं उनका काव्य सर्वदा उत्तम होता है वे किसी भी प्रकार के छन्दो का प्रयोग करे उनका पद्य सुन्दर और मधुर होता है, किन्तु जो साधारण कविगण है उनके लिए लेखक का विचार है वे अपने विषय के अनुकूल छन्दों का प्रयोग करे। काव्य शास्त्र में उपर्युक्त श्रृंगार रस वर्णन के लिए श्रृंगारिक छन्दों का प्रयोग, वीर रस के लिए छप्पय का प्रयोग इत्यादि। लेखक ने यह भी कहा है कि

समयानुकूल राग गाने से चित्त अधिक आह्लादित होता है जैसे—मध्य रात्रि के पश्चात् विहाग राग और प्रातः प्रभाती राग। उसी प्रकार प्रसंग के अनुरूप छन्द रचना होने से कविता को पढ़ने और सुनने से अति आनंद प्राप्त कर सकेगा। गले में पड़े हुए शोभा देने वाले हार को यदि कटि प्रदेश में धारण करने से वह अशोभित होता है उसी प्रकार छन्दो का प्रयोग विषय के अनुकूल न होने से उस सृजन में कार्य की अज्ञानता प्रकट होती है, लेखक का इस गद्य खण्ड में यह कथन है कि हमें इस बात पर विचार नहीं करना है कौन सा छन्द कहाँ प्रयुक्त होता है क्योंकि काव्य को जानने वाले निपुण कवि इसका ज्ञान स्वयं कर लेते हैं।

३. किसी भी प्रचलित .... लिखे जाये बस।

व्याख्या—लेखक का कथन है कि किसी भी प्रचलित पद्धति का परिवर्तन देखकर प्राचीन और परम्परावादी उसकी आलोचना करने लगते हैं और नवीनता के प्रति अनेक प्रकार की कुचेष्टाये और उसके दोष का उद्‌गार करने लगते हैं और यह निश्चित है इस प्रकार की टीकाओं पर ध्यान नहीं देना चाहिए यदि इस भय से नवीन प्रयोग नहीं करेंगे तो परम्पराओं में नवीतना अथवा उसका परिवर्तन होना समाप्त हो जायेगा।

लेखक का अभिप्राय: यह नहीं है कि पदो के अन्त में अनुप्रास वाले छन्द न लिखे जाये किन्तु उसका विचार है कि इस प्रकार के छन्दों के साथ साथ अनुप्रास हीन छन्द भी लिखे जाये अर्थात् उपरोक्त पंक्ति में लेखक ने यह व्यक्त किया है कि परम्परा से उठकर लिखने पर यदि पुराने विचार के लोग आलोचना करे तो उनकी परवाह न करके नवीन प्रयोग करना चाहिए।

४. संसार में ईश्वर .... उत्पन्न होते हैं।

व्याख्या—यह सत्य है कि संसार में ईश्वर का अवतार कई कार्यों को सम्पन्न करने के लिए अनेकों रूपों में हुआ करता है अद्‌भुत सम्पन्न

करने के लिए प्रतिभा सम्पन्न मानव ही ईश्वर का अवतार हैं, वास्तविक कवि भी एक प्रकार के अवतार ही है यदि कोई यह संदेह करता है कि केवल अवतार क्यों हैं लेखक क्यों नहीं लेखक कवि के अन्दर ही आ जाता है परन्तु कवि में ऐसे गुण होते हैं जिससे लोग अधिक प्रभावित करते हैं कवि धर्म की स्थापना करता है इस कारण विद्वान कवि को ईश्वर का अवतार मानते हैं।

५. आजकल हिन्दी ....रूप से सचेत कर।

व्याख्या—लेखक का कथन है कि हिन्दी भाषा का कर्त्तव्य यही है कि हिन्दी का मेल जोल होना चाहिए कवियों का परम कर्तव्य है। पढ़ने वालों के मन में नई-नई उपमाओ के नये-नये शब्दों और विचारों को समझने की अवधि को उत्पन्न करना ही कवियों का परम कर्त्तव्य होता है उनकी कविता को पढ़ने वालो के मन में नवीनता का जागरण होना चाहिए लोगों के मन में सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक विषयों का ज्ञान शिक्षा के द्वारा ही होता है कवि कवित्र लिखकर लोगों का ज्ञान बढ़ाता है। धर्म के मार्ग पर चलना ही मनुष्य का कर्त्तव्य होना चाहिए और लोगों को अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक होना चाहिए।

३. ईर्ष्या

—रामचन्द्र शुक्ल

पाठ का सारांश—ईर्ष्या एक मनोविकार जीवन है जब किसी व्यक्ति को किसी भी क्षेत्र में उन्नति करते हुए एक दूसरा व्यक्ति देखता है तो सहज ही उसके मन में उस व्यक्ति के प्रति ईर्ष्या उत्पन्न हो जाती है। बहुत जगहों पर यह भी होता है कि किसी एक व्यक्ति के पास कोई वस्तु हो दूसरे पास न हो तो उस व्यक्ति के मन में यही भावना होती है कि उस व्यक्ति के पास भी वह वस्तु न रह जाये। कुछ स्थानों पर ईर्ष्या व्यक्तिगत भी होती है और कुछ स्थानों पर वस्तुगत ईर्ष्या भी पैदा होती है। ईर्ष्या के तीन रूप होते हैं।

(क) किसी दूसरे वस्तु को देखकर पाने की इच्छा होना। (ख) वस्तु
पुरे व्यक्ति के पास न होकर वह अपने पास होना। (ग) वस्येन केन
कारेण दूसरे हाथ से निकल जाये।

यहाँ प्रथम वाक्य में ईर्ष्या नहीं स्पर्द्धा अर्थात् प्राप्त करने की उत्पे-
ात इच्छा का एक सुन्दर स्वरूप और दूसरे वाक्य में ईर्ष्या का भाव
लक उठा है तथा तीसरे वाक्य में ईर्ष्या की पराष्ठा है। ईर्ष्या और
र्द्धा में अन्तर है कि ईर्ष्या व्यक्तिगत होती है और स्पर्द्धा वस्तुगत किसी
क्ति विशेष के सुख, ऐश्वर्य गुण या शान से किसी व्यक्ति विशेष को
खकर अपनी त्रुटि पर दुःख व्यक्त करना। किसी अपने पड़ोसी या
त्र की विद्या का चमत्कार व असर देखकर विद्या प्राप्ति की इच्छा
ागृत हो उठती है इससे कभी-कभी विद्या सम्पन्न मित्र एक आधार बन
ाता है जिससे स्वयं को विद्या पाने की आशा बँध जाती है और कार्य-
मों की शिक्षा मिलती है स्पर्द्धा में अपनी कमी या त्रुटि पर कष्ट होता
दूसरे की सम्पन्नता पर नहीं। क्योंकि स्पर्द्धा में दुःख का विषय होता
। ईर्ष्या एक अनावश्यक मनोविकार है इसके द्वारा कोई भी गणना मूल
चार से नहीं होती है जब कभी ईर्ष्या का जन्म होता है। वैर और
ष में यह अन्तर है कि वैर अपनी किसी वास्तविक हानि के प्रतिकार
होता है तथा द्वेष अपनी किसी हानि या लाभ की आशा में नहीं
िया जाता है। ईर्ष्या निश्चित रूपेण किसी व्यक्ति विशेष से होती है
र्ष्या प्रायः उन्हीं व्यक्ति से होती है जिनके विषय में यह धारणा होती
कि लोगों की दृष्टि हमारे साथ ही साथ उन पर भी पड़ रही है। जिस
कार किराये में रहने वाला कोई धनी व्यक्ति किसी दूसरे शहर के
नी व्यक्ति को सुनकर उसे ईर्ष्या उत्पन्न होती है। तत्पश्चात अपने
ड़ोसी सहपाठी के प्रति ईर्ष्या का भाव अधिक देखा जाता है। ईर्ष्या के
चार के लिए ईर्ष्या करने वाले और ईर्ष्या के पात्र के अतिरिक्त वस्तु
स्थति पर ध्यान देने वाले समाज की आवश्यकता होती है। ईर्ष्या सामा-
जिक जीवन की कृत्रिमता से उत्पन्न जहर के समान है। ईर्ष्या से
वल दुःख की ही प्राप्ति होती है। ईर्ष्या का बहुत बड़ा अधिकार प्रायः

मनुष्य जाति पर होता है जब कभी किसी गरीब मनुष्य को क्रमश
धनी होते हुए देखते हैं तो धनी माने जाने वाला मनुष्य कभी-कभ
जलने लगता है। जिस व्यक्ति के मन में इस प्रकार का अहंकार प्रवे
कर लेता है तो निश्चित रूप से दूसरों से ईर्ष्या करना प्रारम्भ कर दे
ईर्ष्या दूसरे व्यक्ति की असम्पन्ता की इच्छा से उत्पन्न होती है। लेख
कहता है कि ईर्ष्या में क्रोध का भाव किस प्रकार से मिलता है इस
प्रमाण मनुष्य को बरावर मिलता है साहित्य के शब्दों में क्रोध ईर्ष्या
सवारों के रूप में समय-समय पर व्यक्त होता हुआ देखा गया है शुक्
जी अनुसार ने ईर्ष्या के धारण करने की दो दशायें होती हैं असम्पन्न
की दशा में दूसरे को अपने से बढ़ते हुए को देखकर दुःख होता है ईर्ष
को दूर भगाने की सर्वोत्तम दवा उद्योग और आशा को स्वीकार कर
हैं जो अपनी उन्नति के प्रयत्नों में बराबर लगा रहता है उसे न
निराशा होती है और न हर घड़ी दूसरे की स्थिति से मिलान कर
रहने की फुरसत। जिस वस्तु के लिए उद्योग और आशा निष्फल
उस पर से अपना ईमान हटाकर सृष्टि की सम्पन्नता से लाभ उठा
चाहिए।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. जैसे दूसरे के दुःख को "............................ईर्ष्या कहते हैं।

व्याख्या—लेखक का कथन है, जिस प्रकार दूसरे को दुःखी देखक
दुःख होता है। दूसरों की भलाई को देखकर दुःखी होने से ही ईर्ष
की उत्पत्ति होती है उसे हम ईर्ष्या के नाम से व्यक्त करते हैं। यह क
कि भावों जैसे ईर्ष्या एक भावना से प्राप्ति आलस्य, अभिमान, निरा
इत्यादि संयोग से पैदा होती है। बच्चों में कुछ देर से इसकी उत्प
होती है तथा पशुओं में यह भावना नहीं है अधिकांशतः यह यह दे
जाता है कि दो बच्चे एक ही खिलौने के लिए झगड़ते हैं उनमें से ए
उस खिलौने को नष्ट कर देता है उसके प्रति यह भावना जागरूक हो
है कि ये खिलौना किसी के काम में न आये इसलिए ईर्ष्या की सर्वप्रथ
भावना मानव के जीवन में व्यक्त होती है और इसी भावना को ईर्ष
की संज्ञा दी गयी।

२. अब ध्यान देने को .... सन्तुष्ट रहते हैं।

व्याख्या—इसमें लेखक का कथन है कि ईर्ष्या व्यक्तिगत रूप से होती है क्यों कि बहुत जगह देखा गया है कि ईर्ष्या करने वाला और ईर्ष्या किये जाने वालों के अलावा इस स्थिति को जानने वाले समाज की भी आवश्यकता होती है क्योंकि समाज की धारणा पर प्रभावित करने के लिए ही तो ईर्ष्या की जाती है। अपने वास्तविक गुण, ऐश्वर्य गुण या मान का गुण, किसी समुदाय को विदित सुखी एवं सन्तुष्ट रखेगे। समाज में ईर्ष्या की भावना बढ़ जाती है। ईर्ष्या प्रायः उन्ही व्यक्तियों से सम्भव है जिनके विषय में यह धारणा होती है कि लोगों की दृष्टि हमारे साथ ही साथ उन पर भी पड़ रही है। ईर्ष्या सामाजिक जीवन की कृत्रिमता से उत्पन्न एक विष के समान है। ईर्ष्या से केवल दुःख की ही प्राप्ति होती है।

३. न्यायधीश न्याय .... न दौड़ना पड़े।

व्याख्या—इस गद्य खण्ड में कवि कहता है कि न्यायधीश न्याय करते हैं कारीगर ईंट जोड़ता है। समाज कल्याण के विचार से न्यायाधीश के साधारण व्यवहार में कारीगर के प्रति यह प्रकट करना उचित है क्योंकि जिस जाति या समूह में छोटे और बड़े होने का भाव स्थायी हो पाता है वही पर स्थायी ईर्ष्या का जन्म ग्रहण कर लेती है जो विकास के लिये बाधक है समाज में नाना प्रकार के कार्यों को करके अपना जीवन-यापन करते हैं। वहाँ छोटे और बड़े का भेद करना ठीक नही है बल्कि उनकी विभिन्नता ही मानी जाय, असन्तोष की संज्ञा दी जानी चाहिए क्योंकि संघ शक्ति का विकास बहुत ही कम जगहों पर देखा गया है अगर छोटे और बड़ेपन का काम न हो तो स्त्रियों को पुरुषों की सीमा में तथा पुरुषों को हद में न जाना पड़े सभी मनुष्यों को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए।

४. अधिकार सम्बन्धी .... अवसर नहीं आता है।

व्याख्या—लेखक का कहना है कि अधिकार सम्बन्धी, अभिमान सम्बन्धी अंधकार अधिकतर अनुचित सामर्थ्य का हुआ करता है अगर

अधिकार के अनुचित प्रयोग की सम्भावना दूर की जाय तो निश्चय सामाजिक कार्य विभाग में लगी अंधकार रूपी मैल अपने आप साफ जाती है और साथ-साथ सभी कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न होने लगता यदि समाज अपनी जिम्मेदारी समझे की अधिकारी लोग केवल दं घत्तियों को ही दण्डित कर सकते हो तो निर्दोष लोगों पर अनावश ढंग से अभिमान प्रकट करने का अवसर अपने आप ही न रह जाये तक किसी कर्यालय में सभी लोग अपना कार्य ठीक करते रहते हो तक दूसरे पर अपनी बड़ाई प्रकट करने का अवसर ही नहीं आता उन्नति; विकास के लिए आवश्यक है सभी लोग अपना कार्य सही ढं सम्पन्न करे।

५. इसी प्रकार किसी.................................. घसीटना बुराई है।'

व्याख्या—रामचन्द्र शुक्ल जी का कथन है कि बहुत वड़े धन या गुणी का हमेशा दूसरों के धन या गुण से मिलान नहीं करना चाहि साथ हो साथ अपने धन या गुण से दूसरों की कभी देखकर अपनी म नता पर ही सन्तुष्ट रहना चाहिए इस प्रकार का सन्तोष करने व मनुष्य वास्तविकता से दूर हो जाता है। सन्तोष मनुष्य के लिए स्वा विक है परन्तु वह ऐसे ही समय तक के लिए जब तक किस कमी दूर करना हो। कठिनाई का निवारण करना, आवश्यकता को करना संकाच का भाव अच्छा, बुरा ही क्यों न हो। व्यक्ति को अ से बड़ा तथा छोटा नहीं समझना चाहिए। व्यक्ति की दूसरों के सहानुभूति की भावना होनी चाहिए।

६. ईर्ष्या अत्यन्त लज्जावती ...... स्वीकार नहीं करते हुए कहाँ की जा

व्याख्या—यहाँ पर लेखक ईर्ष्या की वृत्ति को स्पष्ट किया है कि ईर्ष्या वृत्ति से ही लजाधुर है क्योंकि वह अपने धारण करने वाले स्वा के सन्मुख भी स्पष्ट रूप से नहीं आती है इसके रूप आदि का पूर्ण प्राप्त किये बिना ईर्ष्यालू व्यक्ति नवविवाहित दुलहन का भाँति है। कभी खुलकर समाज के सामने नहीं आती परदे के भीतर ही रह

चाहती है वह कभी खुलकर समाज के सामने नहीं आती है क्योंकि उसके आने का कोई बाहरी लक्षण धारणकर्ता को दिखाई नहीं देता है। क्रोध करने से आँखें लाल हो जाती है। भय के समय व्याकुल हो उठती है। घृणा करने से मनुष्य की आँख एवं भौ दोनों ही सिकुड़ जाती है। शुक्ल जी का कथन है कि ईर्ष्या का कोई स्वरुप नहीं है क्योंकि वह किसी भी रूप में दिखई नहीं देती है।

४. साहित्य देवता

पाठ का सारांश—इसमें लेखक ने साहित्य को ही अपना देवता माना है तथा इसमें साहित्य देवता की एक तस्वीर अंकित करने की सफल कामना व्यक्त है वह ऐसा चित्र चाहता है। उसके साथ ही साथ उसके जीवन का भी चित्र सामने झलक रहा है। लेखक अपने देवता को हरक्षण देखना चाहता है। परन्तु कुछ बहुमूल्य पत्थर ऐसे भी होतें हैं जिसकी कीमत निर्धारित नहीं की जा सकती है ठीक इसी के समान आज के समय में इस देवता का वास्तविक मूल्य व्यक्त करना बहुत ही कठिन है। आज जो चित्र बनाना चाहते हैं उसमें कोई बाधा आ जाती है। मैं अपने मन को स्थिर करना चाहता हूँ लेकिन हो नहीं पाता है। उस देवता को मैं किस प्रकार का आकार दूँ। लेखक का कहना है कि मनुष्य अपनी अनेकों वेदनाओं से पीड़ित होकर कहता है कि हे मेरे साहित्य देवता तुझे मैं किस प्रकार पुकारूँ क्या करूँ कि हमारे ध्वनि की सीढ़ियों में लचीलापन आ जाये और इसके साथ ही साथ कल्पना सुकोमल डोर से बध जाय हुआ। लेखक ने अपने इस निबन्ध में पुराने इतिहास को भी उद्घाटित किया है जिस प्रकार पशुओं को बिना पकाये ही खा जाने वाली वाणी तथा लज्जा को दूर भगाने वाली वृक्षों की छाले पुराने इतिहास का ही रूप है। हे साहित्य देवता तुम ही जो परिवर्तन को प्रदर्शित करते हो आपके ही माध्यम से बाल्मीकि के राम तथा व्यास के कृष्ण सदैव लोगों के हृदय में व्यास हैं। आप मौन रहते हुए भी अपनी श्रेष्ठता चारो ओर फैलाये हुए हैं। आप दूसरों की अपेक्षा शान्त चित

राजाओं की हत्या से मानव के हाथ मान चित्र में अंकित रंग के समान
लालवर्ण के हो गये हैं। स्थिति आप के ही कारण आज ज्ञान की बहुत
सुदृढ़ हो गयी है। लेखक की कल्पना है कि विशाल नीले आकाश का पन्न
पाकर भी देवगण आपके स्वरूप को निर्धारित करने में असमर्थ हैं
सम्पूर्ण आकाश में धब्बा लगा गये आज मैं हारा हुआ सा भविष्य की
पीड़ा का ढेर सिर पर रखे इस उम्मीद से तैयार हूँ कि जब आप गंगा
और यमुना का हार पहने हुए तथा नगाधिराज रूपी मुकुट धारण कर
मस्तक इधर-उधर करने वाले, नर्वदा और ताप्ती की करधनी पहने हुए
मानो सम्पूर्ण विश्व को नापने के लिए विन्ध्य को पैमाना बनाने हुए
कृष्ण और कावेरी के रूप में किनारे वाला नीलावस्त्र धारण किये विजय
नगर का सन्देश पुण्ड प्रदेश से गुजार कर साह्वादि और अरावली को
सेनानी बना, मेवाड़ में ज्वाला जगाते हुए विश्व को निमन्त्रित कर रहे
होंगे। साहित्य देवता के प्राचीन इतिहास के स्थान पर अपनी बुद्धि विवेक
से कवियों के अन्तःकरण की छेद कर फैलाते, प्रकाश की सहायता से कुछ
परिवर्तित करते हुए नवीनता लाने के लिए व्यक्त सा दिखाई देते हैं।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. कौन सा आकार दूँ .... नहलाये हुए।

व्याख्या—लेखक कहता है कि कौन सा स्वरूप प्रदान करे जिससे मन प्रसन्न हो जाये जिसको देखकर मानव का मन और चित्त प्रसन्न हो जाता है, इस प्रकार के स्वरूप की कल्पना कहाँ से करूँ। लोगों की आकांक्षाएँ विशाल है। इस स्वरूप की कल्पना आधुनिक युग में, विशेष चकाचौंध की दुनिया में व्यक्ति परेशान हो जाता है और हमारी रक्त बोझ और तपन में खाली पैर चलने से मनुष्य को काफी परेशानी का सामना करना पड़ता है। अन्तरात्मा के विनाश की गमगाहट के रूप में विद्यमान है परन्तु पक्षियों, वृक्षों तथा लताओं की सुन्दरता का विश्लेषण किस रूप में कहा जाये।

२. हाँ तो अब मैं .... लाज बचा रहे हो।

व्याख्या—लेखक कहता है कि प्राचीनकाल में जब कच्चा मांस खाना पड़ता था उस समय जलाने का कोई साधन नहीं था और शरीर को

ढकने के लिए वृक्षों का छाल धारण करते थे। इस पुराने इतिहास को पीछे से पढ़ने से ही मालूम पड़ता था कि पाषाण युग में मनुष्य के पास कुछ भी न होने के कारण मनुष्य को एक प्रकार के आदि मानव की संज्ञा दी जाती है लेकिन आज के इतिहास में विज्ञान बहुत आगे निकल गया है। आज खाने के लिए अनाज एवं पहनने के लिए वस्त्र, रहने के लिए मकान की व्यवस्था की गयी है। जिस प्रकार कपास से बने वस्त्रों से लज्जा दूर की जाती है उसी प्रकार आज मनुष्य को जगत् में कल्याण कारी रीति का लज्जा करते हुए दिखायी पड़ते हैं।

६. वेदनाओं के विकास संग्रहालय .... नहीं दौड़े आ रहा है।

व्याख्या—माखनलाल चतुर्वेदी जी का कहना है कि उन्नत देवता की वेदनाओं का संग्रहालय संबोधित करता है कि तुम्हे किस नाम से पुकारु मानव जीवन में विश्वास की पनपती हुई महता के मन्दिर ध्वनि की सीढ़ियों से उतरता हुआ तथा मन्दिर की ध्वनि से राधा शब्द मुखरित हुआ है और गोद में सम्पूर्ण रासलीलाएँ हुई थी। अर्थात् उसकी महानता, गोपाल से सभी जीवधारी मुग्ध होते हैं। आसमान से मिलने वाले जीने के लिए मनुष्य को अपने वेदनाओं का विकास करना चाहिए।

४. कितने दुःसाहस .... होते हैं।

व्याख्या—लेखक कहता है कि साहित्य देवता कितने दुःसाहस के साथ आये और खाली हाथ चले गये बीरानी रात में व्याकुल कर देने वाली रणभूमि में सोहठे तथा विश्व संघ में बाघ का रूप धारण कर आज भी नाना प्रकार के रूपों में ,जैसे हिमालय आदि पवंतों के शिखर से निकलते हैं। उसी प्रकार पृथ्वी से लिपेटे नीली साड़ी के समान महासागर पर और गरीब के खून से मिट्टी के समान साम्राज्यों के निर्माण हेतु चलने वाले जहाजों के झण्डों पर एक मात्र तुम्हीं लिखे हुए स्वरुप में बचे हुए हो।

५. ऋषियों का रात .... सा भी नहीं होता।

व्याख्या—यहाँ पर लेखक का कथन है कि ऋषियों का प्रेम तथा पैगम्बर का संदेश एवं अवतारों की मर्यादा इत्यादि युग युगान्तर से

साहित्य रूपी प्रकाश मापी लालटेन के सहारे तुम्हारे पास पहुँचा अर्थ
इन पूर्व परम्पराओं तथा मर्यादाओं का ज्ञान हमको साहित्य देवता
कृपा से ही प्राप्त होता है। आज भी आप स्थिर नहीं है। तुम सूर्य
चन्द्रमा रूपी पहिये वाले रथ पर जिसमें सूझ-बूझ के घोड़ों पर बैठे हो
उस पर सवार होकर अग्रसर होते हुए. आपको देखने से मालूम हो
है कि हमारा सम्पूर्ण युगों का मूल्य ट्रेन के मार्ग पर पड़ने वाले छोटे
स्टेशन के बराबर भी नहीं होता है अर्थात् उपेक्षित रहता है।

६. आज तो उदास........................ .... खींचने जाऊँगा।

व्याख्या—लेखक कहता है कि इस समय में हारे हुए के समा
खिन्न मन वाला भी होकर भविष्य में आने वाली पीड़ा के समूहों
एकत्रित कर अपने सिर पर लादे हुए अर्थात् अपने आगे आने वा
कल्पनाओं से अक्लान्त जीवन में बहार आने वाली आशा में जीव
धारण किये हुए हैं—जिसके कोमल अन्तःकरण का भेद पर्वतस
मुकुट पहने हुए उसके आने की सूचना पाकर झूम उठे। गंगा यमु
की हार सर्वदा और ताप्ती धारण किये हुए विन्ध्य जो विश्व की अ
पैमाना से नापने के लिए इकाई के सामन होंगे साथ ही साथ कृष्णा त
कावेरी रूपी किनारी वाले नीला वस्त्र पहने हुए विजय नगर रूपी विज
का सन्देश सम्पूर्ण भारत में प्रसारित करता हुआ। अपनी वाणी
सम्पूर्ण विश्व को प्रकम्पित करता हुआ हवा और जल के बन्धन
दूर करता हुआ हिन्द महासागर से आता है ठीक उसी प्रकार भवि
में अन्तःकरण का भेद कर अपने स्वरूप का निरूपण करूँगा।

७. तुम नाथ नहीं हो.................... कोयल सा गा भी देता।

व्याख्या—इस गद्य में लेखक कहता है कि हे साहित्य देवता अप
बन्धन मुक्त होने के कारण मैं अनाथ नहीं हूँ क्योंकि हे अनन्त पुरुष य
आप संसार की कलियाँ लपेटे मेरे घर पर न आते तो ऊपर आका
तथा नीचे पृथ्वी ही होता नदियाँ भी बहती और तालाब भी लहरा
रहते परन्तु हम लोग भी पशु पक्षियों की भाँति स्वभावः लता पत

और आक्रमणों से ही अपना पेट ही मात्र पालते रहते और ऋतुराज बसन्त के मौसम में भी पेड़ पर पंक्षी ही रहते यहाँ पर। साहित्य के बिना चीते के समान गुरगुर की आवाज एवं मोर के समान नाचता कूदता साहित्य कोयल के समान ही गा लेता हैं साहित्य के बिना मनुष्य पशु पक्षी के समान है।

५. भारतीय संस्कृति और नारी

पाठ का सारांश—भारतीय संस्कृति और नारी निबन्ध उच्चकोटि का निबन्ध है। महादेवी वर्मा जी के गद्य संस्कृति शब्द का उपयोग इतने अधिक तथा अर्थों में किया जाता हैं कि उसकी कोई एक परिभाषा देना दुष्कर नहीं तो कठिन अवश्य है। अधिकाशतः संस्कृति शब्द अंग्रेजी के कल्चर के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होती है लेकिन तत्वतः ! वह इसका पर्याय नहीं है। संस्कृति मानव चेतना की प्राकृतिक उर्ध्वागति का प्रकाशन है सभ्यता और सांस्कृति में अर्थ भेद है सभ्यता मानव के बाघ्य आचरण तक सीमित होती है। अभ्यान्तर की वस्तु होती हुई भी बाघ्य रूप में असभ्य नहीं होतीं है। प्रकृति ने आत्मरक्षा की स्वाभाविकता जीवनमात्र को प्रदत्त की है क्योंकि जीवन और मृत्यु का अन्तर न जानते हुए भी पशु पक्षी अधिक भयभीत होते हैं। संयमित चेतना का मानव अपने को अधिकाधिक साहसिक कार्य के योग्य बनाया है। हमारी पृथ्वी सभी मानव समूहों की जन्मदात्री है। इस भारतीय संस्कृतियों में नारी देवी के रूप में दिखाई पड़ती हैं। आर्य संस्कृति से पूर्व भी हमें सिन्धु घाटी की खुदायी में मातृ देवी की मूर्ति मिली है। प्रत्येक संस्कृति में नारी और पुरुष के रूप दो घड़े के समान है। नदी जिस प्रकार उद्गम से ज्यों-ज्यों दूर होती जाती है त्यों-त्यों उद्गम स्थान अलक्ष्य होता जाता है। नारी का सामाजिक रूप उसके भावात्मक रूप से उसी प्रकार प्रभावित होता है जैसे वृक्ष के फल फूल धरती के अन्तर्निहित आद्रता से होते हैं। भारतीय संस्कृति के प्रवाह में बहते हुए हमारे पास तक आये हैं। पत्नी सहधर्मचारिणी होती है उसके बिना न तो धर्म कार्य सफल

होते हैं न ही सामाजिक कार्यों में सफलता मिल सकती है। नारी शासन व्यवस्था, समिति, सभा में भाग लेने वाली, भाषण का अधिकार तथा अध्यात्म सम्बन्धी वाद विवादों में भागीदार थी। अतः यह स्पष्ट होता है कि नारी का कर्मक्षेत्र मात्र गृहणी होकर सन्तानों की रक्षा से लेकर राष्ट्र की रक्षा तक विस्तृत है इसी कारण भारतीय संस्कृति में कोमल तथा कठोर नारी दोनों का समावेश स्वाभाविक था। भारतीय संस्कृति का नारी के सौन्दर्य से अविच्छिन्न सम्बन्ध है। नारी के नाना स्वरूपों का चित्रण है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि बिना स्त्री और पुरुष के आपसी सहयोग से किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त करना सम्भव नहीं है चाहे वह क्षेत्र धर्म हो या सामाजिक कर्म क्षेत्र।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. भारतीय संस्कृति भारत की .... पार करने पड़ते हैं।

व्याख्या—भारतीय संस्कृति भारत की सजला, सुभला, शस्य श्यामलता तथा मलयशीलता भूमि पर विकसित है जिसके कारण इसका स्वरुप बेहद उदार हो गया है। निष्ठुरता एवं आक्रमण तत्वों का इसमें किंचित लेशमात्र की समायोजन नहीं है। इसी भारतीय संस्कृति ने हर मानव के शुद्ध विचारों, छोटे से छोटे ख्यालों को लेकर विस्तृत से विस्तृत, जटिल से जटिल, स्थूल कर्मो तक को ऐसे सुनहले खूबसूरत पावन बन्धन में बाधा है जिसके कारण जीवन को बहुमुखी सर्वभौम विकास देने वाले सभी मणिक्य पिरोए जा सके। मानव के जीवन के हर पहलू को उसका अच्छा आचरण उसकी अच्छी संस्कृति को स्वर्णिक-खूबेसूरत बनाती है। सभ्य सुसंस्कृत मानव कहलाने के लिए आवश्यक है कि उसके अन्तः तथा वाह्य सभी प्रकार के कार्यों का शोधन करके निष्ठा एवं श्रद्धा पूर्वक आचरण में उतरना पड़ता है। आचरण को शुद्ध बनाना पड़ता है।

२. भारतीय संस्कृति का .... इतिहास से नहीं।

व्याख्या—इस गद्यांश में महादेवी वर्मा जी ने स्पष्ट किया है कि वैदिक काल के मानव की शैली, जीवन पद्धति भारतीय संस्कृति

नहीं है तो किसी अन्य लक्ष्य को दर्शाने के लिए उसीकी छूई ऊँगली
समान है जो इशारा करने का प्रधान है वास्तविकता तो कुछ और
हो सकती है।

७. रजिया

पाठ का सारांश—रामवृक्ष बेनी प्रसाद जी अपने इस निबन्ध में मध्य-
मुस्लिम जीवन के विभिन्न पहलुओं की झांकी प्रस्तुत किया है।
१. शिरीष के ... नामक मुस्लिम महिला के बाल्यवस्था से लेकर वृद्धा-
व्याख्या—संस्कृत साहित्य भ... कर दिया है। लेखक को जब अनाचक
सुकुमार माना गया है लेखक का विचार है कि ... जाता है उसके
कालिदास ने इस बात का प्रचार किया। शिरीष के पुष्प इतने सुन्दर
हैं कि वह पक्षियों का भार सहन नहीं कर सकते। कौवों के नन्हे
का कोमल दाब ही वह सहन कर सकते हैं। द्विवेदी जी कहते हैं कि
...म अदि कवि महाकवि का विरोध करना उचित नहीं अगर मात्र
विरोध करने की हिम्मत न होतीं तो कुछ काम बुरा नहीं था किन्तु
विरोध करने की इच्छा तक नहीं कर रहे इससे शिरीष के फूलों की
कोमलता जो कालिदास द्वारा की गयी हैं। उसका सब कुछ सुकुमार
जो उसकी महान भूल थी।

२. महाकाल देवता ... ...जमे कि मरे।

व्याख्या—लेखक कहता है कि महाकाल देवता हमेशा गतिवान
साथ ही साथ वह सभी पर लगातार वार पर वार किए जा रहे हैं
उसके कोड़ों की बौछार अनवरत जारी है जिसके कारण कमजोर व
अधर्मी पत्ते टूट कर गिर जाते हैं परन्तु जो उर्ध्वमुखी एवं बलवान हैं,
सांसारिक संघर्षों से जूझ रहे हैं वे ही सम्भल पाते हैं, ठीक उसी प्रकार
तुरन्त प्राण प्रवाह तथा अभागिन जो जगहों पर व्याप्त है उनका प्रहार
निरन्तर सतत चलता आ रहा है। कायर यह समझने लगते हैं कि जहाँ

होते हैं न ही सामाजिक कार्यों में सफलता मिल सकती है। नारी शासन व्यवस्था, समिति, सभा में भाग लेने वाली, भाषण का अधिकार तथा अध्यात्म सम्बन्धी वाद विवादों में भागीदार थी। अतः यह स्पष्ट होता है कि नारी का कर्मक्षेत्र मात्र गृहणी होकर सन्तानों की रक्षा से लेकर राष्ट्र की रक्षा तक विस्तृत है इसी कारण भारतीय संस्कृति में कोमल तथा कठोर नारी दोनों का समावेश स्वाभाविक था। भारतीय संस्कृति का नारी के सौन्दर्य से अविच्छिन्न सम्बन्ध है। नारी के नाना स्वरूपों का चित्रण है। जिससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्री और पुरुष के आपसी सहयोग से किसी भी श्रेष्ठ चरण रखती हूं। करना सम्भव नहीं है चाहे... कहना है कि जो कवि लालसाहीन नहीं पाया, फक्कड़ नहीं बन पाया जो जीवन भर अपने किये कराए का हिसाब किताब करने में ही फँसा रहा क्या वह भी कवि है? कहा जाता है कोई अपने कवि होने का दावा न करे। एक बार कर्णाटराज की प्रिया विज्जिका देवी ने घमण्ड के साथ कहा कि आज तक त्रिलोक में कुल तीन ही कवि हुए एक ब्रह्मा दूसरे बाल्मिकी और तीसरे व्यास ब्रह्मा ने वेदों की उत्पत्ति की बाल्मिकी ने रामायण और व्यास ने महाभारत की रचना की इसके अलावा यदि कोई कवि होने दावा करे तो कर्णाटराज प्रिय उसके सिर पर अपना बाँया चरण रखती है।

४. राजोद्यान का सिंहद्वार........................ वह इशारा है।

व्याख्या—लेखक का कथन है कि अनासक्त कवि रविन्द्रनाथ ने एक स्थान पर लिखा है कि राज्य के बगीचे का मुख्य द्वार कितना ही मजबूत क्यों न हो, उसकी कलाकृतियाँ भले ही सौन्दर्यमय, मनमोहक ही क्यों न हो परन्तु उसके अन्दर जरा भी गर्व नहीं है। वह यह नहीं कहता कि सभी रास्ते मुझमें समाहित हो सकते हैं, हमारे अन्दर आकर समाप्त हो जाते हैं और वास्तविक महत्व तो उसके अतिक्रमण करने पर ही प्राप्त हो सकता है और यही बताना उसका कर्त्तव्य है इसी प्रकार से जो पुष्प हो या वृक्ष सभी अपने आप में समाप्त नहीं है, परिपूर्ण नहीं

नहीं है तो किसी अन्य लक्ष्य को दर्शाने के लिए उसीकी छूई ऊँगली समान है, जो इशारा करने का प्रधान है वास्तविकता तो कुछ और हो सकती है।

७. रजिया

पाठ का सारांश—रामवृक्ष वेनी प्रसाद जी अपने इस निबन्ध में मध्य-वर्गीय मुसलिम जीवन के विभिन्न पहलुओं की झांकी प्रस्तुत किया है। की स्मृति रजिया नामक मुस्लिम महिला के वाल्यवस्था से लेकर वृद्धा-वस्था की रजिया को पुनः स्वीकार कर दिया है। लेखक को जब अनाचक ही अपने बचपन को याद आती है। तो वह भाव विभोर हो जाता है उसके लिए रजिया का रूप रंग सचमुच ही अजीव था। लेखक को मात्र सहारा देने वाली उसकी मौसी ही थी। उसके गाँव में लड़कियों की संख्या कम नहीं थी परन्तु रजिया की वेशभूषा और उसका रंगरूप तथा कानों में चाँदी की बालियाँ, गले में चाँदी का माला आदि सामने आकर खड़ी हो गयी तव रजिया की स्मृति जाग उठी। रजिया की माँ प्रायः लेखक के गाँव में चूड़ियों को लेकर जाया करती थी। लेखक के विचार से वह रजिया पहली बार उसके गाँव में आयी थी न जाने किस बाल सुलभ उत्सुकता ने आकर्षण पैदा कर दिया था कि लेखक बाल्या-वस्था में ही उसकी ओर आकर्षित हो गये थे। मेरी भावुकता देखकर माँ हँसी के लहजे में बोल उठी कि आप रजिया से शादी करेंगे। लेखक जब अपने सामने रजिया को देखता है तो उसके खुशी का ठिकाना ही नहीं रह जाता है क्योंकि उस समय वह बहुत ही बदल सी गयी थी। अब दुनियाँ बदल सी गयी है अब ऐसे गाँव में हैं जहाँ कि हिन्दू-मुसलमानों के हाथ से सौदा नहीं खरीदते। अचानक रजिया की पोती को देखकर मुझे विश्वास नहीं था कि हवाई जहाज में आने वाली उसके घर में तकलीफ करेगी। दुबली पतली रजियाँ को जब देखा तो आश्चर्य में पड़ गये और देखकर रजिया का चेहरा अचानक बिजली के बल्ब के भाँति चमक उठा और उसमें धँसी नीली आँखें भी प्रसन्नता से चमक

उठी। आज फिर उसकी चाँदी की कलियाँ एक बार पुनः चमक उठी। उसके चेहरे पर लटक रहे बाल चमक रहे थे जो गंगाजल से धोकर उज्ज्वल सी हो गयी है। इस सारांश में लेखक जाति धर्म को न मानते हुए प्रेम सर्वोत्कृष्ट स्वीकार किया है और लेखक उन्हे ही देख अपने को पवित्र कर देता है।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. जीप से उतर कर ....जा सकती थी।

व्याख्या—लेखक कहता है कि मैं जीप से उतरा तो अवश्य था किन्तु कल्पना के पर्वत पर खड़ा होकर आने वाली पीढ़ी को स्वर्ण युग का समाचार सुना रहा था लेकिन मन की कुछ उलझने आपस में उमड़ घुमड़ गयी थी। अभ्यास होने के कारण ठीक अपने वाक् कार्य का कर्तव्य निभाये जा रही थीं जैसा कि सभी नेतागण किया करते हैं अर्थात् मन व वाणी में कदापि कोई भी रिश्ता न था लेकिन इन दोनों में से किसी पर भी अपना नियंत्रण न था या किसी एक की भी गति को रोकना असम्भव था।

२. रजिया ने अपनी .... हो रही है न ?

व्याख्या—लेखक कहता है कि रजिया ने अपनी पोती को मुझे बुलाने के लिए भेज तो दिया किन्तु विश्वास नहीं था कि हवाई जहाज से आने वाला व्यक्ति उसके घर आने की तकलीफ करेगा। परन्तु जब उसने सुना कि मैं आ रही हूँ तो उसने बहुँओं से कहा जरा मेरे कपड़ों को बदलना मालिक बहुत अर्सों बाद आ रहे हैं। मैं उनसे भेट करने जा रही हूँ।

३. दुबली पतली ....बना दिया है।

व्याख्या—लेखक जो अपने सामने रजिया को पाता है तो उसके आश्चर्य की सीमा नहीं रहती क्योंकि वह दुबली पतली रूखी भूखी थी। बुढ़ापे की झुरियं उसके चेहरे पर ठाठ मार रही थी किन्तु जब वह पास

जाकर कहती है मालिक सलाम तो उसके चेहरे की झुर्रियाँ आश्चर्य-जनक ढंग से गायब हो जाती है जो कि उसके शरीर पर मकड़ी के जालों के समान छायी हुई थी। उसका चेहरा मुझे देखकर बिजली के बल्ब की तरह प्रकाशमान हो गया और उसकी धँसी नीली आँखें प्रसन्नता से चमक उठी। आज फिर उसकी चांदी की बालियाँ एक बार पुनः चमक उठी उसके चेहरे पर लटक रहे लटे चमक उठे जो वक्त के गंगाजल से पोछकर उज्ज्वल कर दी गई हो और लेखक उन्हें ही देख अपने को पवित्र कर देता है।

८. बन्दी पिता का पत्र

पाठ का सारांश—त्रिपाठी जी स्वयं एक स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी रहे हैं कैदी के जीवन को बिल्कुल नजदीक से देखकर और अपने अनुभव को निबन्ध का रूप दिया है। लेखक का कहना है कि कैदियों के जीवन में किसी प्रकार की आशा नहीं होती उनका जीवन एकवत होता है किन्तु मानव में एक विशेष गुण होता है वे सुख और दुःख में समंजस्य स्थापित करे। कैदी इसके अपवाद नहीं, जेल में होली के अवसर पर लिखे पत्र द्वारा लेखक ने इस तथ्य को उजागर किया है कि कैदियों के जीवन आनन्द सुख और सन्तोष के लिये स्थान बहुत कम ही है और इस छोटे जीवन का अधिकतम भाग वेदना और पीड़ा में ही डूबा है। सुख तो केवल क्षणिक है जीवन जो दुःखों से आकीर्ण बनाने में सफल हुआ। होली के समय में नाच, गाना, नाटक, खेलकूद जैसे उत्सवों में स्त्री पुरुष सभी भाग लेते हैं प्राचीन काल में स्त्री स्वतन्त्र थी उस समय युवती स्वयं पति का वरण करती थी। होलिकोत्सव उस प्राचीन समय उत्सव की यही बड़ी भारी उपयोगिता थी। हजारों साल से चले आ रहे उत्सव में न जाने कितने हृदयों में उल्लास, कामना, भावुकता मिली हुई है। लेखक महात्मा गांधी की चर्चा करते हुए लिखता है कि आदर्श और सत्य के लिए उस व्यक्ति की दृष्टि में न जीवन का कोई मूल्य है और न जगत का आखिर वे तो मनुष्य थे जिन्होंने ईसा के

तपरत शरीर में लोहे की कील ठोंक कर प्रसन्न और सन्तोष प्राप्त किया था। लेखक उस आदर्श और सत्य परम र रहा है जिसका वे प्रतिनिधित्व कर रहे हैं क्योंकि अहिंसा मानव प्रकृति के अनुकूल है। मानव का इतिहास इस परम साधना का ही इतिहास है जिसमें मानव की पाशविक वृतियाँ शान्त हो जाये और संयमित जीवन का उत्थान हो। गाँधी की तपस्या में भगवान का भी भरोसा था हिंसा और साहस में नहीं। इन्हें होली के उत्सव में सम्पूर्ण भारतवासी गाँधीजी के हृदय को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। फलतः हिंसा और स्वार्थ का उन्मूलन भले ही नहीं परन्तु उस दिशा की ओर तो मानव बढ़ता ही जायेगा अगर इसमें असफलता प्राप्त होती है तो वह गाँधी की नहीं बल्कि मानवता की पुनीत साधना की असफलता होगी। अनुभूतियों और समस्याओं का सामना शायद तुम्हारे भी जीवन में करना पड़े उनका जो प्रभाव हमारे ऊपर पड़ता है। आज मैं बहुत निकट पहुँच चुका हूँ मेरे इस पत्र में एकांकी और जेल के नीरस जीवन उठने वाले विचार तो पंक्तिबद्ध हैं उन्हें अपनी ओर देखते हुए शान्त और एकान्त वातावरण में बैठकर भावना को जब मैं बढ़ने देता हूँ तो वे अपने स्वाभाविक मार्ग का अनुभव करते हैं। इसमें पं० श्री कमलापति त्रिपाठी जी ने अपने देश के प्रति अपने अनुराग, धैर्य और सहानुभूति के समान ही अन्य देशवासियों में होने की आशा का व्यवस्थित चित्रण किया है।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. मैं तो यदि दुर्बीन.......................................बनी रहती है।

व्याख्या—मनुष्य में यदि शक्ति न होती अर्थात् कला सन्तुलन तथा धैर्य का भाव न होता तो वह एक क्षण भी जीवित न रह जाता इस जीवन के अस्थायी अस्तित्व पर चिन्तन करने से ज्ञात होता है कि यह सारा संसार दुःखों से परिपूर्ण है। मनुष्य का जीवन के अस्थायी अस्तित्व से ऊपर उठकर विचार करने से ज्ञात होता कि सम्पूर्ण विश्व वेदना और दुःख से अक्रान्त है। अतः मानव के अस्थायी जीवन पर, अस्तित्व पर

विचार करने से मालूम होता है कि सुख एवं शान्ति की उसमें कमी है। इस वर्तमान मानव जीवन में वेदना जन्य पीड़ा ही अधिक है। सुखों की कल्पना ही मानव में बहुत कम दिखाई देती है। अगर कभी आती भी है तो वे बिजली की भाँति चमकदार दिखाई पड़ती हैं। मानव अपने जीवन में अमिट प्रभाव छोड़ जाता है जीवन में निराशा, आशा, अंधकार में प्रकाश का बोध करता है। वे ही क्षण मनुष्य को जीवन भर याद रहती हैं।

२. फलतः हिंसा और स्वार्थ .... सदा कर देगा।

व्याख्या—लेखक कहता है कि आपसी मार काट तथा निजी स्वार्थ का नाश भले ही न हो सके परन्तु इस पावन दिशा की ओर मनुष्य आगे बढ़ता ही जाता है जिस प्रकार हिंसा की ओर उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति है। उसी प्रकार प्रकृति ने भी स्वाभाविक रूप से उसके संयम की प्रवृत्ति प्रदान की है। महात्मा गाँधी जी के समान व्यक्ति जो कि हिंसा से चलते अपनी जबान मिमाये थे हर मनुष्य को गाँधी के समान ही होना चाहिए वही मानव समाज के विकास का अवरोधक होकर उसकी गति को रोक देता है।

३. यदा निराशा .... दिखाई देने लगता है।

व्याख्या—लेखक का कहना है कि मनुष्य का जीवन आशा निराशा, दुख और सुख के अनेकों रूप होते हैं और हर मनुष्यों के प्रति दुख सुख होता है। ऐसा ज्ञात होता है कि मन तथा अपनी प्रवृति से ही बिल्कुल अलग-अलग है जिसके जीवन में मूल अकेलापन की प्रवृति ही उनके लिए कुछ विशेष साधनों की आवश्यकता होती है। हमारा पूर्ण विश्वास है कि वे साधन अगर उसे नहीं मिल पाते तो उसका जीवन पीछे-अलग सा हो जाता है अर्थात् प्रेरणाहीन हो जाता है। उसे अपना जीवन तथा संसार निरर्थक दिखाई देने लगता है।

३. जीवन में जो अनुभूतियाँ .... दृष्टिकोण से देखें।

व्याख्या—लेखक कहता है कि मनुष्य के जीवन में जो अनुभव मिले तथा जिस समस्याओं को झेलना पड़ता है। मानव जीवन में जो अनु-

भूतियाँ मुझे प्राप्त हुई है और जो समस्याएँ अन्य के जीवन में भी नि
सकती है उनका प्रभाव मेरे ऊपर हुआ है। वही प्रभाव अन्य को भी उ
सकता है। जीवन का जो स्वरूप मेरी समझ में आता है वह
जीवन में सभी मनुष्यों को चाहिए कि वह संसार में कोई अच्छा म
काम करे यह आवश्यक नहीं कि सभी लोग एक ही दृष्टिकोण से देखे है

९. अकेलापन और पार्थक्य

पाठ का सारांश—लेखक का कथन है कि कभी-कभी ऐसा भी हो
है कि अपना मन स्वयं को खा... दौड़ता है। मन में ऐसी इच्छा उ
रही है कि ऐसा उपन्यास पढ़ने को मिले जिसमें मेरे जैसे समस्या वा
... चरित्र लिखा गया हो कभी पुस्तकालय में जाता हूँ तो कुछ पुस्त
पूरी पढ़ जाता और कुछ आधी ही पढ़ कर घर चला आता हूँ। इस
... नहीं कि इस पृथ्वी पर मेरे जैसे अकेला ही नहीं अपितु इ
... अनेकों लोग है। इधर कई दिनों से मेरे मन में भयानक आत्मग्ला
है। स्पष्ट चित्र हृदय में अंकित कर लिया हूँ परन्तु हमने ऐसे कवि
क्षणों में कविता लिखना नहीं शुरू किया अगर मैं चाहता तो उस कवि
को अधिक कष्ट न देता। अकेलापन तथा पार्थक्य में काफी अन्तर
क्योंकि मनोमय जीवन में प्रत्येक व्यक्ति अकेला होता है। वास्तव में पार्थ
को दूर करने के लिए सहानुभूति पूर्ण मनुष्यता है। वह शायद मुझमें न
है। आधुनिक युग के लिए यह ध्रुव सत्य है कि जो व्यक्ति अपने सा
जिक संस्कृति सीढ़ी पर जितना ही चढ़ता और बढ़ता है अपनी भू
से अपने ही लोगों से अपरीचित होता जाता है। कवि की दृष्टि में भय
नक पार्थक्य की अँधेरी खाई फैली है। हर आदमी अपनी व्यक्ति
निजी जिन्दगी जीना चाहता है परन्तु यह तभी सम्भव है जब ह
अपने विशिष्टों एवं सुविशिष्टों के किसी व्यापकता से सम्बन्ध करें
यह मात्र वैदिक कार्य नहीं है यहाँ जीवन जगत में गहरा असन्तोष
वातावरण है परन्तु सार्थक जीवन जीने की अभिलाषा करना अ
बात है उसके साथ जीवन नियमित करना है। इस कविता में अ

निहित उसके रूप, सुन्दरतम कविता अपना स्वरूप प्रकट कर देती है। उसे पाने के लिए मैं लालायित हो उठता है। मेरा मन यह कहने लगा है कि मुझे उस नव्यतर के पास जाने दीजिए। परन्तु मेरे इस कार्य में माता-पिता और स्त्री आदि किसी को भी दिलचस्पी नहीं है। तात्पर्य यह है कि जहाँ मैं हूँ वहाँ कोई अन्य नहीं अर्थात् पार्थक्य का भाव केवल मेरी ओर से नहीं अपितु सभी की ओर से है। लेखक ने समाज में व्याप्त पार्थक्य एवं अकेलापन का बड़े ही अनोखे ढंग से प्रतिपादन किया है। अकेलापन या पार्थक्य का भाव सभी के अन्दर समान रूप से व्याप्त है परन्तु व्यक्ति केवल अपने भाव का ही अनुभव किया है।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. कविता के भीतर……………………जाकर लेट गया।

व्याख्या—लेखक पूर्व लिखित कविता के संशोधन के समय उसके भीतर समाग्री कविता विशालतम उद्घाटित होने लगी उसके उद्घाटित होते ही उसके विस्तार की सम्भावना हो गयी मैंने कविता लिखना बन्द कर दिया। कविता के प्रति मेरे मन में भयानक क्रोध, उत्तेजना के भाव आने लगते हैं। एक ओर मैं एक साथ पिन लगाकर एक ओर फेंक दिया और विश्राम करने लगा।

२. इस युग का यह…………………………बाये फैली हुई हैं।

व्याख्या—आधुनिक युग का यह ध्रुव सत्य है कि मनुष्य ज्यों-ज्यों सामाजिक एवं सांस्कृतिक सीढ़ी पर चढ़ता एवं आगे बढ़ता जाता है तो ऐसी परिस्थिति में मनुष्य को अपनी भूमि तथा अपने लोगों में उतरना ही पड़ता है यहाँ तक कि वह भिन्न अपरिचित तथा अजीब अजनबी सा हो जाता है भले ही वह मंच पर खड़ा होकर जनता की ओर से व्याख्यान दे चाहे सौन्दर्य वाद की तरफ से या व्यक्ति स्वातन्त्र्य की ओर से भाषण दे परन्तु आज सुख सुविधापूर्ण जीवनयापन में लोग स्वयं अपने को भूल गए ऐसी परिस्थित में उन्हें एक विचित्र अलगाव का गहन अन्धकार चारो ओर से घेर रखा था।

३. आज जब देखते हैं .... करना दूसरी बात।

व्याख्या—लेखक कथन है कि आज हम देखते हैं कि जीवन जगत में घोर असन्तोष पूर्ण वातावरण है परन्तु इस असन्तोष का कारण सामाजिक होते हुए भी उसका सम्बन्ध मात्र अपने क्षेत्र से बधा हुआ है जिस प्रकार राख में ढकी हुई चिन्गारी तेज हवा लगने से चमक उठती है और कुछ क्षण के पश्चात् समाप्त हो जाती है। इस प्रकार असन्तोष भी अन्त में निष्फल हो जाता है अतः यह कहा जा सकता है कि सार्थक जीवन जीने की इच्छा करना अलग बात है परन्तु सार्थक जीवन यापन करना अर्थात् जीवन को सार्थक बनाना दूसरी बात ही मानव जीवन का मुख्य आवागमन के बन्धन से युक्त है।

४. जीवन जगत् .... प्रवाहित होगा।

व्याख्या—लेखक ने इन पंक्तियों में वर्तमान जीवन की विसमति का चित्रण किसी भी सामाजिकता के धरातल पर ऐसे मूल्यवान विचार का विशेष महत्व है। लेखक की दृष्टि में जीवन जगत् में जो गहन असंतोषपूर्ण वातावरण है उसका मूल कारण सामाजिक ही है तथा असन्तोष का स्तर केवल आत्म क्षेत्र बद्ध ही है जैसे चिनगारियां राख में पड़ी हुई है तथा हवा लगते ही तूफान के साथ चमक उठती है कुछ क्षण के पश्चात् नष्ट हो जाती हैं यह असन्तोष भले ही आत्मकेन्द्रित तथापि उसमें मानवीय संवेदना का भाव आपेक्षित है।

१०. निज भाषा उन्नति अहै

पाठ का सारांश—मिश्र जी ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के निज भाषा उन्नति अहै इत्यादि को अत्यन्त ही सरल तथा मनोरम भाषा में व्याख्या किया है। प्रस्तुत शीर्षक के माध्यम से राजनीति दृष्टि पथ में ही निवास करने वाले वर्तमान को देखती है, प्रदर्शित किया गया है, जो व्यक्ति इसको पीछे मुड़ कर देखा है वही देख पाया है जो पीछे मुड़कर नहीं देखता वह इसके विषय में कुछ नहीं समझ पाता है चाहे वह भारतीय

हो, चाहे सांस्कृतिक हो, चाहे असंस्कृत हो, भाषा की उन्नति जितनी ही होती है उतनी ही उस देश, जाति तथा समाज की उन्नति होती है। ऐसा कभी सम्भव ही नहीं हो पाया है कि भाषा की उन्नति हो और देश का अवनत हो और इस विवेकशील युग में यह बताना है कि ऐसा कभी होता है ? भाषा वह वरदान है कि जो मनुष्य को सदैव आगे बढ़ाने के लिए ही प्राप्त हुआ है जो कभी अतीत में कमाकर एकत्रित किये हैं। उनका सही ढंग से उपयोग करना ही मनुष्य का वास्तविक कर्त्तव्य है। मनुष्य में ही सब कुछ निहित है इसके अतिरिक्त पशु 'स्व' के सम्मुख न तो कुछ देखता है नहीं कुछ समझ पाता है। जब से हमारी भाषा शुरु हुई है तभी से समाज तथा संस्कृति का भी विकास हुआ है। हम भारतीयों की जो भाषा पुराने समय में थी उसी का ज्ञान परम्परानुसार सभी करते रहते हैं साथ ही. साथ वैदिक भाषा की रक्षा भी यत्न पूर्वक करते चले आ रहे हैं। भारतवर्ष में अपना राज्य था और अपनी भाषा थी। इस समय हम स्वतन्त्रत तो हो गये है परन्तु हम पराधीनता के सशक्त बन्धन से अभी भी पूर्णतया छुटकारा नहीं प्राप्त कर सके हैं। हमारे देश में विदेशी सत्ता हट जाने पर भी विदेशी भाषा का अंकुश हमारे देश पर चुभा हुआ है इससे हम स्वतन्त्र होते हुए भी परतन्त्र ही हैं बिना निज भाषा के ज्ञान के शूल को निकालना सम्भव नहीं है भारतेन्दु के पश्चात् महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने इस प्रतिष्ठा को आगे बढ़ाया हिन्दी साहित्य में सभी प्रकार की आवश्यक प्रभूत सामग्री एकत्र की है। भारतीय भाषाओं में यह विशेषता है कि सभी सम्बद्ध भाषाओं में व्यंजना का प्राधान्य है। भारतीय भाषाओं का मूल एक ही है विकास, हिन्दी का ही विकास कहा जाता है। अन्य भाषा-भाषी कहें कि हिन्दी हमारे जिस सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है क्या उससे अलग किसी अन्य भी संस्कृति के नहीं है फिर एक से दूसरे का विकास क्यों नहीं हो सकता है अतः यहाँ कहा जा सकता है कि सभी उन्नति की जड़ ही भाषा की जननी है। प्रस्तुत निबन्ध में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी द्वारा अपने देश में अपनी भाषा पर विशेषयत्न दिये जाने का वर्णन श्री विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी ने बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. भाषा वह वरदान है...मिलता है।

व्याख्या—लेखक कहता है कि भाषा वरदान के रूप में मनुष्य को प्रा है। जानवरों को भाषा नहीं है क्योंकि सभ्यता एवं संस्कृति पशुओं लाभ नहीं है। पशु पक्षियों का प्रकृति जितना अधिक विकसित है उत हीं वे अपने जीवन में आगे बढ़ते हैं परन्तु मनुष्य जाति का जो विक परम्परा है वह ग्रन्थ के रूप में संचित है जिसका हम दर्शन बराबर कर आ रहे हैं। यह सम्पदा जानवरों को प्राप्त नहीं है वे केवल जन्म ले और मरते हैं।

२. हिन्दी का ज्ञान भारतेन्दु...शुद्ध आन्दोलन था।

व्याख्या—हिन्दी का विशेष ज्ञान भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को ही था जिन्होंने आधुनिक समय में उसके महत्व से जनमानस को अवगत कराया है। हिन्दी भारतेन्दु द्वारा ही निज के साँचे में ढली है। इस हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार के लिए उन्होंने जो आन्दोलन चलाया वही शुद्ध भावागत साहित्यिक आन्दोलन था। इसके पूर्व जो हिन्दी आन्दोलन हुए वे धर्म सम्प्रदाय के गुरूओं द्वारा थे। वे धर्म चाहे विदेशी मतों से प्रभावित रहे हों चाहे देशी। धर्म के समान ही वे सभी धर्म प्रचार की दृष्टि से राष्ट्र भाषा की चर्चा करते थे। इस दिशा में भाव प्रसार आन्दोलन का श्रेय भारतेन्दु हरिश्चन्द्र को ही है व धर्म गुरू चाहे विदेशी मतों से प्रभावित है। राष्ट्र में वास्तविक ज्ञान का नींव वहीं से व्याप्त हुई।

३. हिन्दी को सच्ची...बाधक न होगा।

व्याख्या—भारतेन्दु जी हिन्दी को सच्ची सरस्वती मानते हैं। अन्य कई प्रकार की देशी भाषा बोलने वाले यदि समझते हैं कि हिन्दी के के साम्राज्य पर हिन्दी लादा जाय तो इससे हिन्दी का कोई ज्ञान नहीं होगा उसकी शक्ति का और भी प्रसार होगा उसकी साधना और दृढ़ होगी। भारतीय भाषाओं का एक ही मूल स्वर है इससे भावनात्मक

एकता को भी बल मिलेगा सभी देशी भाषाओं की जड़ एक होने से हिन्दी के विकास में उसका सहयोग तथा लगाव कभी भी बाधक नहीं होता है।

११. सदाचार का तावीज

पाठ का सारांश—इस पाठ में हरिशंकर परसाई जी कहते हैं कि किसी राज्य में भ्रष्टाचार अधिक फैलने का हल्ला मचा हुआ था एक बार किसी राजा ने अपने दरबारियों से कहा कि हमें भ्रष्टाचार कहीं भी नहीं दिखाई दे रहा है। दरबारियों ने कहा कि जो आप को नहीं देखती वह हमें कैसे दिखाई पड़ सकती है। राजा ने आदेश दिया कि तुम लोग जाकर राज्य में देखो अगर कहीं दिखाई पड़े तो भ्रष्टाचार का नमूना हमको भी देखने के लिए लेते आना। तब एक दरबारी बोला कि महाराज भ्रष्टाचार बड़ी सूक्ष्म चीज है और हम लोग आपकी विराटता देखने के कारण इसको नहीं देख पायेंगे। अगर भ्रष्टाचार आ भी जाये तो उसमें आपकी छवि देखेंगे। आपके राज्य में रहने वाले विशेषज्ञ ही इसको देख सकते हैं। राजा ने बुलाकर पाँच विशेषज्ञों को भ्रष्टाचार के नमूने सामने लाने का आदेश दिया और उन्होंने तुरन्त खोज शुरू कर दी और दो महीने बाद उनके आने पर राजा ने पूछा कि क्या आपको भ्रष्टाचार मिला तो वे लोग बताये कि बहुत सा मिल चुका है। विशेषज्ञों ने बताया कि वह अत्यन्त ही बारीक है क्योंकि वह स्वतन्त्र व्यक्ति होने पर भी दिखाई नहीं देता, उसका तो अनुभव ही किया जा सकता है। राजा ने कहा कि सर्वत्र व्याप्त होने पर भी न दिखाई नहीं देता तो उसका अनुभव ही किया जा सकता है। एक दिन दरबारियों ने एक महात्मा को दिखाकर राजा से कहा कि ये सदाचार का जन्त्र बनाते हैं जिसे हाथ में बांधकर सभी सदाचारी हो सकते हैं। राजा ने कहा साधु इस तावीज के विषय में मुझे विस्तार से बतावो इससे मनुष्य कैसे सदाचारी हो सकता है। साधु ने समझाया महाराज भ्रष्टाचार एवं सदाचार मनुष्य के आत्मा में होता है अंदर से नहीं आता आत्मा को

पुकार यही है। जब कोई आत्मा बेईमानी का स्वर निकालती है तः इस तावीज की शक्ति उसका गला घोंट देती है। दरबार में हलचल मच जाती है, सभी दरबारी उसे देखने लगते हैं। इस राज्य की ओर से तावीज का कारखाना खोल दें इस पर राजा का सुझाव पसन्द आया। राज्य में भ्रष्टाचार मिटाने का सरल उपाय निकल आने पर राजा तथा दरबारी दोनों बहुत प्रसन्न थे। इसके बाद राजा तावीज पर कान लगाकर सुनते हैं कि उसमें से आवाज आ रही थी कि आज इकतीस तारीख है आज तो ले लो। इससे यह स्पष्ट होता है कि व्यक्ति उस स्वर को आत्मा की पुकार समझकर सदाचार की ओर ही प्रेरित हो जाता है महाराज इस सदाचार के तावीज का यही महान गुण है।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. यह तावीज गले में .... गुण है महाराजा।

व्याख्या—लेखक का कहना है कि मनुष्य की आत्मा ही भ्रष्टाचार का मूल कारण है। साधु महात्मा राजा से अपने हृदय का उद्‌गार प्रकट करते हैं कि जब किसी व्यक्ति की आत्मा से बेईमानी के स्वर निकलने लगते है तब इस तावीज की शक्ति उस व्यक्ति की आत्मा का गला घोट देती है अर्थात् उसका जीवन समाप्त कर देती जिस आदमी के तावीज से ईमानदारी के स्वर सुनाई पड़ता हैं उस स्वर को आत्मा की पुकार समझ कर सदाचार की ओर अग्रसर होता हैं। यही इस गुण का प्रधान लक्ष्य हैं।

२. भ्रष्टाचार तथा सदाचार .... वह सदाचारी जायेगा।

व्याख्या—लेखक कहता है कि महात्मा राजा को समझाते हुए कहता है कि महाराज भ्रष्टाचार और सदाचार मनुष्य की आत्मा में होता है बाहर से इसका कुछ भी स्वरूप दिखायी नहीं पड़ता। ब्रह्माजी ने जब मनुष्य को बनाये थे तो किसी के भीतर ईमानदारी की भावना दिखायी हैं और किसी के अन्दर बेइमानी की भावना दिखायी है इसी से ही ईमानदारी तथा बेइमानी के स्वर निकलते हैं उसे ही हम आत्मा की

पुकार कहते हैं । इसी पुकार के अनुरूप आदमी की समस्या जिनकी आत्मा से बेईमानी के स्वर निकलते हैं उसको दबाकर ईमानदारी के स्वर में बदलना चाहिए तभी तो हमने यह सदाचार का जन्त्र बनाये हैं जिससे मनुष्य अपनी बाँह में बाँधे रहेगा वह सदाचार के नाम से पुकारा जायेगा ।

३. साधु ने समस्या ....चिन्तन से क्या है ।

व्याख्या—लेखक का कहना है कि साधु ने महाराज को समझाया कि भ्रष्टाचार एवं सदाचार मनुष्य की आत्मा में होता है बाहर से इसका स्वरूप एक प्रकार का नहीं होता भगवान ने जब मनुष्य का निर्माण किया था तभी उसकी आत्मा में सच्चाई की भावना को व्यक्त किया था । इस ईमानदारी या बेईमानी के स्वर निकलते हैं जिन्हें आत्मा की पुकार कहते हैं अर्थात् आत्मा की पुकार के अनुसार आदमी काम करता है । आत्मा का अभिप्राय यह है कि बेईमानी के स्वर निकलते ही उसे दबाकर ईमानदारी के स्वर में बदलना चाहिए अभी तक इसमें सदाचार का ही ताबीज बन पाया है ।

२. मेरे निबन्ध मेरी पसन्द के

१. शिरीष का आग्रह

पाठ का सरांश—प्रस्तुत निबन्ध के लेखक डॉ० विद्यानिवास मि
जी हैं यहाँ पर प्रस्तुत विचार समीक्षात्मक निबन्ध है। इस निबन्ध
प्रारम्भ संस्कृत साहित्य के महाकवि कालिदास के अभिज्ञान शकुन्तल
के कानों में शिरीष कुसुम के अलंकृत करने से सूनी लगने का वर्ण
किया है। लेखक ने प्रस्तुत निबन्ध से यह व्यक्त किया है कि कालिदा
जी बसन्ती-सुषमा, कामक्रीडा, रति की अनेक स्थिति, वर्षा की उत्कर्ष
तथा शरद के काल कुसुम की अभिव्यक्ति में आनन्दित होता है
भारत-भूमि एवं उसके संस्कार का जिसमें ग्रीष्म का तीव्रताप स
कालीन सुकोमलता में परिणत होता है। कालिदास की विशेषता य
है कि यह तपोवन में भी अत्यन्त विलक्षण तेज का आन्वेषण कर
हैं कि तापकाल को हथेली पर रखकर इन्द्रीय संयमपूर्वक मन
सूक्ष्म की ओर ले जाने का साधन है। भारतीय तपोवन में भी अत्यन्
विलक्षण तेज का होना आवश्यक होता है और एक ओर तो आहुत
का सुगन्ध तथा दूसरी तरफ वृक्षों की क्यारियाँ जल में डूबने से शीत
लगती है। इस प्रकार ताप तथा विश्रान्ति का ऐक्य है। ऋतु से सत्
तप, रात्रि, समुद्र अर्पणा, सूर्य चन्द्र सबका सामंजस्य पवित्र होता है
प्रातः कालीन, संध्या आत्मज्योति को जलाती है। सायंकालीन सन्ध्
सौन्दर्य का आधान करती है इसलिए कालिदास जीवन सौन्दर्य क
वर्णन कमल से तथा जीवन का दीपक से करते हैं। जीवन परीक्षा
खरी उतरने वाली शकुन्तला के कानो में शिरीष सुशोभित तथा मा
लीय अनुभुति के मूल का प्रतिनिधित्व करता है। उसी प्रकार शरी
सौन्दर्य कमल जैसा कोमल हो किन्तु जीवन परीक्षण में चाहे जितने

विप्रलम्भादि जनित कष्ट हो। कालिदास का वर्ण्य विषय परीक्षण की स्थिति में तो ज्येष्ठ मास का सन्तप्त सूर्य है परन्तु वर्णन शैली शिरीष जैसी मनोहारिणी है।

कालिदास जी ने कहा है कि दुष्यन्त शकुन्तला के चित्र में उसके दोनों उरोजों के मध्य चन्द्रमा की किरणों के समान सूक्ष्म कमलतन्तुओं की माला बनाने में अपने को सार्थक मानता है। वास्तव में यह मृणाल-तन्तु मातृवात्सल्य में बाह्य सौन्दर्य अत्यन्त सूक्ष्म होने का संकेत करता है। यह मृणालतन्तु लोभी हंस कैलाश पर्वत को मानसरोवर से विस्मृत की स्मृति से, विरही को विरहिणी से जोड़ता है। शकुन्तला वह शक्ति है जो दुष्यन्त विरहमय ग्रीष्म का ताप सहन करती हुई सर्वदमन भरत को जन्म देती है। आकाशगामी रथवाला दुष्यन्त राजमद में विस्मृत होकर शकुन्तला का परित्याग करके विरह व्यथित करता है किन्तु शेर का दाँत गिनने वाले सर्वदमन भरत तथा भरत जननी शकुन्तला के सामने झुक जाता है। शकुन्तला के चरण कुशी से सिद्ध होते हैं। महाकवि की शिरीष पुष्प कमलतन्तु, वसन्तऋतु का सौन्दर्य ग्रीष्म ऋतु का शिरीष कुसुम, शरदकालीन शुभ सम्मेलन तक पहुँचाता है। इस प्रकार कालिदास की यह कृत इत्यादि कथन अत्यन्त मनोहर एवं सारगर्भित बिन्दु का संकेत करता है। इसलिए शकुन्तला के कानों को सुशोभित करने के लिए शिरीष के प्रति कालिदास का आग्रह सार्थक एवं विवेकपूर्ण है।

२ टिकोरा

पाठ का सारांश—इस निबन्ध में लेखक ने टिकोरा के माध्यम से अपना प्रकृत सौन्दर्य से प्रेम दिखाते हुए हिन्दी साहित्य के आधुनिक असांस्कृतिक लेखकों पर कटाक्ष किया है। वसन्त ऋतु के आम पल्लवों में लाली हो गयी आम में बौर लग गये और कुछ बौर लहरा कर जमीन पर गिर गये कुछ पुरवाइयाँ में लहियाँ गये। आम धीरे-धीरे आने के लिए आने से सुरभि युक्ति हवायें बहकर मादकता लाने लगीं।

आम के टिकोरों में खट्टापन आने लगा छोटे-छोटे बच्चे आम के टिकोरों को तोड़ने लगे। सतुआ संक्रान्ति के दिन सत्तू के साथ टिकोरों के चटनी खाने की परम्परा है। आम के पेड़ में टिकोरों से लदी हुई वृक्षों की डाली आँधी आने पर टूटकर गिर जाती है। कुछ लोग कलमी आम के बौर को प्रारम्भिक अवस्था में दो-तीन वर्षों तक हाथ से तोड़ दे हैं। जिससे पेड़ कमजोर न हो।

कुछ लोग आम के पेड़ को छिनगाकर आधुनिक ढंग से व्यवस्थित कर हैं किन्तु लेखक जो कहते हैं कि मुझे टिकोरों से लदे हुए छायादार आम के पेड़ बहुत अच्छे लगते हैं। हम स्थापित में विश्वास रखते हैं और वही साहित्य का प्राण है कुछ लोग बूटी को अधिक खाने के बाद उसक नशा को उतारने के लिए टिकोरे का उपयोग करते हैं कुछ हासोन्मुख लोग आम के टिकोरों का महत्व न समझकर उदासीनता का भा रखते हैं। यहाँ पर लेखक की नायिका नायक से टिकोरे न तोड़ने की प्रार्थना करती है कि टिकोरे तोड़ने से पेड़ की शोभा समाप्त हो जात है। टिकोरे से भरे रहने पर डालियाँ अत्यन्त सुशोभित होती हैं पूर्व हवा चलने पर लहियाकर गिर जाते हैं। डा० मिश्र जी कहते हैं कि टिकोरा ही आगे चलकर पूर्ण फल के रूप में परिणत होता है। बौ का सम्बन्ध तो वायु से ही है किन्तु पका हुआ आम तो धरती के गोद में गिरता है इसलिए वायु और धरती को आश्वासन देने वाले कच्चे आम का आभार व्यक्त करना प्रत्येक व्यक्ति का परम कर्तव्य है यद्यपि कोयल आम के बौरों पर नहीं कूकती तथा अमृत द्रव पारखी शुक टिकोरों पर अपना ठोर नहीं लगाते; परन्तु शैतान बच्चे आम के टिकोरों को ढेले से मार-मार कर तोड़ देते हैं। पूर्वी साहित्य में नयी तरुणायी के साथ टिकोरे का तादात्म्य स्थापित करना एक महत्वपूर्ण विधि के रूप में स्वीकार किया गया है।

पश्चिम देश में आमों की जेली, मुरब्बा इत्यादि बनाकर शीशे पात्रों में सजाकर रखे जाते हैं जो देखने में बहुत ही सुन्दर लगते हैं। आम

निक युग में जिस प्रकार से टिकोरों के प्रति लोगों की कुदृष्टि है उसी प्रकार से कुछ नये तरूणायी वाले हिन्दी साहित्यकार नयेपन की खोज में हिन्दी को ही क्षत-विक्षत करने पर लगे हुए हैं। ये नये साहित्यकार परम्परागत विभिन्न साहित्यकारों की परस्पर प्रेम प्रशंसा और हाव सिलीवरि के बल पर अपने को ही सर्वस्व मान बैठे हैं।

लेखक टिकोरा युक्त आम का बाग, शान्त एकान्त स्थल में रहने, उससे प्रेम करने तथा उसे देखने में अपने को कृतार्थ मानता है। टिकोरा बसन्त ऋतु की सफलता, नूतन वर्ष का स्वागत एवं विभिन्न रम्यताओं का धोतक करता है इसलिए इसका अभिनन्दन करता है ध्वंस करना कदापि सम्भव नहीं है।

३: कदम की फूली डाल

पाठ का सारांश—हिन्दी साहित्य प्राचीन मान्यताओं और परम्पराओं का परित्याग कर रहा है। आज के बनावटी पन की तरफ अग्रसर होने वाले तथा वास्तविकता से उनमुख लोगों पर लेखक खेद व्यक्त करता है। हिन्दी साहित्य को प्राचीन मान्यताओं और परम्पराओं का परित्याग कर देना चाहिए आज यही कारण है कि परिमल गन्धी अक्षयकोष सम्पन्न कलमदल आज विकसित नहीं हो रहे हैं। अनेक गुण सम्पन्न कमल के लिए मानसरोवर तथा हंस एवं निर्मल जल की आवश्यकता है जल की निर्मलता के अभाव में वर्षा में हंस उड़ जाते हैं तथा कलम क्षत विक्षत हो जाता है। ऐसी अवस्था में चन्द्र की चाँदनी, वसन्त ऋतु के आगमन, शरद के सौन्दर्य की अपेक्षा न करता हुआ दुर्दिन का स्वागत करता हुआ मुरलीनाद से ब्रह्माण्ड का भेदन एक मात्र कदम्ब ही है। अतः अन्य फलों की भाँति कदम्ब के लिए विशेष साज सज्जा की आवश्यकता नहीं होती। कदम्ब को किसी प्रकार काटने, क्यारियों में सजाने की कोई इच्छा नहीं होती वह श्यामल पत्र जाल वाला कृषि के प्राण भगवान् श्री कृष्ण के साथ फूलता फलता हुआ फल की मधुरिमा युक्त सुगन्धित फूल को सार्थक बनाता हुआ आगे

बढ़ता जाता है। सावन-भादों की मूसलाधार वर्षा में फूल समाप्त हो जाते हैं किन्तु कदम का वृक्ष सब प्रकार संकटों को झेलता हुआ प्रफुल्लित दिखाई देता है। इसीलिए श्रीकृष्ण की मधुर बाँसुरी की धुन, ग्वालों के खेल, इन्द्रमान मर्दन सौभाग्य प्राप्त किया यद्यपि सभी दिशाओं को अनुरञ्जित करने वाला अपने कोटरों में पक्षियों को आश्रय देने वाला कदम पुराना है। अत्यन्त दृढ़ और नया प्रतीत हो रहा है। कौवे और सर्प सबके साथ समान व्यवहार रखता हुआ कदम्ब एक रस रहता हुआ सदा प्रसन्न तथा रमणीय रहता है। कदम की भाँति लोक रागिनी में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ यह भी साहित्य में बिना किसी अपेक्षा के प्राण संचार प्रदान की है। लोकरागिनी का स्वागत बन्धुओं द्वारा मंगलकश भरने, वाणी और अर्थ के परिणय में सौभाग्य, सिन्दूर भरने के समय किया जाता है। गमलों में सजाकर रखने वाले फूल सूख जाते हैं किन्तु कदम्ब का फूल बीज से लेकर फूल तक सर्वदा जनमंगल, लोक प्रसाद एवं मंगल की कामना करता है। साहित्य में हमेशा इनके नये शब्द नयी दिशाये खोजी जाती है। लोक साहित्य की विशेषता यह है कि असंख्य लोगों को एक स्तर के साथ चलने पर इसकी पुनरावृत्ति हो, इसे जीवन दान देती है। जिसमें कवि द्वारा यमुना के तट पर कदम्ब वृक्षों का आश्रय करने वाला असंख्य गोपनाओं से परिवेष्टित कादम्बिनी मेघमाला का रूपक के व्याज से स्मरण किया गया है।

अतः कदम्ब की फूली डाल का आश्रय लेकर लोकमंगलकारी लोक-रागिनी का अनुशीलन करके प्रत्येक सहृदय का जीवन सफल बनाता है।

४. हरसिंगार

पाठ का सारांश—यह निबन्ध का प्रारम्भ विरहिणी नयिका के वर्षा ऋतु के मेघा नक्षत्र की रात्रि में हरसिंगार के फूलों की जमीन पर वर्षा करने तथा जल वृष्टि काल में चन्द्रमा के मध्याकाश में आने

पर की नायिका के पास नायक के न आने पर दुश्चिन्ता व्यक्त करने से होता है। इस सन्दर्भ में लेखक संस्कृत काव्य का उद्धरण देता है हरसिंगार वृक्ष में जब तक एक भी वृत्त होता है चाहे बिजली चमके; चाहे बादल सूने हों बिना किसी परवाह के रात्रि में हमेशा पुष्पदान किया करता है। हरसिंगार अपना पुष्प सर्वस्व दान करता है सफेद पंखुड़ियों द्वारा गम्भीरता अन्तःकरण वाला सात्विक प्रेम का यह पुष्प द्योतक है। धरती के हरसिंगार से दानता तथा दुःख सुख सहन करने की क्षमता की शिक्षा लेनी चाहिए आसमान में छिपने वाला तथा दिखाई देने वाला चन्द्रमा धैर्य खो देता है किन्तु हरसिंगार कभी धैर्य नहीं खोता वह हमेशा एकरस रहता है।

साहित्य में श्याम कहा गया है। शृंगार रस का स्थायी भाव रति या अनुराग का रंग केसरिया रंग से सम्बद्ध है सावन की हरियाली तथा भादों की अंधियारी में पुष्प वर्षा करता हुआ हरसिंगार बसन्ती सुषमा लाता रहता है श्याम में रहने वाला शिव के शृंगार में हरसिंगार का उपयोग किया जाता है अतः हरसिंगार मृत्यु शृंगार दोनों में बाजे सहित बारात चलती है इसलिए काम की दिशाओं में मृति में प्रेम की परकाष्ठा है वर्षा की घटा में जल धारा में विरहिणी के लिए आलस्य, चक्कर मुर्छा, अरुचि कृशता यहाँ तक की विष दान मृत्यु को कगार पर पहुँचा देती है उस विष को उतारने में हरसिंगार के पुष्पों का उपचारार्थ प्रयोग किया जाता है। अतः प्रेम पारखी न होने से प्रेम रोता है ऐसी अवस्था में हरसिंगार का सन्देश है बादल दुख के स्थान पर सुख, विरह को सम्मेलन, निष्प्राण में प्राण देने वाले बादल नहीं दिखाई देते है। कोयल, मूसलाधार वर्षा, पपीहे का स्वर तथा दादुर ध्वनि की अपेक्षा न करके मेरे लिए सर्वाधिक आश्रय हरसिंगार है अपने को खोया एवं हारा हुआ प्रेम पथिक कहता हुआ लेखक हरसिंगार की दानशीलता पर सर्वस्व समर्पित करने का भाव व्यक्त करता है। शिव और सुन्दर के संयोग के लिए सत्य की नितान्त आवश्यकता

है किसी वस्तु की प्रतीति 'अस्ति' होने पर ही कोई वस्तु प्रिय लगते है। हर शिव तथा उनका श्रृंगार हर श्रृंगार नामक रूपात्मक है गंगा और चन्द्रकला मूर्त वस्तुये हैं। गंगा की ईर्ष्या ने चन्द्रमा की कला के महाशक्ति के चरणों पान करके हरसिंगार को लाली प्रदान की। प्रेम को प्रेम की अन्तिम शोभा हरसिंगार होने अर्थात् भस्मसात् होकर श्मशान की राख होकर शिव मस्तक पर सुशोभित हो। में है। हरसिंगार के अनेक रूपों का वर्णन करता हुआ लेखक नाम रूपात्मक जगत् में प्रेम के मूर्तरूप की सार्थकता शिवश्रृंगार में पर्यवसित होने का वर्णन किया है।

५. चितवन की छाँह

पाठ का सारांश—मिश्र जी कहते हैं कि चितवन से मेरा लगाव बहुत पुराना है। गन्ध का परम तत्व मानस है रूप रस और स्पर्श विरल गन्ध है क्योंकि गन्ध का पुजारी पृथ्वी से सन्बन्धित होने के कारण विश्व का श्रृंगार बन जाता है। गन्ध का वाह कर वायु गन्ध का अमोद पाकर, रस गन्ध का महक पाकर स्पर्श अत्यन्त आकर्षक बन जाता है। शब्द की शून्यता के भीतर ही गन्ध के अनेक रूप खींचे गये हैं। छितवन की नन्दभवन है इससे जो जितना दूर रहता है वह उतना ही सामान्य मादक लगता है जो जितना दूर रहता है वह उतना ही सामान्य छितवन का सौन्दर्य व्यक्ति में न होकर समष्टि में समाहित है। छितवन के फूल अलग-अलग न होकर एक साथ अपनी पूर्णता लिए हैं। इस छाँव में सर्प भी सन्तोष प्राप्त करते हैं और अपनी विष की ज्वाला को शान्त करते हैं इसके छाँव में अतृप्ति को तृप्ति, आरम्भ का अन्त एवं अरति की रति है। इसमें लेखक कहता है कि पार्थिव यौवन की तृप्ति, रति और इति का प्रतिबिम्ब है—यौवन एक बार आकर पुनः नहीं आता इसका उन्माद कुछ न कुछ करके ही रहता है यौवन जहाँ एक तरफ विषय भोग प्रिय होता है तो दूसरी तरफ परम

प्रेमतत्व की जानकारी प्राप्त करता है। साहित्य के मन्दिर में यौवन ने कालिदास, भारवि, भूवभूति आदि रत्नों को दिया है और इसी का मकरन्द तुलसी के सुत्य में उभर कर आया है। यौवन के अभाव में पौरूष उभर कर सामने नहीं आता। साधना की प्रतिमूर्ति छितवन के साहित्य मर्मज्ञों ने नजदीक से नहीं देख पाया। जिस प्रकार कमल, चम्पा, गुलाब, कुमुदनी आदि को देखे हैं। यही कारण है कि छितवन अपना गन्ध दूर से ही छोड़ता है नजदीक आने पर इसमें किसी प्रकार का आकर्षण नहीं है।

पार्थिव यौवन का आगमन जितना मनोहारी होता है उतना वास्तविक नहीं परन्तु जीवन की तैयारी के लिए यौवन का विप भी होना आवश्यक ही है इसी कारण अद्वैत की स्थापना करने वाले भव-भूति ने यौवन काव्य की अधिदेवता राधा का वर्णन किया है इसका कारण समझना अटपटे सन्तों के वश की बात नहीं है कुछ लोग शैली किट्स आदि का अनुकरण अपने भाषा में करते हैं किन्तु इनके गहराई तक नहीं पहुँच सके। छितवन की छाँह में मधुमास की नयी सन्ध्या का साक्षात्कार होता है। लेखक कहता है कि एक बार अपने मित्र के साथ एक उपवन में गये जिसके आने और जाने का एक ही रास्ता था द्वार पर छितवन का पेड़ था। लेखक की छितवन से पहली पहिचान इसी वाटिका में होती है इस वाटिका से थोड़ी दूर पर श्मशान घाट था। लेखक और उसका मित्र इस वाटिका से होकर श्मशान की तरफ भी आते हैं। यहाँ इन्हें श्मशान यौवन के दोनों नश्वर और अनश्वर एक साथ उभर आते और ये दोनों रूप लेखक के हृदय में बस आये छितवन की दूसरी पहचान उस समय हुई जब छात्र जीवन का अन्तिम समय था। लेखक जब अपनी पत्नी के साथ। (रात के प्रथम प्रहर में छितवन की मादकता कुछ स्थिर हो चली थी।) रात्रि के प्रथम प्रहर से छितवन की छाँव में बैठे लेखक को पहली बार स्थिर प्रेम पाणि पीड़न और हृदय स्पर्श की अनुभूति हुई। तीसरी बार लेखक का

साक्षात्कार छितवन से जीवन के तीसरे मोड़ पर हुआ जब वह कम्प
बाग में भ्रमण कर रहा था इस बार इसके पूर्व के छितवन के छाँव
आनन्द नहीं था। लेखक ने अनुभव किया कि छितवन पार्थिव जीवन
संचित स्नेह का प्रतीक है। छितवन के बारे में यह कहा जाता है कि
इसकी छाँव में आवेगा उसका पुण्य नष्ट हो जायेगा अतः लेखक कह
है कि इस दुनिया की रीति निराली है दीपक बुझाने को कहते हैं दीप
बढ़ा दो मृत्यु तिथि को पुण्ड तिथि कहा जाता है।

६. चीरइया एक बोले ले

पाठ का सारांश—इस निबन्ध में लेखक ने भोजपुरी के मंगल गं
पर प्रकाश डाला है इसमें लेखक कहता है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश
इससे नजदीक बिहार के कुछ जिलों में विवाह के पाँच दिन पहले
प्रातःकाल में भोजपुरी गीत गाया जाता है। इस गीत का बहुत महत्व
इसमें ठाकुर चिरया की ठाकुर जी की मधुर बोली सादृश की बो
से प्रातःकाल (ब्रह्ममुहूर्त में) इसका गान मंत्र के रूप में किया जा
है इस लोक गीत में जिस चिड़िया के बारे कहा जाता है वह चिड़ि
ब्रह्ममुहूर्त में जब शुक्र तारा उदय होता है उसी समय मधुर स्वर बोल
है जिसे ग्रामीण लोग ठाकुर चिड़िया के नाम से पुकारते हैं क्यों
इस चिड़िया के आवाज में ठाकुर जी उच्चारण करने के सदृश आवा
आती है। इन आवाज को वह सुन पायेगा जो गाँव में ब्रह्ममुहूर्त में उठ
है। प्रातःकाल पंछी अपने आवाज से मनुष्य के सम्बन्ध को उद्घोषि
करते हैं। चिड़ियों का यह सन्देश जागरण रूपी तप करने की प्रेर
देता है जो सुनकर भी समझ नहीं पाया वह बड़ा ही अभागा हो
लेखक कहता है कि ठाकुर चिड़िया की आवाज रूपी प्रेरणा को
मैं हृदयगम कर चुका हूँ यही कारण है कि लोक साहित्य को फै
मानने वालों से अपने आप को दूर रख पाया हूँ जब मैं बाहर झाँ
कर देखता हूँ तो अनेक कंठ से सुरीली आवाज को सुनाता हूँ।

लेखक कहता है कि सच्चा साहित्यकार वह है जो अपने जीव
को एक तपस्वी का रूप दिया हो, श्रम जल से अपने आपको सी

हो क्योंकि ताप से द्रवण शीलता आती है और इसकी उत्पति तेज से होती है।

आज साहित्य में विशिष्ट रूप से तप की अर्चना है, इससे पूर्ण मंगल को अवधारणा एवं सिद्धि नहीं मिलती इसका कारण यह है कि हम चिरिया के उद्बोधन के अर्थ को नहीं समझ पाते हैं इसके लिए जेक मानस से प्रवाहित होने वाली अपौरूषेय रागिनी को समझना होगा।

७. धीरे-धीरे मुरली बजाऊँ

पाठ का सारांश—प्रस्तुत पाठ हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध कवि विद्यापति की प्रसिद्ध रचना धीरे-धीरे मुरली बजाऊ से लिया गया है। लेखक कहता है कि विभिन्न उलझनों के करण भोजन, वस्त्र, निवास की चिन्ता एवं वर्तमानकालिक उपदेशों की चिन्ता से उसे नींद नहीं आती है। लघुनिद्रित होते ही स्वप्न में नन्दक-नन्दक कदम्बक तरुतल धीरे-धीरे मुरली बजाऊ की आवाज सुनाई दी। चारो ओर घनघोर घंटा छाई हुई है। हीरा सागर की देवी सहमी हुई बोली—बूढ़ी माँ तुमने देखा नहीं किसी ने आकाश को ही गर्त में उतार दिया है। बाढ़ की विभिषिका ने सब कुछ नष्ट कर दिया है बाढ़ के बाद खेत पथरा गये हैं। चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है। त्यौहारों के रंग फीके पड़ गये हैं। अब अमावस्या की रात और काली होती जा रही है। दीवाली के समय केवल जुआ खेलने की प्रवृति ही बढ़ रही है। लेखक का सपना टूट जाता है और वह सोचने लगता है अब बाँसुरी की धुन समाप्त हो गयी।

लेखक कहता है कि सामरि को अपनी आँखों कलकत्ते में देख आया जब लेखक को एक हिस्सा असली सामग्री में तीन हिस्सा नकली सामग्री का मेल दिखाई दिया तब वह कहा है तब मैं उस श्रीकृष्ण को देवकी समझा भला सन्तोष कैसे। बासुरी गमन की चीज न होकर मन की चीज है। बाँसुरी की तान सम्मोहन नहीं है वह तो परब्रह्म की पराशक्ति है। आज कल अन्न पैदा करने की उपेक्षा रोटी खाने पर ज्यादा

लोग पड़े रहते हैं। लेखक कहता है कि हम श्री कृष्ण के सन्देश को भूल चुके हैं, बाँसुरी की तान अनबुझ पहली की तरह है। आज आवश्यकता है श्री कृष्ण द्वारा बताये गये कर्मयोग आचरण करने की द्वैताद्वैत सन्धिविग्रह प्रेम विरह एवं काव्यदर्शन आदि के युक्त होकर ही किसान खेती में सफल हो सकता है किन्तु आज गौ और पृथ्वी के फल-फूल अन्न-दूध आदि मुक्त कौन कहे सुलभ भी नहीं है। फिर भी हमारा मन आज भी आशान्वित है कि इसके दुस्साहसिक व्यापारिक एक न एक दिन गोपियों की तरह मटकी लेकर श्रीकृष्ण के चरणों आ गिरेंगे। इस सन्दर्भ में पुनः लेखक महाकवि विद्यापति के गीत को पूरा उद्धत करता है। प्राचीन काल में इसी भारतवर्ष में कितनी कर्त्तव्य परायणता तथा ईमानदारी थी। देश में दूध, दही की नदियाँ बहती थी।

८. बनजारा मन

पाठ का सारांश—अपने मित्र को सम्बोधित करते हुए लेखक कहता है कि मित्र बहुत दिनों से सुना कि तुम ग्राम्या का सम्पादन कर रहे हो किन्तु उसका अंक इधर देखने को नहीं मिल रहा है, साथ यह भी लिखा कि कुछ सम्पादकीय भी लिखू, किन्तु पत्र ही भेज रहा हूँ क्योंकि निर्झरिणी सी बहाव वाले शब्द लेखनी से नहीं निकलते अतः पत्र से ही सन्तोष करना।

लेखक असंतुष्टि के भाव में लिखता है कि मेरी लेखनी लिखने की इच्छा नहीं होती तुम कहोगे कि विद्या के क्षेत्र में होकर भी विद्या की आराधना करते हुए भी आप बिछुड़े हुए हैं। पर प्रतिष्ठित तभी समझा जाऊँगा जब रिसर्च की डिग्री पास में हो, परन्तु पढ़ाना और पढ़ना दोनों कार्य साथ-साथ नहीं चल सकता है। अध्यापन सर्जन दो विरोधी स्थितियाँ हैं, अध्यापन करना चाहो तो अपने भीतर की रचनात्मकता से छूटकारा पा लो नहीं तो जीवन भर विश्वविद्यालय में ही रह जाओगे। यहाँ नूतनता से प्रेम नहीं हो सकता यहाँ प्रति ग्रहीता का विनय नहीं चलता यहाँ जीवन नदियों से नहीं नहरों से आता है, कूपों से आता है।

यहाँ प्राण वन्दी है। प्रतिष्ठा के लिए प्रतिभा गिरवी रखने के लिए लाचार हूँ। बन्धक रखने के लिए ईमान-पुण्य तप तो नहीं है मेरे पास। मुझे अध्यापक की सच्ची मनोवृत्ति की आवश्यकता है। मैं महीनों तक कुछ नहीं लिखता। लिखना चाह कर भी लिख नहीं पाता ऐसी-ऐसी समस्यायें विकराल रूप धारण कर सम्मुख आ जाती हैं। मन बड़ी परेशानी महसूस करता हैं; मेरा घुमक्कड़पन नहीं छूटा। जैसे वर्षा ऋतु की लगी मेंहदी जल्दी नहीं छूटती। लिखना छूट गया पर लिखने की आदत नहीं छूटी। नयी कविता पढ़ने की आजादी नहीं है और यूनिवर्सिटी में पहले प्रति मंगलवार को गीता पाठ और उसपर प्रवचन होता था, और अब प्रति शनिवार मानस पर प्रवचन होगा। हिन्दी विभाग ब्रजभाषा समस्या पूर्ति का अभ्यास करवाने वाला है यहाँ प्राचीन पुस्तकों की खोज जारी है। काव्य में मीमांसा के साथ ज्योतिष, ज्योतिष के साथ न्याय व न्याय में व्याकरण आ जाये क्योंकि ज्ञान अखण्ड है, वह भी संस्कृत के इसी अखण्डता की सिद्धि के लिए शोध विषय चुने जाते हैं। यहाँ ज्ञान का साक्षात् कल्पवृक्ष ही आपके सम्मुख है, आपको कहीं और जाने की जरुरत ही नहीं है, सो मैं पुराणकोष समिति का हजारी प्रसाद जी की शब्दावली में निःशेष-भावेन सदस्य हूँ। मेरा कोमल-भावुक मन समन्वय बुद्धि पाना चाहता है व संगुम्फनतंत्र पाना चाहता है, जो अलग-अलग चीजों को एकसाथ बाँध सकने में समर्थ हो सके।

'मित्र तुम जंगलों में रहे हो अतः मेरे गँवारपने का कुछ अन्दाज लगा सकते होगे, जब मैं अपना अनपढ़पन दूर नहीं कर पाता तो दूसरों को कहाँ तक संवार पाऊँगा। इस तरह मैं एक तरह से बियाबान में ही हूँ। मुझे लगता है, कि समस्त देश की विद्या वसुन्धरा से तादात्म्य नहीं बैठा पा रही है, क्योंकि यदि ऐसा न होता तो आये दिन विश्वविद्यालय बन्द क्यों होते। छात्रों-अध्यापकों के बीच सहज आत्मीयता क्यों नहीं होती। दोनों के बीच शंका-अशंका की भावना

लोग पड़े रहते हैं। लेखक कहता है कि हम श्री कृष्ण के सन्देश को भूल चुके हैं बाँसुरी की तान अनबुझ पहली की तरह है। आज आवश्यकता है श्री कृष्ण द्वारा बताये गये कर्मयोग आचरण करने की द्वैताद्वैत गन्धिविग्रह प्रेम विरह एवं काव्यदर्शन आदि के युक्त होकर ही किसान खेती में सफल हो सकता है किन्तु आज गौ और पृथ्वी के फल-फूल, अन्न-दूध आदि मुक्त कौन कहे सुलभ भी नहीं है। फिर भी हमारा मन आज भी आशान्वित है कि इसके दुस्साहसिक व्यापारिक एक न एक दिन गोपियों की तरह मटकी लेकर श्रीकृष्ण के चरणों आ गिरेंगे। इस सन्दर्भ में पुन: लेखक महाकवि विद्यापति के गीत को पूरा उद्धृत करता है। प्राचीन काल में इसी भारतवर्ष में कितनी कर्त्तव्य परायणता तथा ईमानदारी थी। देश में दूध, दही की नदियाँ बहती थी।

८. बनजारा मन

पाठ का सारांश–अपने मित्र को सम्बोधित करते हुए लेखक कहता है कि मित्र बहुत दिनों से सुना कि तुम ग्राम्या का सम्पादन कर रहे हो किन्तु उसका अंक इधर देखने को नहीं मिल रहा है, साथ यह भी लिखा कि कुछ सम्पादकीय भी लिखूं, किन्तु पत्र ही भेज रहा हूँ क्योंकि निर्झरिणी सी बहाव वाले शब्द लेखनी से नहीं निकलते अत: पत्र से ही सन्तोष करना।

लेखक असंतुष्टि के भाव में लिखता है कि मेरी लेखनी लिखने की इच्छा नहीं होती तुम कहोगे कि विद्या के क्षेत्र में होकर भी विद्या की आराधना करते हुए भी आप बिछुड़े हुए हैं। पर प्रतिष्ठित तभी समझा जाऊँगा जब रिसर्च की डिग्री पास में हो, परन्तु पढ़ाना और पढ़ना दोनों कार्य साथ-साथ नहीं चल सकता है। अध्यापन सर्जन दो विरोधी स्थितियाँ हैं, अध्यापन करना चाहो तो अपने भीतर की रचनात्मकता से छुटकारा पा लो नहीं तो जीवन भर विश्वविद्यालय में ही रह जाओगे। यहाँ नूतनता से प्रेम नहीं हो सकता यहाँ प्रति ग्रहीता का विनय नहीं चलता यहाँ जीवन नदियों से नहीं नहरों से आता है, कूपों से आता है।

यहाँ प्राण बन्दी है। प्रतिष्ठा के लिए प्रतिभा गिरवी रखने के लिए लाचार हूँ। बन्धक रखने के लिए ईमान-पुण्य तप तो नहीं है मेरे पास। मुझे अध्यापक की सच्ची मनोवृत्ति की आवश्यकता है। मैं महीनों तक कुछ नहीं लिखता। लिखना चाह कर भी लिख नहीं पाता ऐसी-ऐसी समस्यायें विकराल रूप धारण कर सम्मुख आ जाती हैं। मन बड़ी परेशानी महसूस करता है; मेरा घुमक्कड़पन नहीं छूटा। जैसे वर्षा ऋतु की लगी मेंहदी जल्दी नहीं छूटती। लिखना छूट गया पर लिखने की आदत नहीं छूटी। नयी कविता पढ़ने की आजादी नहीं है और यूनिवर्सिटी में पहले प्रति मंगलवार को गीता पाठ और उसपर प्रवचन होता था, और अब प्रति शनिवार मानस पर प्रवचन होगा। हिन्दी विभाग ब्रजभाषा समस्या पूर्ति का अभ्यास करवाने वाला है यहाँ प्राचीन पुस्तकों की खोज जारी है। काव्य में मीमांसा के साथ ज्योतिष, ज्योतिष के साथ न्याय व न्याय में व्याकरण आ जाये क्योंकि ज्ञान अखण्ड है, वह भी संस्कृत के इसी अखण्डता की सिद्धि के लिए शोध विषय चुने जाते हैं। यहाँ ज्ञान का साक्षात् कल्पवृक्ष ही आपके सम्मुख है, आपको कहीं और जाने की जरुरत ही नहीं है, सो मैं पुराणकोष समिति का हजारी प्रसाद जी की शब्दावली में निःशेष-भावेन सदस्य हूँ। मेरा कोमल-भावुक मन समन्वय बुद्धि पाना चाहता है व संगुम्फनतंत्र पाना चाहता है, जो अलग-अलग चीजों को एकसाथ बाँध सकने में समर्थ हो सके।

'मित्र तुम जंगलों में रहे हो अतः मेरे गँवारपने का कुछ अन्दाज लगा सकते होगे, जब मैं अपना अनपढ़पन दूर नहीं कर पाता तो दूसरों को कहाँ तक संवार पाऊँगा। इस तरह मैं एक तरह के बियावान में ही हूँ। मुझे लगता है, कि समस्त देश की विद्या वसन्त से तादात्म्य नहीं बैठा पा रही है, क्योंकि यदि ऐसा न होता तो बारे दिन विश्वविद्यालय बन्द क्यों होते। छात्रों-अध्यापकों के बीच सहज आत्मीयता क्यों नहीं होती। दोनों के बीच शंका-अशंका की भावना

नहीं रहतो। परन्तु इस नयी पीढ़ी को दोषी कैसे मान लूं। हि
को बड़ा बनाने की यह शक्ति हममें से कितने अध्यापकों के पास
जब नवपीढ़ी के आवाहन की निर्मल भावना ही न हो तो वि
क्षेत्र में बड़ा बना सकेंगे हम शिष्यों को इसकी बात ही व्यर्थ है।

मेरी आनंदवृत्ति खतम हो गयी है, अतः तुम्हारे नगर से प्रक
होने वाली पत्रिका ग्राम्या के लिए कुछ नयी अभिव्यक्तियाँ नहीं भे
रहा हूँ. माफ करना। जैसे एक तमाशबीन की टिप्पणियाँ होती हैं
प्रकार मेरी समीक्षा दृष्टि भी हो गयी है। वैसे भोजपुरी आदमी
में उतरने को व्याकुल हो जाता है। तुम्हारी पत्रिका बड़े-बड़े लो
हाथ जाती होगी। मेरा यह विज्ञापन छाप देना शायद कोई मेरी प्र
की मनचाही कीमत दे दे और जब लेना चाहूँ तो सूद लेकर वापस
दे। चिट्ठी लम्बी है अमरानन्दी ढंग पर लम्बी व क्रमविहीन हो
है। अमरानन्द एक दिन रामगढ़ तालाब में कमलों की खोज में
बीर रुक़ वाली के पाटे से फिसल कर डूब गये यदि वे रहते तो बा
ग्राम्या के लिए जरूर केशरिया पत्र भेजते पर। मैं हूँ—
त्रिया निवास।

९. मैंने सिल पहुँचायी

पाठ का सारांश—घटना बहुत छोटी है, मित्र ने इलाहाबा
अपनी बुआ का शंकरगढ़ी सिल एक ट्रक व उनके छोटे-मोटे सा
लाने की जिम्मेदारी सौंपी, मैं अकसर ही इलाहाबाद जाता रहता
सिल गृहस्थी की पहली जरूरतों में एक है, परन्तु काफी दिनों
इलाहाबाद से सिल लाना न हो सका फिर बाद में लेकर पहुँचा
सिल खरीदी जा चुकी थी। लौटने पर सिल पहुँचाने की व्यग्रता
कसक बहुत थी। कई सालों से कई किस्म के पार्सल देने का
यद्यपि कर ही रहा हूँ, मसलन किसी को टेप, किसी को कलम,
को कपड़े, किसी को डिशरैक आदि। एकाध बार तो मेरे सा

के साथ दूसरों का सामान भी गायब हुआ, पहुँचा भी नहीं।
उस वाहक व्यापार की चरमपरिणति होने को थी, वह भी इस।
पहुँचाने में, और यह भी देर से हुआ। सोचने पर लगता है, जा-
कितनी संकरपड़ी सिलें पहुँचानी अभी बाकी हैं। भर्तृहरिवाली सिल
तो मैंने गले में बाँध ही रखी है। देखता सरकारी छिनहरों की छेनी
से छिनकर योजना की सिल तैयार होती थी, और मेरा काम था,
उसे अधबूढ़ी-जनता के पास पहुँचाने का। यह सिल आर्थिक, सामाजिक
और सांस्कृतिक सुखसमृद्धि की आधार शिला है. इसका पूजन करके
ही नववधू गृह प्रवेश पायेगी। इसकी छिनावट पाँच वर्ष तक रहती
है, पैसा बनाने में अवश्य कुछ लगता है। बिना लोढ़े के स्पर्श के कोई
गृहणी नामक सत्ता या शक्ति नहीं पाता। लोढ़ा का फूटना घर के
मालिक के लिए अशुभ है अतः लोढ़ा बड़े यत्न से रखा जाता है। हर
आदमी इस पर कुछ पीस नहीं सकता बकायदा इसकी ट्रेनिंग लेनी
पड़ती है। पर मैं इन सिल-लोढ़ों का दर्शन अनाड़ी होने के कारण
समझ नहीं सका। दर्शन के बोझ से ही इन सिल-लोढ़ों का बोझ ढोना
दूभर हो गया आधे रास्ते छोड़कर मेरी सर्वनाशिनी चित्त-वृत्ति भाग
आई। मृच्छकटिकम् नाटक में वसन्तसेना ने जो राजा के साले शकार
से छुटकारा पाया तो चमेली की गन्ध और नुपुरों की कोमल अदा
करके ही, वो ही मेरे वसन्त की प्राणवत्ता बची रही अपने को धन्य
मानता था। मैं दाखिल हुआ एक नये द्वारहीन द्वार के भीतर। थोड़े
ही दिन में सिल माथे आ पड़ी वस्तुतः निःसंतान बुढ़िया रूपी परीक्षा
सिल हर साल मांगती है। कभी-कभी एकाध छिनाई के निशान भी रख
देती है। मैं समझता था, ज्ञान प्रकाश की भाँति, व्यापक आकाश की
भाँति अनन्त है, तब तो अब कोई भी गति नहीं, मैंने सोचा विश्व-
विद्यालयों में मुख्य कार्य अध्ययन नहीं अनुसंधान अन्वेषण है ज्ञान
का। सिल पहले से अधिक दुर्वह सिद्ध हुई, रिसर्च की बुढ़िया मालकिन
इतनी कठकरेजी है, कि रोज धुलवाती है, घर खर्च के हल्दी मसाले
तक पिसवाती है, रोज रखवाती है व बेगार करवाती है, इतने पर भी

कह सकती है, कि यह न जाने किसकी सिल है। रिसर्च की
पहुँचाना तभी शक्य है जब आप अपनी कुल विरासत फूंक कर
के दत्तक पुत्र बनें। रिसर्च की अधिष्ठात्री महाश्मशान की साधि
कंकालिनी है, इस कंकालिनी के ६४ योगिनी मन्दिर में आकर
सिल बट्टे के मोलभाव का कुछ पता लगता हैं। कौन कहता
चैतन्यरूप शिव की साधना है। यहाँ सिल पहुँचाने का अर्थ है
दूसरे से सिल पहुँचवाने का रोजगार संभालना। अपने में सि
अमरत्व के अंश को शव बनाना सिल साधना का प्रथम चरण है।
यह सिल ढो रहा हूँ।

लोग मुझसे पूछते हैं, कि तुममें उत्साह नहीं दिखता संकट का
में तुममें भावात्मक एकता नहीं, उन्हें कैसे बताऊँ कि मेरे हमवतं
मैं युद्ध को रंगीनी के रूप में नहीं देख सकता, देश की रक्षा को पिकनि
की तैयारी नहीं मान सकता, झाग में उत्साह नहीं पा सकता झू
शेखी को वीरता का पर्याय नहीं कह सकता छिछली भावुकता
संकल्प की संज्ञा नहीं दे सकता हूँ। मैं पराजय की लज्जा व विज
की विनम्रता को जानता हूँ। पर सामंत युगीन चारण की तरह झू
प्रोत्साहन, झूठी शपथें, झूठी आशायें दिलाना मैंने नहीं सीखा।
सिल के साथ झूठ अपमान और लज्जा भी ढोऊँगा अगर ईश्वर ने मे
लिए ढोने का ही स्वधर्म निश्चित किया है, तो इसे ढोऊँगा और यथ
स्थान पहुचाऊँगा भी। समय देवता के धन्यवाद की चिन्ता नहीं है
लोढ़े की ताल पर नाच नहीं पाऊँगा लोढ़ा कहता है सिल की चिन्ता
छोड़ सिर्फ मुझे ढोओ। मुझे ढोना सिल और लोढ़ा दोनों को ढोना है
किसी एक को छोड़ नहीं सकता, सिल की तरह मैं जड़ नहीं बन सकता
लोढ़ों की तरह निर्मम नहीं हो सकता। कौन जाने ढोने का यह ता
ही लोढे को चटका दे। तब उस आग को ढोकर मुझे ढोने का परम
फल मिल जाये, पर जब तक आग कहीं नहीं चिटकती साहित्यकार
के रूप में इसी बोझ को ढोने के लिए विवश हूँ, इसी बोझ का स्मरण
मेरे लिए सबसे बड़ा प्रतिस्मरण है, कि मैं यह सिल ढो रहा हूँ।

१०. पूर्णमदः पूर्णमिदम्

पाठ का सारांश—डॉ० विद्यानिवास मिश्र जी कहते हैं कि प्रयाग अपने मित्र साहित्यिक दम्पत्ति के यहाँ भगवान बुद्ध, सूली पर चढ़ाये ने की अवस्था में ईसामसीह के चित्र संकलित खाली कलश पर ाये जाने को देखकर प्रश्न किये जाने पर मित्र पत्नी द्वारा ली कलश या जल रहित कलश में कोई अन्तर नहीं बताये हैं। क जब अपने गाँव में देखने मिलता है कि एक बूढ़ी औरत रास्ते पर ा एक खाली घड़े को औंधा रही थी तब लेखक के मन से यही या कि दोनों जगह घड़ा खाली है। आज जिस घड़े को औंधाया ा है वह कभी मंगल घट रहा होगा प्राचीन काल से ही घट शब्द प्रयोग काव्य, वेदान्त और न्याय में होता है कभी इस घर में कार समाया तो कभी इसमें सागर भर आया तो कभी इसमें ृत छलका और आज इस घट के गले में मृत्यु ने बाँध दिया गया । शहर में घट को रेखाओं से मतलब है उसके पूर्णता से नहीं। ात में खाली न दिखने से मतलब है पर दोनों प्रकार के घट खाली । देहाती व्यक्ति शहरी स्नेह रहित जीवन को निरर्थक समझता है। री व्यक्ति देहाती व्यक्ति के जीवन को असभ्य मानता है। देहाती क्ति घड़े का भी सदुपयोग करता है परन्तु शहरी व्यक्ति इनसे वंचित ता है प्रत्येक प्राणी को पूर्णता की तरफ अग्रसर होना आवश्यक । जिस प्रकार एक सागर के जीवन में उसके अनेक रूप दिखाई ते हैं।

आज का गाँव अपूर्ण होता जा रहा है अपने विकास के लिए हर की अपेक्षा रखता है गाँव का खोखलापन जब तक दूर नहीं होता तब तक शारीरिक श्रम का कोई महत्व नहीं होगा। व्यक्ति को वास्त- क पूर्णता समष्टि में है व्यक्ति अपने समष्टि से मिलकर पूर्ण होता है भाव होने पर व्यक्ति भी पूर्ण ही होता है। समष्टि की परिकल्पना ही की गयी है वही समस्त वस्तुयें अभिभूत है अतः स्वरूप ज्ञान

होने से ? वहम के अतिरिक्त कुछ नहीं है इसका पूर्ण मान हो
लगता है। लेखक अन्त में विचार व्यक्त करता है कि उसके
साहित्यिक कलाकलश मंगल से पूरित होगा देहाती दादी की खा
कलश को पलटने की आवश्यकता न होगी जीवन की समस्त तन्त्रिका
जागृत होगी हमारा जीवन सांस्कृतिक एवं राष्ट्रोन्नति परक हो
चारों तरफ पूर्णता परिलक्षित होगी।

११. तुम चन्दन हम पानी

पाठ का सारांश—डॉ० विद्यानिवास मिश्र जी कहते हैं कि बाल्य
वस्था में बड़े दादाजी के पास प्रसाद खाने की लालच में घंटों बै
रहता और उनके द्वारा चन्दन घिसना और पूजन करना देखता रहता
चन्दन और पानी के एक रूपता को देखकर किसी सन्त कवि ने क
है—'प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी' जिसके प्रति अपने आप को अ
किया जा रहा है उसके साथ जीवन में घिसने से क्या फायदा है
विचार करने से पता चलता है कि हृदय में पड़े हुए चिदंश को
तक जीवन के साथ नहीं जोड़ेगे तब तक गुण आमोद और चैत
स्फुटित नहीं होगा। चन्दन में एक विशेष गुण है कि अपने आस-पा
में उत्पन्न पौधों में भी अपना गन्ध भर देता है भुजंग के सन्ताप
दूर करता है। चन्दन की निन्दा भी कभी-कभी हुई हैं जब कृष्ण
विरह दुःखी राधा को चन्दन विष के समान ताप देता है शायद
लोग मानव को गौरव प्रदान करने के लिए प्रभुजी तुम चन्दन
पानी कि तुम्हारे अन्दर जो विश्वभावना बाहर करने का यह उद्दे
भी सराहनीय है—काव्य में एक पन्थ के राही है तुलसी दूसरे
कालिदास और तीसरे के सूर व्यास आदि कुछ लोग ऐसे हैं जो द
के लिए चन्दन घिसते हैं चाहे वे साहित्य के क्षेत्र में हो या राजनी
के केवल लाल चन्दन घिसने वाले पुजारी की निष्काम बलि दी ज
है तक पन्थगलियों की उपासना में इसका अधिक प्रयोग होता है
में एक पन्थ के हैं। तुलसी दास में मलयज की तरह ताप मिटा

दाता है कालिदास में रक्त चन्दन जैसा उन्मादी राग विवंचन की नता तथा सूरदास आदि में केशर के रंग का चन्दन की तरह दक्षिण र वाम पन्थ के बीच सहज साधना प्राप्त करने की क्षमता है।

चन्दन चाहे किसी भी रंग का हो हमारी विश्वभावना का ही क खण्ड है। किसी भी शिला का होरसा हो जिस बल का हम प्रयोग ें वह शुद्ध हो। हमारा विस्तार बोध तभी परिलक्षित होता है जब प्रभु को चन्दन और अपने को पानी मानकर चलते हैं। यही हमारे दन चर्चा का पारमार्थिक परिभाषा है। चन्दन का घिसना प्रेम के ाल्य हो। अपने देवता को इस प्रकार जगायें जिसे प्रत्येक काष्ठ चन्दन महक उठे और चन्दन की महक प्रत्येक दिशा में फैले तभी दन चर्चित संस्कृत के मांगलिक रूप का दर्शन होगा। प्रस्तुत निबन्ध चन्दन को प्रतीक मानकर लेखक ने अनेक मनोवैज्ञानिक, जीवनो-गी तथ्य उपस्थित किया है।

१२—आँगन का पंछी

पाठ का सारांश—इस सारांश में लेखक ने गौरैया के प्रति अपने गार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि गाँव में ऐसा कहा जाता है कि स घर में गौरैया अपना घोसला नहीं बनाती वह घर निवंश हो ता है. पुष्प बहुत से है लेकिन वे बहुत कम आगनों में मिलते हैं कन तुलसी की वेदी अविनयन से अकिंचत आंगन में भी उपलब्ध ती है खैर तुलसी की पूजा के लिए तो शास्त्रों में प्रमाण है लेकिन रैया के लिए तो मात्र यह जन विश्वास है कि पक्षियों में ब्राह्मण है सी के पास दीपक जलाया जाता है—विधि-विधान से पूजा की ती है एक दिन लेखक अखबार में पढ़ता है कि चीन में गौरैया को ास करने के लिए अभियान चलाया जा रहा है. क्योंकि गौरैया ल को बहुत अधिक नुकसान पहुँचाती है चीन के सैनिक बन्दूक र खेतों में आ गये हैं वे बन्दूक की आवाज से गौरैया को तब तक ाते रहेगे जब तक मर न जाये। लेखक कहता है कि पंचशील को

माननें वाले देश के लिए इस प्रकार थका-थका कर सता-सता मार
उचित नहीं है गौरैया जितना नुकसान नहीं पहुँचाती उससे अधि
वह कीड़े खाकर फसल को फायदा पहुँचाती है भारत में भी ऐ
विचार है कि जिनका कहना है कि फसल का बहुत सा भाग
बन्दर, पंक्षी आदि नष्ट कर देता है उनका विचार है कि इस पर नि
ग्रण होना चाहिए। किन्तु चीन वासी इसको समूल नष्ट करने
तुले हैं गौरैया के प्रति हमारा जो स्नेह है वह निजी स्वार्थ से प्रेरित
इस गौरैये की उच्छलता अपनी सन्तान में देखना चाहता है इसी प्रक
तुलसी को दीप अपने स्वार्थ के लिए जलाते हैं हमारा सांस्कृतिक जीव
भी परिवारिक प्रेम आप्लावित है। परिवारिक साहचर्य भी हम
साहित्य को सबसे बड़ी धरोहर है गौरैया के इस अभियान से लेख
को यह लगा जैसे उसके निजी जीवन पर संकट आ गया हो लेखक अ
निजी गौरैया को अपने आँगन में एक साथ खेलते देखा तो उसे लगता
कि विश्वबन्धुता बाधने वाले कम से कम ममता के बाध को मत तो
यदि आर्थिक और नैतिक उदय चाहते हो तो सहज आनन्द के क्ष
मत समाप्त करो क्योंकि धरती सबकी है वह अपने असंख्य शिशु
के साथ गोंद में भरने वाली है वह किसी के पैरों के नीचे रहने वा
नहीं है पृथ्वी का मालिक बनाना चाहते हो तो इसके सभी भागीदा
को एक साथ लेकर चलना पड़ता है गौरैया पक्षी, तुलसी वृक्ष त
मिनी ये तीनों सीता को स्मृति पटल में अंकित करती हैं। इसलि
आँगन का पंक्षी इस निबन्ध से भारतीय संस्कृति का अनुशीलन क
हुए परोपकार की भावना रखते हुए निखिलविश्व को परिवार जै
मानकर चलने की शिक्षा मिलती है।

प्रमुख स्थलों का भाव पल्लवन

१. शिरीष का आग्रह

१. तप के .... आहुति गन्धी धूम है :

भाव पल्लवन—प्रस्तुत निबन्ध में लेखक ने तप की मह
स्थापित करते हुए लिखा है, कि तप से जो स्वभाव की कोमलता

पा सका, तप से जिस ऐश्वर्य के निस्सारता का ज्ञान न हुआ वह ऐश्वर्य बेकार है, तप से जो ज्ञान परिपूर्ण न हुआ निखरे रूप में सामने नहीं आया वह ज्ञान बेकार है, भारतीय दर्शन में तप से शरीर को कष्ट नहीं वरन् तप सम्पूर्ण इन्द्रियों को अपने वश में करने, अपने इच्छानुसार ढालने की साधना है। तप वर्षों रूपी यज्ञ और काल को विजित करने का व्रत है, तप जीवन की सहज-निरंतर चलने वाली गति की खोज है, भारतीय मनस्वियों के जीवन को तपोभूमि में सुगन्धों के आहुति का धुआँ है।

२. टिकोरा

२. बौर तो बयार ···· ···· ···· ···· ···· ···· भरी सजल दृष्टि।

भाव पल्लवन—प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने टिकोरे अर्थात् आम की मन्जरी अर्थात् बौर की अनुशंसा करते हुए लिखा है, कि आम का बौर या मन्जरी तो बयार या हवा से गिरते हैं देखने में लुभावने लगते हैं, और पके हुए आम धरती पर गिरते हैं। परन्तु हवा को पकने का का आश्वासन देने वाली और धरती पर गिरने की उम्मीद जगाने वाली अमिया इन दोनों के लिए श्रद्धा योग्य है, लेखक कहते हैं, कि कोयल की कूक इन बौरों पर नहीं सुनाई देती न ही मीठा खाने वाले तोते इसे अपने मुँह से लगाते हैं, बल्कि या तो शैतान बालक इस पर ढेला मारते हैं, इसे ढेला मारकर गिराते हैं, या फिर ग्रामीण महिलाओं के गीतों में इनकी मधुर स्मृति सुनाई देती है। पूरब के साहित्य में इस पर लिखे गानों की मधुरता सुनाई देती है।

३. कदम की फूली डाल

३. लोक मंगल का स्वर ···· ···· ···· ···· ···· – तब बदलते हैं।

भाव पल्लवन—प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का लोक साहित्य के बारे में कहना है कि मनुष्य की चेतना भावशून्य हो जाने पर भी न जाने कितने वर्षों से आधुनिक काव्य रूपी विषेले नागों के चलते चले

जाने पर भी और अपने अनुकरण करने की शक्ति के सहज ही प्र... के कारण मधुर स्वरों के अलग-अलग पड़ जाने के बावजूद लोक गी... के आंचलिक स्वर अभी भी वही हैं। उनमें वही आह्लाद वही रस... यता व वही हृदय ग्राहकता है, जबकि शिष्टता की सीमा में बद्ध ... जाने वाले साहित्य में कितना अन्तर आया है।

४. हर सिंगार

४. हर सिंगार चुपचाप .... अपूर्णता नहीं होता।

प्रस्तुत गद्यांश में लेखक हर सिंगार के फूलों की निस्पृहता का व... करते हुए कहता है, कि हर सिंगार के फूल रात्रि के चौथे पहर से ... गिरना शुरू करते हैं, तो सुबह तक जब तक एक भी फूल शेष नहीं रह... है झरते रहते हैं, हर सिंगार द्वारा बिछाई फूलों की चादर से बहुत... मधुमय सुगन्ध उठती रहती है। हाँ बदली से वर्षा व बिजली च... में भी हर सिंगार से फूल नियमित रूप से गिरते ही रहते हैं। ... इसकी इच्छा नहीं करते कि कोई उड़े या कोई देखकर खुश ... हरसिंगार वृक्ष से कली नहीं गिरती उसके इस दान में अपूर्णता न... होता, वह सर्वस्व दान करता है और पूर्णता से परिपूर्ण दान देता है।

५. चिरइया एक बोले ले

५. भोर तो सब जगह होती .... से होते हैं।

व्याख्या—मिश्र जी का कहना है कि प्रातःकाल की सूचना दे... वाले कोई न कोई पंक्षी प्रकृति के साथ सम्बन्ध स्थापित करने ... लिए बोलते ही है किन्तु जो लोग एलार्म, या भोपू या सूर्य का ... तेज होने पर जगते हैं वे इसमें वंचित हो जाते हैं। लोग प्रातः उठते ... उन्हें विभिन्न सुगन्धित पुष्पों से होकर आने वाले सुगन्धित समीर से ... का सुख उपलब्ध नहीं होता है जो लोग सारी रात किसी विलासि... के साथ स्नों की चमक, पाउडर की गमक और पायल की झंकार ... बिताते हैं उन्हें पिछली रात में स्वप्न भी तो नहीं आयेगें। अपने स्नो ... चमक वाले सौन्दर्य जगत और विलास जगत के स्वप्नों के साथ ...

शिल से मिलने वाली विगह दूती अपनी रागिनी मिलाने कैसे आयेगी योंकि उसे प्रकृति के फूलों का माधुर्य भाव विभोर कैसे कर सकता जो स्वयं ही रात भर के विलास से थककर प्रभात के स्वप्नों में बे हों।

६. यह संदेश उस अकेले .... सुनकर भी उसे सह नहीं पाया।

व्याख्या—लेखक कहता है कि प्रातःकालीन चिड़ियों के चहचहाने का संदेश न सुन पाया वह बड़ा ही अभागा है जो सुनकर जो समझ नहीं पाया अथवा समझ का प्रयोग नहीं पाता वह परम अभागा है। वह व्यक्ति तो और भाग्यशाली है जो चिड़ियों के इस गान से आत्मसात कर लिया। इस घोषणा में पृथ्वी और आकाश दोनों के ही जागरण की उद्घोषणा है परम आनन्ददायक और अनुभव योग्य है। लेखक कहता कि ठाकुर चिड़ियाँ की आवाज रूपी प्रेरणा को मैं हृदयगम कर का हूँ मंगल गीत की महक रगरग में बस गया है यही कारण है कि मैं लोक साहित्य को फैशन माननें वालों से अपने आप को दूर रख पाया। जब मैं बाहर झांक कर देखता हूँ तो अनेक कंठ से इस सुरीली आवाज को सुनता हूँ।

७. मैं अपनें को बाहर .... चिरया बोल उठी है।

व्याख्या—लेखक ने वताया है कि सदृश्य ध्वनि उच्चारित करने वाली ठाकुर चिरइया को भोर का अवाहक चिरइया माना है इस आवाज से अत्यधिक प्रेरणा मिलती है अपने गाँव से दूर रहने पर भी उसे भोर का आवाज कानों में गूंजता रहता है उसे लगता है कि यह उद्बोधन उसे यह प्रेरणा देता है कि वह बन्धन को छोड़कर मृत्यु की ओर अग्रसर होता है इस अवाज से धरती का विशाल क्षितिज गूंज उठा है इस अवाज में ऐसी क्षमता है जो सारे वातावरण को मधुर बना देती है। अर्थात् इस ठाकुर चिरइया की आवाज और बोली अपनी मधुरता से सोयी हुयो मानवता को जागत कर रही है।

८. जो जिन्दगी तपस्या की .... ही रूपान्तर होता

व्याख्या—इसमें लेखक साहित्यकार की भाँति और साहि सम्बन्ध में कहता है कि जो साहित्यकार अपने जीवन में तपस्या महत्व नहीं देगा वह साहित्यकार नहीं बन सकता प्रत्येक साहित्य जीवन का गीत गाना चाहता है वह जीवन गीत तभी गा सकता है वह गीत को अपनी आत्मा में भर ले तथा जीवन गीत से साक्षात्कार साहित्यकार जब कठिन तप करके अपने आपको तपाया जय, तभी मंगलघट की अवतारणा कर सकता है। प्रयोगवादी कवि यह करते हैं कि वे जीवन के गीत को गाते हैं किन्तु कहने मात्र से जिन्दगी के गीत नहीं जान लेंगे। चिरइया हमें सुख निदित त्याग सन्देश इसलिए देती है कि हम ब्रह्म मुहूर्त में उठे इसी समय हम चित्त को एकाग्र कर सकते हैं तभी सम्भव है।

९.—व्यष्टिरूप .... अवतारण नहीं होने

व्याख्या—लेखक कहता है कि वास्तव में साहित्य के अन्त तप की पूजा और आनन्द भी है इसके साथ भावना का भी समि है किन्तु आज की आवश्यकता है कि साहित्य में तप, आनन्द और भावना का समन्वय किया जाय ताकि जीवन गति उभर सामने आये जब तक साहित्य में पूर्ण मंगल की अवतारणा नहीं हो लेखक कहता है ठाकुर चिरइया की आवाज रूपी प्रेरणा को मैं हृद कर चुका हूँ मंगल गीत की महक रगरग में बस गया है यही का है कि लोक साहित्य को अपने जीवन में एक तपस्वी का रूप क्योंकि तप से द्रवणशीलता आती है इसका यह कारण है कि ठाकुर चिरइया के उद्बोधन के अर्थ को नहीं समझ पाते हैं।

१०. आजकल अन्न कमाने .... रोटी का जोर

व्याख्या—लेखक कहता है कि आजकल अन्न को उपजाने अपेक्षा लोग खाने पर अधिक जोर देते हैं। अन्न उपजाने के लिए के

ार मात्र ही किया जाता है जिस प्रकार हम रोटी खाने के लिए
न्दोलन करते हैं उसी प्रकार यदि अन्न उपजाने के लिए आन्दोलन
तो निश्चय ही अन्न की उपज बढ़ सकती है आन्दोलन के लिए
ी दशा में बाँसुरी की तान को लोग कैसे सहन कर सकेंगे क्योंकि
ुरी की ताप सुखी लकड़ी को मिली और प्रज्वलित अग्नि को मन्द
देने वाली है देश में दूध और दही की नदियाँ बहने लगे श्रीकृष्ण
सन्देश कि गोधन का व्यापार नहीं करना चाहिए. यथार्थ लगने
। हम दूध अन्न का व्यापार करते हैं। प्राचीन काल में भारत को
ने की चिड़िया कहा जाता था अतिथि का हम देवता के समान
ार करते थे आज अभाव इतना बढ़ गया कि अपना सगा भाई भी
रिवार का बोझ जान पड़ता है और हम अलग हो जाते हैं।

६. चितवन की छाँह

. शब्द की शून्य, भीत .... आवश्यकता है।

प्रस्तुत गद्यांश में लेखक चितवन की छाँह की मीमांसा करते हुए
हते हैं, कि शब्द शून्य से उत्पन्न होते हैं, इन शब्दों की शून्य दीवार
ही इस चितवन के छाँह की सुगन्ध के रंग-बिरंगे चित्र खींचने में
क्ति युगों से लगा रहकर अपना जन्म सफल कर रहा है। इस गन्ध
प्रतिष्ठित करने वाली पृथ्वी की पूजा अर्चना परम अर्चना है और
में परेशानी कम नहीं है, पार्थिव निराकार गन्ध की साधनों में विवेक
र बुद्धि की अनन्यता और एकाग्रता के साथ निष्ठावान होने व
लोभी व क्षमा करने की जितनी परम आवश्यकता है, उतनी किसी
न्य साधना में नहीं होती है, हो ही नहीं सकती है।

७. धीरे-धीरे मुरली बजाओ

२. कोरी आध्यात्मिकता ....रस नहीं सकती।

इस प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का कथन है, कि सुख और दुःख एक
सिक्के के दो पहलू हैं, ब्रह्म की परिभाषा खालीपन में नहीं वरन्
र्णता में है, बिना भक्ति-भाव के आध्यात्मिकता एक खाली और अधूरी

मना मात्र है। जिसमें भटकना ही है, तृप्ति व सन्तोष नहीं है। इतिहास से दर्शन को भिन्न मानता है, दर्शन से साहित्य को अलग साहित्य को कला से अलग मानता है, वह मुरलीधर कृष्ण को बलराम को, संगीत के साथ श्रम इन दोनों की समन्वित छवि आंखों में नहीं समा सकती इस विषय में वह कुछ सोच ही सकता है।

८. पूर्णमदः पूर्णमिद

१३. मेरे समष्टिवादी··· ··· ··· ···प्रतिष्ठा की जाती है।

प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने भरे हुए परिपूर्णावस्था की सन्तुष्टि कहा है, कि मेरे समष्टिवादी (संसार को एक समूह मानने वा भाई शायद यह कहें कि अपने में पूर्ण होना तो स्वार्थ की बात इसमें सामूहिक रूप से लोगों के कल्याण की भावना कहाँ आई ? तो ऐसे बन्धुओं को यही प्रत्युत्तर होगा कि इदम् की पूर्णता ही सब की अदः की पूर्णता को अभिव्यक्ति देती है, जब कलश जल से परि किया जाता है तो जल में, यह सागर है, यह नदियों का जल है, इसमें जल के अधिष्ठाता वरुण के होने की भावना लेकर ही क भरा जाता है। इस कलश में त्रिभुवन या संसार और ब्रह्मा, वि महेश की प्रतिष्ठा की जाती है।

९. आँगन के पंछी

१४. हमारा सांस्कृतिक··· ··· ··· ··· ··· ···कर्त्तव्यशील बनाता है।

प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का कहना है कि आँगन का पंछी वह भी गौरेया को मानते हैं, उसे भी पारिवारिक सदस्य सा समझते हैं। हम संस्कृति भी इसी पारिवारिक प्रेम में रची बसी है, देवी देवताओं स्थान कुल पर्वत, कुल नदियों की कल्पना, तीर्थों धामों की कल्प और आचार्यों मठों की कल्पना पारिवारिक विस्तार का ही एक है, जिसमें समस्त संसार के जड़ चेतन को मानव अपना परि

मानकर चलता है। पारिवारिक साहचर्यभाव हमारे साहित्य की अमूल्य धरोहर है, देन है। यह पारिवारिक भाव ही हमें चर-अचर, जड़-चेतन के साथ मिलकर अपने कर्त्तव्य करने की प्रेरणा देता है हमें कर्त्तव्यशील बनना है।

१०. बनजारा मन

१५. अध्यापन और सर्जन..निभ सकती।

प्रस्तुत गद्यांश बनजारा मन से लिया गया है इसके लेखक श्री विद्यानिवास मिश्र जी हैं। इन्होंने पजस्वी स्वभाव के विषय में लिखते हुये बताया है, कि पढ़ाना और काव्य-गद्य इत्यादि साहित्य की जितनी विधाएँ हैं, उनका सर्जन यह दोनों कार्य सर्वथा एक दूसरे से विरोधी विपरीत स्थितियाँ हैं। यदि अध्यापन करने की इच्छा है, तो रचना करने की इच्छा को त्याग देना चाहिए नहीं तो कभी बढ़ने के अवसर नहीं मिलेंगा। नूतन विचारों का यहाँ आदर नहीं होता यहाँ बंधी-बधायी लीक पर ही चलना पड़ता है। यहाँ कुछ पाने की आशा नहीं रखी जा सकती।

११- मैंने सिल पहुँचायी

१६. लोग मुझसे पूछते...नहीं दे सकता।

प्रस्तुत गद्यांश में लेखक का कहना है कि लोग लेखक से पूछते हैं कि तुम में किसी कार्य के प्रति उत्साह नहीं है, त्याग को न्योछावर कर देने की भावना का भी अभाव है। संकट के समय भावनात्मक एकता नहीं है, कि भावनाओं के वशीभूत होकर तुम सबके साथ एकजुट हो जाओ। मैं उन्हें समझाने में असमर्थ हूँ कि मेरे हम वतनों मैं युद्ध की विभीषिका के रूप में देखता हूँ, देश की रक्षा को गंभीर कार्य मानता हूँ, उठे हुए आग को उत्साह नहीं मान सकता और डींग हाँकने को वीरता का दूसरा रूप नहीं कह सकता नहीं सस्ती आधुनिकता में बह कर कह जाने को संकल्प की संज्ञा ही दे सकता हूँ। पराजित होने में जो लज्जा बोध है उसे मैं जानता हूँ और जीतने वाले विनय शीलता भी मैं जानता हूँ।

३. संस्कृति संगम

१. संस्कार और संस्कृति

पाठ का सारांश—इस निबन्ध में महादेवी वर्मा जी के माध्यम लेखक ने संस्कृत और संस्कार के अर्थ को स्पष्ट करते हुए एक दूसरा के सम्बन्ध को स्पष्ट किया है मानव मात्र को संस्कार प्रकृति परिवेश से दाय रूप में अनायास उपलब्ध होता है। इन संस्कारों कारण ही वह स्थूल, सूक्ष्म, बाह्य आन्तरिक बन जाता है एवं प्रत्येक ऐसी विशेषताओं का सहज ही उत्तराधिकारी बन जाता है जिसके कारण मानव समष्टि में सामान्य रहते हुए भी सबसे भिन्न पहचाना जा सकता है। मानव समूह को तात्विक रूप से समझने में सबसे प्रमुख पूर्ण व सुमधुर तथ्य उसका साहित्य ही है साहित्य में मनुष्य का अन्त संचित बाह्यजगत् में आकर निश्चित सीमा में बंध जाता है एवं सीमित बाह्यजगत् के विस्तार से मुक्त हो नवीन रहस्यता को प्राप्त होता है।

महादेवी जी भारत के प्रति विशेष रूप से कहा है कि हमारा यह देश असंख्य परिवर्तन युक्त भौगोलिक दृष्टि से विशेष महत्व रखता है जिस पर मानव जाति के बौद्धिक और रागात्मक विकास ने जो अमिट चिन्ह छोड़े हैं वे प्रतिभा मण्डित हैं। मानव संस्कृति की तुलना पर्वत शिखर के जल से करते हुए महादेवी कहती हैं कि वो बर्फ बनकर अनन्तकाल तथा शिला खण्डों के साथ स्थिर भी रह सकता है और तरलतायुक्त वह नदी बनकर निरन्तर प्रवाहशील भी हो सकता है। साहित्य की महत्ता का वर्णन करते हुए महादेवी का कथन है कि साहित्य मनुष्य की जय-पराजय, जीवन-मृत्यु की गाथा है जो ईश्वर के अवतार ग्रहण करने पर पूर्ण मानने से इनकार भी कर सकता है। जिस प्रकार नदी अपने पुरातन जल के लिए नहीं अपितु नवीन मां

गिमा के कारण एकाकार रहती है उसी प्रकार साहित्य की स्थिति
ी है। महादेवी जी का यह भी कहना है कि भारतीय जीवन में स्थूल
र्म से लेकर सूक्ष्म बौद्धिक क्रियाकलाप और गम्भीर रागात्मकता
क जो भी गुण है उनका अनुसन्धान करके हम किसी न किसी रास्ते
ीवन कोश के समीप पहुँचे बिना नहीं रह सकते। वेद साहित्य में
ानवता की बात कहते हुए महादेवी का कहना है कि वह तारुण्य
का ऐसा उच्छलता हुआ प्रभात है जो पथ रोकनेवाली शिलाओं को
कराता हुआ और मार्ग देनेवाली धरती को स्नेह संचित करता हुआ
आगे बढ़ता है। वह जीवन से विरक्त होना, संघर्ष में पराजय होना
स्वीकार नहीं करता। नदी वर्ग को किसी स्वर्ग नरक का प्रवेश पत्र
ानता है।

महादेवी के अनुसार सत्य का सृजन नहीं होता वह साधना से
पलब्ध होने वाली वस्तु है। वैदिक ऋषि भी जीवन के रहस्यमय
रय की अनुभूति अपनी अन्तर चेतना से प्राप्त करता है जो उसके तर्क-
तर्क का परिणाम होकर सहज ही है। जिस प्रकार जल की एकता
कारण उसमें उत्पन्न कंपन दूसरे छोर तक पहुँच जाता है वैसे ही
तना की अखण्डता व्याप्ति अपने सत्य को भिन्न-भिन्न चेतना खण्डों
लिए सहज ही उपलब्ध करा देती है। देवताओं और प्रकृति पर
ारोपित चेतना खण्डों की कल्पना को वैदिक कवि ने जिस सीमा में
ाधा है वे मूलरूप में भारतीय है। अपने परिवेश से आविच्छिन्न सम्बन्ध
खना ही उनकी सर्वमान्यता का कारण है। पृथ्वी न हो इत्यादि
पनी सत्ता विशेष ही के कारण जीवन के सहचर और व्यापक अखण्ड
अंशभूत होकर सार्थक होते हैं। भाषा की परम्परा और पुस्तकीय
ान का क्रम टूट जाने पर भी पूर्व संस्कारों को सुरक्षित रखने में
मर्थवीर है इसी सुरक्षा का पर्याय रूप संस्कृति है इसी कारण शास्त्रीय
ान से अपरिचित ग्राम्यवासी नागरिक से अधिक सुसंस्कृति माना
ाता है। नागरिक ने अपने संस्कारों के साथ शास्त्रीय ज्ञान से वेद
कालीन संस्कारों की निधि भी इसी दृष्टि कोण से सुरक्षित रहा है।

२. मानव धर्म

पाठ का सारांश—मानव धर्म की चर्चा करते हुए डा० हज़ारी प्रसाद द्विवेदी जी ने कहा है कि मनुष्य को अपने के लिए सब अवसर मिले तथा वह परलोक में नहीं, इसी जीवन में सुख अनुभूति कर सके। वर्तमान वैज्ञानिक युग में धर्म निरपेक्षता स्वाभाविक विकास की स्वस्थ परम्परा को विकसित करने की, उस मानवतावादी दृष्टि समन्वय की आवश्यकता है। यदि आज भी वार के बल पर मनुष्य अपनी अभिलाषा में पूर्ण करने की बात है पर मूल प्रवृति वही है आज भी समस्या बनी हुई है लेकिन इन बातों से मानव लज्जा का अनुभव करता है कोई भी यह नहीं चाहता है कि दूसरे देश को युद्ध के लिए उत्प्रेरित करें। द्विवेदी जी का कथन उचित है कि जब मनुष्य किसी काम को करने में लज्जा का अनुभव करने लगे तो यह मानना चाहिए कि उनमें विवेक आ गया है सत् और असत् की जानकारी मात्र देता है। चरित्र बल सुदृढ़ करता इसलिए प्रयोग शास्त्रों में विवेक के साथ-साथ वैराग्य को आवश्यक तत्त्व माना गया जिससे मनुष्य असत् कर्मों के प्रति उदासीन रहे और सत् कार्यों के प्रति उत्सुक हो विवेक और वैराग्य ही मिलकर सदाचार का सृजन करना है। मनुष्य विज्ञान के साथ शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति के पथ पर है और यही कारण है कि आपस में मनुष्य का मनुष्य के प्रति प्रेम बढ़ ही गया है। अतः उनका धर्म एक मानव है यद्यपि पूर्व में भी इन मनीषियों ने इस अनुभूति के समान गया है।

लेखक का कहना ठीक है कि धर्मों के मूल तत्वों को ध्यान रखना जरूरी है। समन्वय का यह रूप न तो उन बाह्य उपचारों व्यक्ति अपनाने लगे जो भिन्न-भिन्न धर्मों का पालन करने वाले करते हैं। द्विवेदी जी के अनुसार समन्वय का अर्थ है मनुष्य की एकता को स्वीकार करना और उस विशाल मानवतावादी दृष्टि

प्रकृति से संघर्षरत है और अपने को परिष्कृत करता हुआ आज तक
चला जा रहा है जो परिष्कार क्रम मनुष्यों की भाँति पशु पौधों में
भी हुआ इस प्रकार यह विकास क्रम ऐसा जैवी धर्म है जिसके
कारण से सृष्टि अपने प्राकृतिक परिवेश से संघर्ष करते हुए और
कुछ उनमें समझौता करके अपने अनुकूल बनाते हुए विकसित होने का
उपक्रम करती रहती है। यह स्थिति धरती और बीज की भाँति है जो
एक का दूसरे में परिवर्तन है। बीज धरती छोड़कर अपना अस्तित्व खो
देता है। सही अर्थों में धरती छोड़कर वृक्ष की निश्चित मृत्यु आरम्भ
होती है। ठीक यही बात मानव जीवन और उसके प्राकृति परिवेश के
सम्बन्ध में है।

महादेवी के शब्दों का विकास की दृष्टि से विशालता लघुता को
ओर और स्थूल सूक्ष्म की ओर बढ़ रहा है उसके ही अनुसार शरीर
से रहित चेतना आत्मभाव हो या परम भाव उसमें प्राण स्पन्दन का
अभाव रहेगा और उसमें विकासोन्मुख गति कदापि सम्भव नहीं।
प्रकृति ने यदि मनुष्य निर्माण के लिए असंख्य प्रयोग किये तो मानव ने
भी उस प्रकृति को देवता बनाने के लिए भावसृष्टि के द्वारा अनन्त
प्रयोग किया है। ठीक उसी प्रकार भिन्न-भिन्न श्रेणी के मनुष्य होते
हुए सामान्य गुणों में उसी जाति के सदस्य माने जायेंगे महादेवी
के शब्दों में सभ्यता संस्कृति का पर्याय नहीं प्रकारान्तर से गुण अन्त-
र्गत को स्पर्श कर सकते हैं पर प्रधान रूप से वह मनुष्य के बाह्य
आचरणों से व्यक्त होती है। मनुष्य की सहज प्रकृति और उसकी अपनी
संस्कृति में ऐसा अटूट सम्बन्ध है जिससे एक दूसरे का पूरक है प्रकृति
यदि गति का उन्मेष है तो संस्कृति उस गति की दिशा निबद्ध संयमित
मर्यादा का पर्याय। महादेवी संस्कृति वह विजयिनी होती है जिसके
पास जीवन के व्यापक मूल्य और उपलब्धियाँ हो मनुष्य और उसके
व्यक्तित्व को उजागर करने में उसकी जिज्ञासा अन्य वृत्तियों से ज्यादा
क्रियावान रहती है। भारत के प्राकृतिक परिवेश में जीवन की

विशिष्ट संस्कार पद्धति निश्चित ही विद्यमान है। मानव की
उपलब्धियाँ है उन्हें स्थूल रूप से धर्म दर्शन आदि शीर्षकों में भी
जा सकता है पर ये उपलब्धियाँ जो भिन्न जान पड़ती है वास्तव
एक ही है क्योंकि वे एक ही संस्कृति शरीर का अवयव होने के का
मूलतः एक है, यही कारण है कि इन सभी की समग्रता भार
संस्कृत की संज्ञा में समर्पित है। पूर्वजों की मात्र संघर्ष गाथा
उनकी उग्र-प्रशान्त, कठोर, कोमल प्रकृति का द्योतक भी है।

६. योग, विज्ञान और मनुष्य

पाठ का सारांश—आज का मानव जिस रूप में हमें दिखाई
पड़ता है वह करोड़ों वर्ष के विकास का प्रतिफल है। पदार्थ और योग
का विकास चमत्कारिक रूप से हुआ है। आज हम ऐसी स्थिति
पहुँच गये हैं कि बाहर के खोज जो विज्ञान का उद्देश्य है तथा भीतर
की खोज जो। विज्ञान का उद्देश्य है भीतर की खोज जो
का विषय है दोनों जारी रहेगी इसलिए अब समस्याओं का पूर्ण
धान पाने के लिए बाहर और अन्तर्जगत् दोनों क्षेत्रों में आविष्का
होने लगा है विज्ञान बाह्य जगत् में विकास का पथ है। योगाभ्
और प्राणायाम से रोगों का उपचार सम्भव है। शिक्षा में भी योग
मान्यता मिलनी चाहिए। योग का प्रभाव आधारभूत होता है।
इसके माध्यम से श्वास को नियमित करके शरीर को स्वस्थ बना
जा सकता है। योग और मन का आपस में सम्बन्ध शारीरिक
सिक कारणों से होता है इसके अनेक उदाहरण है मानव रोगों
चिकित्सा अपनी योग विधि से करना उपयुक्त है। योग द्वारा
रोगों का उपचार होना चाहिए तनाव एवं दबाव को योगाभ्यास
सम्भाला जा सकता है योग को जीवन का अंग बनाना पड़ेगा
चाहिए कि शिक्षा प्रणाली में चिकित्सा व्यवस्था के साथ इस लाये
रिक्ष यात्री ने भी योग की वैज्ञानिकता सिद्ध कर दिया है योग
मानव चेतना का घनिष्ठ सम्बन्ध है हमें हिन्दु मुसलिम तथा

र्यों ने अध्यात्म के द्वारा सिद्ध कर दिया है परन्तु आध्यात्मिक चेतना सभी प्रकार के बन्धनों को लाँघ जाती है जाति धर्म भाषा एवं राष्ट्रीयता किसी स्तर की रही हो इसी आध्यात्मिक चेतना को सारी मानव जाति को एक सूत्र में बाधने की क्षमता है धर्म. एक विज्ञान दोनों सत्य की खोज के माध्यम हैं मानवता तथा भविष्य के लिए अनिवार्य है इन दोनों विधाओं के बीच कोई सम्बन्ध अध्यात्मवाद की सारी परम्परा ही कुण्डलिनी पर आधारित है। मानसिक ऊर्जा के बारे में खोज करनी है प्रत्येक मानव शरीर में रीढ़ की हड्डी के मूल में यही है—वस्तुतः मानव के विकास में आगामी कदम शारीरिक विकास का नहीं अपितु चेतना के विकास का है जिससे मस्तिष्क जाग सके और सक्रिय हो जो अँधेरे में पड़े हैं। संसार भर के वैज्ञानिक र्ति जो महान योगी है अपने अनुशासित जीवन स्वाध्याय तथा तपस्या-पूर्ण लगन से ऊँचा स्थान प्राप्त किया है। भारत ही एक ऐसा देश है। प्राचीन काल से ही हम संसार भर के नवीन विचारों और सम्भावनाओं का स्वागत करते रहे हैं। भारत में ही विज्ञान और योग का भी नवीन सूत्रपात होगा जिन पर सम्पूर्ण मानव जाति का भविष्य निर्भर है। यह एक महान् साहित्यिक कार्य है जो सभी मानव को करना चाहिए यह विलक्षण ब्रह्माण्ड ही ब्रह्म है वही फारसी के महान साहित्यिक कार्य हैं जो सभी मानव को करना चाहिए वही फारसी सूफी जलालुद्दीन ने संसार में व्याप्त शोर गुल कोलाहल की बात कही है जिनमें संसार बोझिल बताया गया है परन्तु भारतीय दृष्टि सर्वथा मानवतावादी रही है क्योंकि नयी चेतना जिसके प्रति हमें आत्मसमर्पण करना है यह सुनायी पड़ती है इस प्रकार हम देखते हैं कि विज्ञान और योग में घनिष्ठ सम्बन्ध है।

७. शिव की मूर्तियाँ

पाठ का सारांश—भारतीय दर्शन के अनुसार यह संसार तीन गुणों से बना है सतो गुण विष्णु, रजोगुण ब्रह्म तथा तमोगुण रुद्र या शिव से

क्रमशः सृष्टि की रचना ब्रह्म, पालन विष्णु तथा शिव संहार करते सभी इन त्रिगुणात्मक शक्तियों में बँधे हैं। मूल शक्ति एक ही है ये तं उसी शक्ति असुरों के पराजय से प्रकट होता है वे ही देवासुर संग्रा की कथाएँ हैं। पुराणों में देवासुर संग्राम की कथाएँ है जिनमें शिव दो प्रकार से मूर्तियाँ है एकलिंग रूप में तथा विग्रह शरीर रूप संसा की रचना के अनुसार है। संसार में व्यक्त और अव्यक्त यही दो रूप है अव्यक्त लिंग रूप में है तथा व्यक्त शरीर रूप में है पुराणों में जिसे लि कहा गया है वह प्रजनन शक्ति है उसका रूप प्राणात्मक है जो प्राण वही मूल में एक होते हुए देव और देवी रूप में, पुराणों में, जिसे लि कहा गया है। वही मूल में एक होते हुए देव और देवी रूप में, सूक्ष्म अं स्थूल रूप में, पुराण और प्रकृति रूप में. शिव से पार्वती पृथक नहीं दोनों अविभक्त हैं मथुर में ही शिव का नन्दी पर सवार विग्रह रूप मिलता है। कहीं नन्दी के साथ खड़ी मूर्ति भी दिखायी गयी है। नन्दि केश्वर मूर्ति कहते है नन्दि वृष काम का प्रतीक है काम पर विज होना ही शिव की महिमा है। शिव पार्वती का विवाह अग्नि और सो का ही सम्मिलन है। पुरुष अग्नि और स्त्री सोम का ही प्रतीक है मूर्ति में शिव पार्वती अलग-अलग है तथा अन्तरंग रूप अर्द्धनारीश्वर मू है। हमारे मन और प्राण भी अर्द्धनारीश्वर हैं इसके अतिरिक्त शिव क मूर्ति त्रिपुरान्तक भी है। यह मूर्ति एलोरा गुफा में पायी जाती है जिस में ही त्रिपुरा है। ये तत्व जब अलग-अलग रहते हैं तब आसुरी हो हैं परन्तु जब तक एक सूत्र में एक मूर्ति अंधकासुर संहार मूर्ति कह जाती है जो तमोगुण का प्रतीक है। शिव अपने त्रिशूल से अंधका का भेदन करते हैं। शिव की एक मूर्ति मारयान्तक कहलाती है दक्ष यज्ञ विध्वंश की कथा जुड़ी है। दक्ष ने यज्ञ भूमि में अपनी सभी पुत्रि को बुलाया परन्तु महा शक्ति रूपी सती एवं रुद्ररूपा शिव को नहं बुलाया शिव का ही भैरव रूप वीरभद्र है। इसके अतिरिक्त शिव क मूर्ति ताण्डव नृत्य की है। जो गुप्त कालीन कला का चिह्न है। शि ने काल का गर्व समाप्त कर दिया इस प्रकार कामान्तक, त्रिपुरान्तक

गानान्तक, शिव की प्रधान मूर्ति है। इसी प्रकार ज्ञान और योग की उपासना करने वाला शिव का आचार्य रूप 'दक्षिण मूर्ति' का है शिव देवाधिदेव महादेव हैं जो अग्निरूपी हैं उन्हीं को अग्निरूपी जीवनी शक्ति मानव, पशु पक्षी और वनस्पतियों में व्याप्त है, रूप में एक ही अग्निमयी शक्ति है। एक ओर विश्व की महान शक्ति एकोरूप के रूप में व्याप्त है वही असंख्य रुद्र विग्रह भी व्यष्टि रूप में उसी महादेव के विग्रह हैं।

८. काव्य साहित्य

पाठ का सारांश—भारतीय काव्य-साहित्य के अध्ययन से पता चलता है कि बाल्मीकि, कालिदास एवं भवभूति आदि के काव्य में रस की प्रधानता है। भारतीय समस्त विधाओं का मूल वेद है। इसके अनन्तर रामायण भारतीय संस्कृति आदि काव्य है तो वाल्मिकी आदि काव्य है। रामायण हमारे देश के साहित्य का बड़ा भारी प्रेरणा स्रोत है। प्रत्येक युग के कवि एवं आचार्यगण इसी ग्रन्थ से प्रेरणा ग्रहण कर अपनी रचना करते हैं। रामायण की ही भाँति महाभारत भी कवियों की प्रेरक-भूमि रही है इस प्रकार दैनिक रसात्मक साहित्य का अधिकांश भाग इन दो ग्रन्थों से ही प्रभावित है। ये दोनों ग्रन्थ भारत वर्ष के राष्ट्रीय गौरव हैं स्वयं महाभारत के रचयिता ने कहा है। जैसे दही में मक्खन, मनुष्यों में ब्रह्म के वेदों में आरण्यक, औषधि में अमृत, जलाशयों में समुद्र श्रेष्ठ है उसी प्रकार इतिहास में यह महाभारत श्रेष्ठ है इसमें अनेक वीरगाथायें, नीति तथा उपदेश की कथाएँ है। एवं भीष्म जैसा तेजस्वी एवं ज्ञानी तथा कर्ण जैसा गम्भीर दानी, द्रोण जैसा योद्धा, बलराम जैसा फक्कड़, कुन्ती और द्रौपदी जैसी नारियाँ, गान्धारी पति परायण, युधिष्ठिर जैसा सत्यवादी, भीम जैसा मस्त मौला, अर्जुन जैसा, वीर विदुर जैसा नीतिज्ञ सभी का इसमें समावेश है। भारतीय नारी का इसमें गर्व है पुरुष इस अभिमान की रक्षार्थ अपने को मृत्यु के हाथ सौंप देता है। भारत वर्ष की संस्कृति कालिदास के रचनाओं की [illegible]

उनकी रचना में शकुन्तलम्, कुमारसम्भवम्, मेघदूत तथा रघुवंश ने संसार के सहृदय विद्वानों को मुग्ध कर लिया है। कालिदास की प्रसिद्धि का मूल कारण यह है कि उन्होंने वैदिक परम्परा को वाणी दी है। उपनिषद रामायण तथा महाभारत के आदर्शों को अभिव्यक्त किया है। लेखक के अनुसार इस शैली का विकसित रूप महाक्षत्रप रुद्र दामन के शिलालेखों में देखने को मिलता है। अलंकृत एवं सरस शैली में लिखने वाले गद्यकारों ने विचार किया है कि दण्डी, बाणभट्ट आदि का नाम कवियों ने लिया है। इस प्रकार पंचतन्त्र में नीति उपदेश की कथायें भी है जिसने विश्व कथा साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। संस्कृत साहित्य में सूक्तियों और सुभाषितों का महत्वपूर्ण भण्डार है जिसमें जीवन के विविध अवसरों के अनुभूत चित्र हैं।

९. रामकथा की प्राचीनता

पाठ का सारांश—राम कथा का उल्लेख सर्व प्रथम वेदों में है। दशरथ राम; कैकेयी, जनक सीता इनके नाम वेद और वैदिक साहित्य में बराबर मिलते हैं वैदिक सीता के सम्बन्ध में यह समझा जाता है कि यह शब्द लांगल पद्धति अर्थात् खेत में हल से बनायी हुई रेखा का पर्याय है इसीलिए उसे इन्द्र-पत्नी भी कहा जाता है सीता कृषि की अधिष्ठात्री देवी के रूप में मान्य थी क्योंकि वे अयोनिजा थी अतः साहित्य का प्रभाव सामान्य राम कथा की सीता पर पड़ा। राम कथा के जिन पात्रों के नाम वेद में मिलते हैं वे निश्चित रूप से रामकथा ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है बाल्मीकि ने राम के चरित्र पर ही रामायण बनायी है इसमें बाल्मीकि आदि कवि माना जाता है रामायण और महाभारत दोनों ही भारतीय समाज के दो मान्य महा काव्य हैं जिनमें विशाल सांस्कृतिक धाराओं का संगम है रामायण सांस्कृतिक समन्वय का काव्य है। रामायण की रचना तीन कथाओं को लेकर पूर्ण हुई है। प्रथम कथा अयोध्या के राजमहल की है, दूसरी दक्षिण में रावण की है, तीसरी किष्किन्धा के बानरों की है। आदि

कवि ने तीनों के जोड़ कर रामायण की रचना की है राम को ऐति-हासिक पुरुष मानकर जाति की सहायता से लंका पर विजय पाने की कथा कवि ने लिखी है। इस प्रकार रामायण में तीन कथाएँ हैं। राम, रावण, हनुमान में तीन चरित्र तीन संस्कृतियों के प्रतीक हैं। वैष्णव धर्म की रामाश्रयी शाखा में आर्येतर जातियों का योगदान रहा है रामावतार विष्णु के माने जाते हैं। रामकथा के विकास पर फादर बुल्के ने जो विद्वतापूर्ण ग्रन्थ लिखा है इन्ही के आधार पर बाल्मिकी ने रामायण की रचना की ज्यों-ज्यों रामकथा का मूल रूप लोकप्रिय हुआ त्यों-त्यों जन-मानस की जिज्ञासा भी जागी कि राम कैसे जिनमें सीता कैसे जनमी। राम आदर्श क्षत्रिय मानव रूप में मान्य हुआ रामचरित्र ज्यों-ज्यों लोकप्रिय हुआ, त्यों-त्यों उनमें अलौकिकता आ गई है। निश्चित रूप में राम विष्णु के अवतार हो गये परवर्ती साहित्य में राम की महिमा प्रखर थी। भारत वर्ष की संस्कृति निरन्तर राम मयी हो गई यही कारण है कि भारत से बाहर बौद्ध ग्रन्थों के माध्यम से जो रामकथा गायी उसमें राम के प्रति विष्णु के अवतार के रूप में राम के प्रति कोई भक्ति भाव नहीं मिलता।

१०. श्रीमद्भागवत गीता पर्व

पाठ का सारांश—ईश्वर का मानव ही उपदेश गीता संवाद ग्रंथ है इससे अध्यात्म विधा का प्रधान्य है। मानव मन की ज्ञान, कर्म तथा भक्ति रूपी प्रवृत्तियाँ का अंकन जीवन को सफल उपयोगी तथा आनन्द-मय बनाने के लिए अथक प्रयास है यह अमृत वाणी है। साहित्य में कर्म शास्त्र तथा मोक्ष शास्त्र का सम्पूर्ण अनुपम ग्रन्थ है दर्शन, धर्म नीति के ग्रन्थ से ऊपर की रचना है यदि जानते हो तो अन्यथा गुरू के साहित्य में पहुँच जाय तो उससे प्राप्त होने वाला समाधान का जो स्वरूप है वही गीता है। अर्जुन के मन के संशय ने कार्य के विषय में झकझोरा तो वह श्रीकृष्ण जैसें ज्ञानी गुरू की शरण में गया-भगवान श्रीकृष्ण की वाणी वेद व्यास के पूर्णतम मंश: समाधि की

अभिव्यक्ति हैं इसलिए ये दर्शन-धर्म अध्यात्म या नीति से ऊपर मानव जीवन की मौलिक समस्याओं की व्याख्या करने वाला परिपूर्ण काव्य कहा जा सकता है। गीता जैसा वक्ता और श्रोता के हृदय की उन्मुख सरलता शब्दों की अभिव्यंजना शैली और मानव जीवन के साथ सन्निधि-अन्यत्र दुर्लभ है यही ईश्वर के लिए तीन शब्दों का प्रयेग किया गया है। ईश्वर है वह तत् एवं वह सत्य है यही ईश्वर के विषय में भारतीय दर्शन की भी मान्यता है। भारतीय संस्कृति का मूलाधार तत्त्व है। यह विश्व ही सत् रूप है इसके भीतर देव की सत्ता अणुप्रविष्ट है जिसके कारण विश्व और मानव जीवन स्थायी मूल्य प्राप्त करते हैं। इस प्रकार गीता सत् तत्व का प्रतिपादक शास्त्र है जितनी समस्या है वह अर्जुन रूपी नर के लिए ईश्वर और विश्व के बीच जोड़ने वाली कड़ी नर है। भारतीय दृष्टिकोण से ये दो सूत्र स्मरण करने लायक हैं। भगवान के साथ विश्व के साथ इन दोनों की समस्याओं के समाधान का उपाय ज्ञान है। सांसारिक समस्याओं के समाधान का साधन कर्म है। अतः दोनों मनुष्य के लिए आवश्यक है इसे ही गीता में ज्ञानयोग तथा कर्म योग कहा जाता है इसे ही पुष्पिका में दो शब्दों में व्यक्त किया गया है। ज्ञान मानव के लिए परम आवश्यक है ज्ञान रूपी समाधान की दृष्टि से योगःकर्मसु कौशलम् हैं। ये दोनों नाम पड़े पर दोनों को ही समत्वयोग कहा गया है अर्थात् दोनों का समन्वय ही जीवन की की पूर्णता है।

११. मूर्तिकला और स्थापत्य

पाठ का सारांश—भारतीय मूर्तिकला और स्थापत्य कला के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया है उनके अनुसार भारत में मूर्तिकला का उद्भव और विकास कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि यहाँ असंख्य मूर्ति पूजक लोग हमारे हैं। यहाँ अति प्राचीनकाल की मूर्तियाँ जैसे—सोना, चाँदी, ताँबा, काँस्य अष्टधातु आदि तथा पत्थर, मिट्टी आदि उपादानों से बनी हुई मिली हैं जिनकी निर्माण कला को देखकर

विद्वान एवं कला पारखी भी दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं। मूर्ति रचना में मुख्यत: दो उद्देश्य होते हैं एक तो किसी स्मृति को जीवित रखना और दूसरा अमूर्त या अथक्य भाव को मूर्त का रूप देना। मोहन जोदड़ों और हणप्पा की खुदाई में मिट्टी पत्थर और तांबे की मूर्तिआँ मिली है जिन पर डील और बेड़ील वाले बैल हाँथी बाघ और गैंडों की एवं अन्य प्रकार की आकृतियाँ प्राप्त होती है और एक अन्य प्रकार की आकृतियाँ प्राप्त होती है और एक पंक्ति से तीन पंक्ति तक के लेख भी विद्यमान हैं सबसे प्रसिद्ध एक मिट्टी की मुहर पर आसन लगाये एक ध्यानस्थ मूर्ति मोहनजोदड़ो से प्राप्त हुई है वह मूर्ति शिव की है जो वुद्ध मूर्ति का निर्विवाद रूप है जिससे यह मालूम होता है कि उस समय योगसाधन विद्यमामान था। रायकृष्णदास ने अपनी पुस्तक भारतीय मूर्तिकला में बताया है कि भारत में अब तक जो प्रवीन मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं प्रचीन मूर्ति अजातशत्रु की है जो वेश की मूर्तियां है जो भी अन्य अशोक कालीन मूर्तियाँ हैं वह मूर्तिकला के अद्वितीय उदाहरण है। अशोक द्वारा वनाया गया सौ फुट ऊँचा एक स्तूप काफिरिस्तान, जो पुराने नाम में कपिश है। एक दूसरा स्तूप ३०० फुट ऊँचा काबुल-पेशावर के बीच निग्रहार में था उस समय की असंख्य मूर्तियाँ मिट्टी की मिल रही हैं जो कला की दृष्टि से उत्कृष्ट मानी जाती हैं। मन्दिरों की परम्परा चाणक्य के पूर्व से चली आ रही है उस पुराने युग के भी कला, इतिहास में मृण्मूर्तियाँ, प्रसाद, गुफा मन्दिर इत्यादि को विशेष स्थान मिला है हिन्दू मन्दिरों में भी पौराणिक कथायें उसी प्रकार मूर्तियाँ द्वारा अंकित मिलती है जिस प्रकार बुद्ध-जीवनी, बौद्ध मन्दिरों में पूर्वजों द्वारा स्थापत्य का अच्छा विवेचन किया है। उस वक्त भी इमारतों, मन्दिरों एवं मूर्तियों का निर्माण हुआ था जो अचरज करने वाला है। तक्षशिला की खुदाई, नालंदा की खुदाई में अद्भुत कला का दर्शन देखने को मिलता है। पुरी का जगरनाथ मंदिर एवं भुनेश्वर का कैलाश मंदिर उत्कृष्ट कला के नमूने हैं जिन्हें देखकर

आश्चर्य चकित होना पड़ता है। इतने सुन्दर ढंग से बनी हर मंदिर इतना कलापूर्ण है। मन करता है कि देखते ही रह जाये हमारी वास्तु विद्या का लोप होता जा रहा है। आज अपनी संस्कृति रक्षा के लिए इनका पठन पाठन आवश्यक है।

१२. नये मूल्यों की तलाश धर्म के स्तर पर

पाठ का सारांश—विद्यानिवास मिश्र ने अपने इस लेख में मू की खोज धर्म स्तर पर करने की बात कही है धर्म मात्र अध्यात्म वस्तु नहीं है वह सम्पूर्ण जीवन है धर्म बदलते हुए समाज और के बीच परिवर्तनशील प्रकृति और मानव के मध्य लयबद्धता परखता रहता है। मूल्य का दूसरा अर्थ जिसे पुरुषार्थ के नाम से जा जाता है पर मूल्य एवं पुरुषार्थ जो चार भागों में है और क्रमिक के लिये है। उनमें स्पष्टता अधिक है यज्ञ की संख्या ने वैदिक क में मानव और प्राकृतिक शक्तियों के बीच सामाजिक चेतना के निम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई पर यज्ञ का कर्मकाण्ड छोटा होने इसकी जाँच हुई और यज्ञभाव की साधना अधिक महत्व वाली गयी यही यज्ञभाव उपनिषदों में ब्रह्मभाव हो गया बाद में अ नारायण भाव भी भक्तों के आगे विवश हो गया। साहित्य में यह चिन्ता का उत्प्रेरक-रूप है असन्तोष चाहे व्यक्ति की निजी स्वतन्त्र हो या व्यक्ति का मोक्ष इन सबसे असन्तोष है। तभी चिन्ता हुई असन्तोष स्वधर्म के प्रति भी हो जाता है शरदचन्द की बातों लेखक कहता है कि एकनिष्ठ प्रेम, सतीत्व के आदर्श में क्या बड़ा है। धर्म का तीसरा क्षेत्र यह है कि जीव सृष्टि के चक्र में मानव कि भूमिका में रहें इसे जानने की ओर अपने आचरण का वेसा ही ढा के प्रयत्न की चिन्ता करना है. हिन्दुस्तान के समाज को सपनों बकबकाने वाला कहकर लेखक कहता है कि उसका धर्म केव एक पैर पर खड़ा है जो सत्य है। वह सत्य जो सबका है जिसे चल के लिए हमेशा संकट की घड़ी आती रहती है समान धर्म को स

पहले परिभाषित करना होगा जो सभी वर्गों का अतिक्रमण करने वाला होकर भी सबमें ही स्वाधीन होने के बाद हम यह भूल गये हैं और अभी यह जानना शुरू किया जाय कि जीवन की निरंतरता पूर्णता और एकता के लिए उत्सर्ग और वरण करने योग्य हमारे ये ही मानवीय मूल्य हैं, जिनको हम भूल चुके हैं। गतिशील करने के लिए हमें समान धर्म या भाव को परिभाषित करना होगा जो सब धर्मों में हो। जीवन की निरन्तरता और पूर्णता और एकता के लिए हमें सब मूल्यों का ही वरणीय है।

१३. विदेशों में भारतीय संस्कृति

पाठ का सारांश—भारतीय संस्कृति किस रूप में विदेशों में पनप रही है इसका वर्णन भगवतशरण उपाध्याय जी बड़े ही सुन्दर एवं स्पष्ट शब्दों में किया है इस भ्रमण का उद्देश्य भारतीय संस्कृति पर अपने उद्‌गार को व्यक्त करना और इतिहास तथा संस्कृति सम्बन्धी अपने विचारों का विकास करने के साथ ही विदेशों में स्थापित भारतीय संस्कृति पर अनुसंधान करने वाली संस्थाओं को देखना और समझना न था। दस महीनों तक अमेरिका के संयुक्त राष्ट्र, कनाडा, यूरोप, इंग्लेण्ड, नार्वे, स्वीडेन, डेनमार्क, हॉलेण्ड, बेल्जियम, फ्रांस, स्विटजरलैण्ड, इटली, यूगोस्लावाकिया और ग्रीस तथा अफ्रीका के मिश्र देश का दौरा किया। फ्रांस में भी भारतीय संस्कृति के विद्वान हैं जिनमें से एक फूरों है जो यद्यपि वृद्ध हो गये हैं उनमें जिज्ञासा वृति प्रबल है और भी विद्वान मिले जो यद्यपि भारतीय शोध के प्रति चिन्तित हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्राच्यविधा सम्बन्धी शोध कार्य में एशिया का विशेष योगदान किया है। एक ऐसी ही संस्था सैनफ्रांसिस्को में स्थापित होने जा रही है। लेखक का कहना है कि यहाँ मूर्तिकलाओं के अध्ययन का क्रम जारी है। न्यूयार्क यूनिवर्सिटी से भी भारतीय मूर्ति कला का शिक्षण का कार्य होता है और प्रसंसनीय कार्य म्यूजियम मे किया गया है। भारतीय संस्कृति पर भारत की भाँति विदेशों में

भी विद्वता का ह्रास ही हुआ है। भारतीय दर्शन की चर्चा सर्व
होती हैं किन्तु संस्कृति विश्लेषणात्मक चर्चा कहीं भी नहीं दिखे
बहुत से देशों में भारत को अपने अध्ययन के क्षेत्र से बाहर रखा
अतः इस यात्रा में लेखक ने उन्हें समझाने का प्रयत्न किया कि ऐ
करना उन देशों के इतिहास पर एकांशतः पर्दा डालना है। अन्त
लेखक का विचार है कि समस्त देशों के इतिहास की, अभ्यास
सांस्कृतिक तथ्यों का खोज होना चाहिए। पर दुर्भाग्य वश ऐसा
नहीं रहा है केवल कुछ सीमित संस्थाओं में ही ऐसा प्रयास हो
है और कुछ संस्थायें इस दिशायें कार्यरत है।

१४. महर्षि व्यास

पाठ का सारांश—मुनी व्यास ने हिमालय के बदरिकाश्रम
अखण्ड समाधि द्वारा आध्यात्मक धर्मनिति और पुराण की त्रिपथ
गंगा का पहले अपनी भागीरथ प्रयत्न द्वारा आत्मसात कर साहि
जल धारा से सम्पूर्ण आर्यवाङमय को पवित्र कर दिया। अपने पूर्व
के ज्ञान और चरित्र साहित्य से गुम्फित सरस्वती को अपने कण्ठ
धारण कर लिया व्यास के जीवन चरित्र की चर्चा करते हुए लेख
कहता है कि पुराणों में १८ व्यासों की परम्परा का उल्लेख मिल
है। महाभारत के रचयिता महामुनी अमितौण व्यास ही लेखक कु
पाण्डव युग में इस पृथ्वी पर बद्दरिकाश्रम और हस्तिनापुर के बीच
आने जाने वाला माना है। वस्तुतः व्यास का नाम कृष्ण था।
द्वैपायन कृष्ण थे। व्यास के माता सत्यवती, भीष्म पितामह की सौतेल
माता थी अतः भीष्म और व्यास आपस में अपने ही थे इन्हीं के वी
से धृतराष्ट्र पाडु और विदुर पैदा हुए। पुत्रों के जन्म के अनन्तर व्या
जी ने हस्तिनापुर के निकट एक आश्रम बनवाया था। कौरव पाण्ड
की अस्त्र परीक्षा के समय भी व्यास जी मौजूद थे। व्यास जी का
अमोघ मन्त्र हमेशा पाण्डवों के साथ रहा व्यास के अनन्तर राज्य
पाण्डवों को मिलने पर भी राजसूय यज्ञ की सूझ-बूझ व्यास ने ही दी

व्यास अपने ज्ञान चक्षु से काल भी महिमा को जानते थे। काल
ुर्धर्ष सत्ता में विश्वास उनके दर्शन का अभिन्न अंग था जिसे
भारत में कई जगह वर्णन किया गया है। महाभारत युद्ध को
ने रोकना चाहा पर काल बली होने के कारण उनका प्रयास
ल हुआ युद्ध के उपरान्त भी शान्ति बनाये रखने के लिए व्यास
यास करके युधिष्ठिर को भीष्म के पास शिक्षा ग्रहण करने को
महर्षि ने उन्हें कालचक्र के उत्थान पतन का उपदेश कर दिया
विदा किया इस प्रकार लेखक के अनुसार महर्षि व्यास सम्पूर्ण
भारत की घटनाओं में स्थिति के प्रतीक है। अब अश्वमेध यज्ञ
की प्रेरणा ही से युद्ध के सोलह वर्ष बाद धृतराष्ट्र से मिले और
करने की सलाह दी। जब अर्जुन को भीलों ने लूट लिया तब ये
म बार व्यास के दर्शन को गये। इस प्रकार से वेद व्यास से
ाओं के रुझवात में भी क्षोभ रहित स्थिति के प्रतीक है।

नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द

—सत्यव्रत शर्मा

एक अध्ययन

प्रश्न १—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" रचना साहित्य की किस विधा के अन्तर्गत मानी जाय ? तर्क युक्त समीक्षा करो ?

उत्तर—हिन्दी साहित्य के गद्य युग के विकास दाता आचार्य भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने प्रायः गद्य की जिन अनेक विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई थी, साथ ही उस मार्ग पर चलने के लिये एक जागृत दी थी। "सत्यव्रत शर्मा द्वारा विरचित" नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक रचना उन विधाओं में किस विधा के अन्तर्गत मानी जाय, यह समस्या वर्तमान साहित्य समीक्षक के समक्ष बनी हुई है। सत्यव्रत शर्मा द्वारा प्रस्तुत रचना में लिखी गई प्रस्तावना (दो शब्द) के अन्तिम अनुच्छेद से यह समस्या और जटिल हो गई है। उन्होंने अन्त में लिखा है कि "नकछेद पण्डित" इस बात के प्रति पूरे बेपरवाह हैं कि उनकी यह रचना साहित्य की किस विधा में स्थान पायेगी। बाबा सम्मोहनानन्द के आग्रह को पूर्ण करके वे बाकी बातों से मुक्त हो चुके हैं।"

अब प्रश्न उठता है कि लेखक ने तो उक्त रचना साहित्य को सौंप कर अपनी रचना धर्मिता का परिचय दे दिया किन्तु साहित्य के शास्त्री उसे समीक्षा की दृष्टि को ध्यान में रखकर साहित्य-विधा की किस तराजू से तौलें कि वह रचना पूर्णतया खरी उतरे। इस सम्बन्ध में साहित्य की चार विधाओं की ओर ध्यान जाता है। (१) उपन्यास, (२) संस्मरण, (३) आख्यायिका, (४) जीवनी।

"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" रचना उपन्यास की
पर पूर्णतया खरी नहीं उतरती। क्योंकि उपन्यास विधा पर शा
में जो भी ग्रन्थ लिखे गये हैं, प्रायः उनकी कोटि में उक्त र
में कल्पना का प्राचुर्य होता है, जब कि प्रस्तुत रचना में वास्तवि
अधिक है। वस्तु, नेता तथा रस ये तीन तत्व उपन्यास के
प्रधान तत्व हैं। जब कि प्रस्तुत रचना में प्रायः तीनों की
आपस में ही उलझी सी दिखाई पड़ती है। दूसरे रचनाकार
भी शायद उपन्यास विधा के निमित्त अपनी प्रस्तुत रचना को तु
नहीं कर पा रहा था। इसीलिये उसे उक्त सन्देह प्रधान बात लि
पड़ गई थी। अतः नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द की रचना
तया उपन्यास नहीं मानी जा सकती।

दूसरा स्थान संस्मरण विधा का आता है। संस्मरण विधा
लेखक अपने जीवन को अनुप्राणित करने वाले किसी महापुरु
हुए साक्षात्कारों की प्रस्तुति करता हुआ महापुरुष के गुणा
प्रभाव का वर्णन करता है। इस रूप में यह रचना काफी कुछ स
नता रखती है। किन्तु वस्तुतः लेखक ने मात्र संस्मरणात्मक वि
को ध्यान में रखकर यह रचना नहीं लिखी, कारण यदि संस्मरण
बात होती तो इस रचना के अन्तर्गत बिरनों के बाबू सूबा
अथवा सूर्य विज्ञान के उपस्थापक भूदेव मिश्र आदि का विशद वर्ण
किया जाता। और यदि किया भी जाता तो रचना का शीर्षक
ही कुछ होता। अस्तु संस्मरण विधा के अन्तर्गत भी हम "नून
वाले बाबा सम्मोहानन्द" को नहीं स्थान दे पाते हैं।

तीसरी विधा आख्यायिका है क्या 'नूनखार वाले बाबा सम्मो
नन्द' आख्यायिका विधा के अन्तर्गत मानी जाय? इस दृष्टि
समीक्षा करने पर भी कोई सही हल नहीं प्राप्त हो पाता। क्यों
आख्यायिका या कथा या गल्प तो पूर्णतया कल्पना प्रधान ही

है। लेखक स्वयं नायक के साथ सहभागिता नहीं करता। अस्तु प्रस्तुत रचना आख्यायिका अथवा कथा विधा के अन्तर्गत भी तुलित नहीं हो सकती।

चौथी विधा जीवनी है। जो इस रचना के समीप है। जीवनी में लेखक जीवनी लिखने वाले महानुभाव के जीवन पर निरन्तर प्रकाश डालता रहता है। उसका इतिवृत्त लिखते समय स्वयं ही लेखक अपने चरित नायक के साथ भाग-दौड़ करता नहीं दिखाई पड़ता। अतः प्रस्तुत रचना जीवनी भी नही हो सकती।

अब प्रश्न यह आता है कि इस अनुपम ग्रन्थ रत्न को साहित्य की किस विधा रूपी भण्डार या कोष में जमा किया जाय? इस विधा में हमें लेखक के द्वारा प्रयुक्त पाणिनीय व्याकरण के प्रसिद्ध सूत्र 'वर्तमान समीप्ये वर्तमान वद्वा के द्वारा निराकरण होता दिखाई पड़ता है। चूंकि प्रस्तुत रचना उपन्यास विधा तथा संस्मरण विधा के काफी समीप दिखाई पड़ती है। अतः हम प्रस्तुत रचना को संस्मरणात्मक उपन्यास नामक उपन्यास की प्रभेदीय विधा के अन्तर्गत रख सकते हैं। और सही रूप से मूल्यांकन करने पर यह रचना संस्मरणात्मक-उपन्यास विधा ही मानी जा सकती है। जो यथार्थ है।

समाज में कुछ ऐसे घटक भी होते हैं जिनका व्यक्तित्व इतना विशिष्ट होता है कि वे समाज के लिये सदा उपादेय होते हैं। भले ही उन्हें जाति या वर्ग के घेरे में न बांधा जा सके। किन्तु उनकी विशिष्टता तो उस समाज के लिये 'मणि-काञ्चन' संयोग की भांति ही होती है। उसी प्रकार प्रस्तुत रचना 'तुनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द'' भले ही साहित्य की किसी एक विधा के घेरे में समाहित न हो सके किन्तु यह रचना साहित्य की एक अनुपम निधि है। वर्तमान तथा भविष्य में उभरने वाले साहित्यकारों से भी निवेदन है कि

से 'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' जैसी उच्च कोटि की रचना लिखी। जिन्हें संस्मरणात्मक उपन्यास विधा में रखा जा सके। वास्तव में प्रस्तुत रचना संस्मरणात्मक उपन्यास विधा के अन्तर्गत ही मानी जायेगी।

—: ० —

प्रश्न २—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के रचनाकार के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालिये ?

उत्तर—'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' नामक संस्मरणात्मक उपन्यास के लेखक डॉ० सत्यव्रत शर्मा हैं। लेखक ने अपनी प्रस्तावना (दो शब्द) में जो कुछ लिखा है उसमें लेखक के सम्बन्ध में प्रश्न चिह्न लगता दिखाई पड़ता है।—नकछेद पण्डित बाबा सम्मोहानन्द विषयक इस आख्यान को मैंने बड़े ध्यान से पढ़ा" तथा "नकछेद पण्डित मेरे अन्तरंग हैं और मैं बाबा सम्मोहनानन्द को उन्हीं के माध्यम से जानता हूँ। मेरा दुर्भाग्य रहा है कि कई बार चाहने पर भी मैं बाबा सम्मोहानन्द से नहीं मिल पाया।" इन वाक्यों से मामला बिगड़ जाता है ऐसा लगता है कि नकछेद पण्डित कोई पृथक् व्यक्ति हैं। जिसका बाबा सम्मोहानन्द से अन्तरंग भाव रहा है 'और डा० सत्यव्रत शर्मा मात्र भूमिका लेखक हैं। मूल लेखक नहीं।

किन्तु ग्रन्थ के अन्दर 'अवगाहन करने पर जैसे ही प्रथम शीर्षक विसकूपिन में वह छायामूर्ति' को पढ़ते हैं, उस समय पोलैण्ड के तोरुनान विश्व विद्यालय में मेरी नियुक्ति हुई और वहीं वर्फ गिरने से फिसल जाने तथा मोच लग जाने वाली बात साथ ही स्वप्न में बाबा सम्मोहानन्द का यह कथन कि "बा तू बच गया नक

पण्डित" आदि के वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि नकछेद पण्डित स्वयं डॉ० सत्यव्रत शर्मा ही हैं और कोई नहीं। यह तो वर्णनकुशलता है कि वह पाठक को सोचने के लिये बाध्य कर दे। यही उद्देश्य इस रचनाकार के भी चित्त में अवश्य रहा होगा। अतः हम निर्विवाद कह सकते हैं कि इस "नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक रचना के लेखक डॉ० सत्यव्रत शर्मा ही हैं।

डॉ० सत्यव्रत शर्मा का जन्म वाराणसी के ही एक प्रशिक्षित तथा सम्पन्न परिवार में हुआ। आपकी शिक्षा दीक्षा हिन्दू विश्वविद्यालय तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी में हुई। पाणिनीय व्याकरण का अध्यापन 'आपने गुरु चरणों में बैठ कर विधिवत किया। प्रतिभाशाली शर्मा जी संस्कृत व्याकरण के उदीयमान स्तम्भ होने के साथ ही साथ हिन्दी भाषा तथा साहित्य के उद्भट विद्वान हैं। इसके अतिरिक्त विश्व की अन्य कई यूरोपीय भाषाओं पर भी आपका अधिकार है।

अपनी शिक्षा दीक्षा समाप्त करने के बाद आपने वाराणसी में ही बैठ कर सरस्वती की उपासना करने तथा जिज्ञासु छात्र-छात्राओं की पिपासा को शांत करने के लिये सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय वाराणसी में अध्यापन कार्य प्रारम्भ किया। कुछ दिनों के बाद आप उसी विश्व विद्यालय में आधुनिक भाषा एवं भाषा विज्ञान के व्याख्याता (प्रोफेसर) हो गये। डॉ० शर्मा का अध्ययन तथा शोध कार्य अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र तक चला बहुत दिनों तक आप को फ्रांस में भी रहने का अवसर लगा।

वर्तमान समय में आप भारत सरकार की ओर से पोजनान विश्व विद्यालय पोलैण्ड में हिन्दी के विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में कार्य कर रहे हैं।

डॉ॰ शर्मा पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने पाणिनीय व्याकरण आधारित संगणक योजना (कम्प्यूटर प्रोगाम) प्रस्तुत किया था। वर्तमान में वे "संस्कृत एक कम्प्यूटर भाषा" विषयक केन्द्रीय संसद बोर्ड भारत सरकार के सदस्य हैं।

आप द्वारा लिखित अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। जि प्रमुख कृतियाँ निम्नवत् हैं।

१—ऋचायें—यह कृति आपकी मात्र सम्पादित रचना है। रचना में चार कवियों की कविताओं का सम्मिलित संग्रह है।

२—पाणिनीय व्याकरण पर आधारित संगणक योजना (कम्प्यू टर प्रोगाम)।

३—काव्य व्यापार और विशुद्ध काव्य का क्षेत्र। वस्तु ध्वनि।

४—श्री माँ का एजेण्डा : भाग एक तथा २ (फ्रेंच से अनूदित)

५—नगर खेट : अन्हारी बारी (नवीन काव्य संग्रह)।

६—श्री माँ का एजेण्डा—प्रकाशाधीन है।

इसके अतिरिक्त ढेर सारी कवितायें तथा वैचारिक निबन्ध विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित होते रहे हैं। यह उल्लेखनीय है कि इनकी अनेक कवितायें नेपाली तथा फ्रेंच भाषाओं में भी अनूदित की जा चुकी हैं।

डॉ॰ शर्मा का जीवन साधु-स्वभाव का तथा गुणग्राही है। आप छिन्नमस्ता देवी के उपासक हैं। छिन्नमस्ता देवी के सम्बन्ध में उनकी रचना 'श्री माँ का एजेण्डा' के तीन भाग पूर्ण हो चुके हैं। जिनमें प्रथम २ भाग प्रकाशित भी हो चुके हैं। निकट भविष्य में उनकी लेखनी कितने ग्रन्थ रत्नों को साहित्य सागर को भेंट करेगी —कहा नहीं जा सकता। विदेश में भी अपनी योग्यता के बल पर प्रसिद्धि को प्राप्त करना उनकी उच्च स्तरीय जिजीविषा है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के नायक "सम्मोहानन्द जी से डॉ० शर्मा का अटूट सम्बन्ध रहा है। प्यार वशात् कभी सम्मोहानन्द जी शर्मा जी को 'गजान' कहते थे। बाद में उन्हें 'नकछेद पण्डित' के नाम से पुकारने लगे। महारास के विषय में 'नकछेद पण्डित' के रूप में डॉ० शर्मा ने जो व्युत्पत्ति दी है उससे उनके पौराणिक अध्ययन का भी खुलासा स्वयमेव हो जाता है। संक्षेप में इस ग्रन्थ 'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' के लेखक डॉ० सत्यव्रत शर्मा के व्यक्तित्व तथा कृतित्व का साहित्य संसार सदा ऋणी रहेगा।

*

प्रश्न ३—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" उपन्यास की भाषा शैली की दृष्टि से समीक्षा कीजिए ? अथवा उपन्यास कला की दृष्टि से "नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के कला तत्वों पर प्रकाश डालिये ?

उत्तर—उपन्यास कला की दृष्टि से 'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' की समीक्षा करने से ज्ञात होता है कि उपन्यासकार ने अपनी इस रचना में उपन्यास के प्रायः सभी तत्वों पर सम्यक् रूप से विचार किया है। अतः इस उपन्यास की भली प्रकार से समीक्षा करने के लिये हमें उपन्यास के तत्वों पर एक दृष्टिपात करना होगा। समीक्षकों ने उपन्यास के ६ तत्व स्वीकार किये हैं। (१) कथावस्तु (२) पात्र एवं चरित्र चित्रण (३) देश काल और वातावरण (४) कथोपकथन या सम्वाद योजना, (५) उद्देश्य, (६) भाषा-शैली।

इन तत्वों के आधार पर अब 'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द'

की समीक्षा की जाती है तो पता चलता है कि लेखक द्वारा इन समस्त तत्वों का सफलता पूर्वक निर्वाह किया गया है।

१—कथावस्तु—इस उपन्यास की कथावस्तु नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द की जीवन झाँकी, उनकी गुण गरिमा, उनके व्यक्तित्व तथा सामाजिक एकीकरण की भावना को लेकर लिखी गई है। उपन्यासकार ने इस कथावस्तु में स्वयं को एक पात्र बना दिया है जिससे कथावस्तु की सजीवता मुखर हो गई है। ब्रज वल्लभदास जी मसानी जो कालान्तर में बाबा सम्मोहानन्द के नाम से जाने गये, का चरित्र प्रस्तुतीकरण ही इस उपन्यास की कथावस्तु की विशेषता है। श्री ब्रजवल्लभ दास मसानी से लेखक की एक छापेखाने में भेंट के बाद लेखक का आकर्षण प्रायः मसानी बाबा से बढ़ जाता है। इसके बाद मसानी बाबा अपनी अनहोनी विद्या की ओर संकेत करते हैं फिर तो मसानी बाबा के सम्मोहानन्द तक पहुँचने की सीढ़ी कथावस्तु के माध्यम से स्वतः स्पष्ट हो जाती है। उसका व्यक्तित्व समस्त वातावरण में छाया हुआ है। कहीं बिरनों के बाबू सूबा सिंह के माध्यम से तो फिर कहीं नूनखार में, तो कहीं महारास का वर्णन करते हुए मसानी बाबा सम्मोहानन्द के रूप में जाने जाते हैं। उन्हें यह सम्मोहन नाम की अनहोनी विद्या भगवती सुरानन्द से प्राप्त हुई। यही समस्त विवेचन कुछ-कुछ मनोरंजक बना कर साहित्यिक सत्य, शिव तथा सुन्दर रूप में प्रस्तुत कर दिया गया है।

२—पात्र चरित्र चित्रण—आलोच्य उपन्यास में अनेक पात्र हैं जिनमें, नकछेद पण्डित मसानी बाबा, सम्मोहानन्द, सूबा सिंह भूदेव मिश्र, श्यामाचरण लाहिड़ी' प्रायः मुख्य पात्र हैं। दो तीन ईश्वरी विभूतियों का चित्रण है जिनमें भगवती सुरानन्दा, यक्षिणी तथा माँ छिन्नमस्ता मुख्य हैं। उपन्यास में अधिकतर पुरुष पात्र हैं प्रायः सभी पात्र ईश्वरीय गुणों से युक्त हैं। स्वयं मसानी बाबा

पहले व्रजवल्लभ दास थे बाद में अपनी संमोहन नाम की अनहोनी विद्या की प्राप्ति हो जाने से सम्मोहानन्द के रूप में जाने गये, इस उपन्यास के प्रधान पात्र हैं। प्रायः समस्त कथावस्तु में वे किसी न किसी माध्यम से छाये हुए दिखाई पड़ते हैं। दूसरा व्यक्तित्व स्वयं लेखक का ही है। जो कहीं गजानन पण्डित के रूप में तो कहीं नकछेद पण्डित के रूप में उभर कर आते हैं। यद्यपि उक्त लेखक महोदय डॉ० सत्यव्रत शर्मा हिन्दी साहित्य भाषा विज्ञान तथा व्याकरण के पण्डित हैं किन्तु पौराणिक ज्ञान तथा आचार्य जनक घटनाचक्र से वे काफी आकर्षित रहते हैं। यहां तक कि मां छिन्न-मस्ता के भी वे परम भक्त हैं। इसी प्रकार भूदेव मिश्र सूर्य विज्ञान के अवस्थान तथा परम ज्ञानी रूप में चित्रित हैं।

३—देशकाल और वातावरण—देशकाल और वातावरण की दृष्टि से भी यह उपन्यास सफल है। इसमें घटना कालीन, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का बड़ा ही सजीव चित्रांकन किया गया है। चूंकि लेखक स्वयं विदेशी सभ्यता के परिवेश में रहा है। अतः मां छिन्नमस्ता की पूजा आदि का क्रम वर्णन भी विदेशी सभ्यता से तालमेल खाता दिखाई पड़ता हैं। उसकी पूजा पद्धति भारतीय देवी देवताओं की पूजा पद्धति से कुछ भिन्न ही दिखाई पड़ती है निश्चित ही इसमें फ्रांस के वातावरण का प्रभाव दिखाई पड़ता है। इसी प्रकार महारास आदि के वर्णन में भारतीय दर्शन की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है।

४—कथोपकथन एवं संवाद योजना—उपन्यास की संवाद योजना कथा को गति देने वाली, चरित्रों को प्रकाशित करने वाली तथा वातावरण की दृष्टि से सहायक है। इस उपन्यास के संवाद स्वाभाविक, सजीव, पत्रानुकूल आचलिकता से युक्त एवं संक्षिप्त हैं। पत्रों

की मनोदशा को भी इस उपन्यास में संवाद स्पष्ट कर देते हैं। की नौकरशाही का एक उदाहरण देखिये—

—"वह टी० टी०. झपट कर उसके पास पहुँचा और (देहाती कविता से) कड़क कर बोला—

"तुमने उस नल से पानी पिया ?',

"हां सरकार बड़ी प्यास लगी थी ?"

"जानते नहीं, उस नल से पानी पीना मना है। जुर्माना पड़ेगा।"

"सरकार उस पर तो सभी पानी पीते हैं। प्लेट फारम बम्बा है।"

५—उद्देश्य—इस उपन्यास की रचना का उद्देश्य मुख्य नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द के व्यक्तित्व को उभारना है साथ ही मां छिन्नमस्ता की पूजा पद्धति, जो विदेशी सभ्यता आकर्षित लगती है, का प्रस्तुतीकरण करना भी लेखक का उद्देश्य है।

६—भाषा-शैली—नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द की भा शैली सहज और बोधगम्य है। इसमें क्लिष्ट, अप्रचलित अत्यधिक तत्सम शब्दावली का प्रयोग नहीं किया गया है। उपन्यास का समस्त कथा चक्र प्राय: वाराणसी और उसके आस के वातावरण में घूमता दिखाई पड़ता है। अत: संवादों में भोजपुरी तथा काशी क्षेत्रीय भाषा का खुलकर प्रयोग करते गया है। एक उदाहण देखें—'का मालिक, दिमाग त ठीक हो। रहत हमें पचीस बरस हो गयल! तू कौने कमरा के बात हुआ... ......।" "सरकार! का कहूं अन्ते ते आवत हउएन..." आदि।

निष्कर्ष—अन्त में हम कह सकते हैं कि उपन्यास कला के तत्वों की कसौटी पर डॉ० सत्यव्रत शर्मा द्वारा विरचित "नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द 'नामक उपन्यास एक खरा उपन्यास सिद्ध होता है। सम्मोहानन्द के संस्मरण की प्रधानता होने से यह उपन्यास संस्मरणात्मक उपन्यास का अच्छा उदाहरण बन पड़ा है।

—:०:—

प्रश्न ४—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" उपन्यास की कथा वस्तु संक्षेप में लिखो।

उत्तर—प्रस्तुत उपन्यास 'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' कथा-वस्तु की दृष्टि से एक संस्मरणात्मक उपन्यास है। इसकी कथावस्तु के कलेवरर में स्वयं लेखक भी एक विशिष्ट पात्र के रूप में प्रस्तुत हुआ है। उपन्यास का प्रारम्भ ही लेखक के पोलैण्ड स्थित पोजनान विश्व विद्यालय में प्रथम नियुक्ति होता है। वर्फ गिर जाने से वहां पहुंते ही उसके फिसल कर गिर जाने तथा पैर में चोट लग जाने से होता है। स्वप्न में बाबा सम्मोहानन्द दिखे और बोले—"जा तू बच गया नक-छेद पण्डित।" इसके बाद नूनखार के आश्रम का चित्र भी स्पष्ट स्वप्न में दिखाई पड़ता है। इसके बाद लेखक स्वयं एक शिष्य के साथ विसकूपिन नामक एक प्राचीन दर्शनीय स्थान में पहुँचता है। वहां एक कमरे से बाहर पुनः साक्षात् बाबा सम्मोहानन्द के दर्शन होते हैं।

अगला शीर्षक विरनों के बाबू सूबा सिंह के अद्भुत चमत्कारों के साथ चलता है। जो भूतकाल के संस्मरणों का संकलन या प्रारम्भ

में बाबा सम्मोहानन्द से लेखक के मिलन का माध्यम माना जा स
हैं। कथा का प्रारम्भ एक छोटी घटना से होता हैं। लेखक की
का खोजना एक छोटी घटना थी। किन्तु उसका तारतम्य
के बाबू सूबा सिंह के करतब तक पहुँच पाया। लेखक घड़ी के
को जान लेने की कामना से बाबू सूबा सिंह के अद्‌भुत चमत्कार
करतब को देखकर काफी आकर्षित होता है। वही सूबा सिंह
को नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द से मिलने के लिये
करते हैं।

लेखक, बिरनों से नूनखार के लिये प्रस्थान करता है। ई
प्रेरणा से नूनखार पहुँचते ही बाबा सम्मोहानन्द के द्वारा
व्यक्ति से लेखक का परिचय होता है और उसी के माध्यम से
बाबा सम्मोहानन्द तक सुविधा पूर्वक पहुँच जाता है। लेख
वल्लभ दास मसानी रूप में पूर्व में परिचित किन्तु वर्तमान में स
हानन्द रूप में स्थानापन्न उन ईश्वरीय अद्‌भुत चमत्कारों से
महापुरुष का दर्शन करता है। कबीर के दोहा "अन्धा अन्धे
दोनों कूप पडन्त" का बहुत देर तक विवेचन होता है।

इसके बाद बेतिया के जंगल में निवास करने वाली माँ
मस्ता के पूजन की कथा चलती है। लेखक स्वयं ही माँ छिन्न
का पुजारी है।

बाबा ब्रजवल्लभ दास मसानी से हुई पहली इलाहाबाद
का खुलासा लेखक करता है। इसके बाद वाराणसी के गो
चौराहे की भेंट तथा उनके अद्‌भुत चमत्कार से लेखक के
के ठीक हो जाने की घटना का वर्णन स्वयं लेखक के माध्यम से
है। बाबा सम्मोहानन्द अपने विश्व महान बनने का
करते हैं।

'यक्षिणी का शाप' के माध्यम से वटुक भैरव के दर्शन के साथ ही श्यामाचरण लाहिड़ी की भविष्य दृष्टि का एक संवाद चलता है। इसी बीच कंकटेश को यक्षिणी के शाप की एक कथा को पूज्यपाद दामोदर लाल गोस्वामी के द्वारा उजागर किया जाता है। जिसे वे अपने शिष्यों को अपने अध्ययन काल में घटी हुई एक घटना के रूप में बताते हैं।

बाबा सम्मोहानन्द द्वारा महारास का वर्णन विस्तार से शिष्यों के मध्य किया जाता है। जिसमें पौराणिकता से कुछ हट कर दार्शनिक दृष्टि से नास्तिक विचार धारा वाले कुछ प्रश्न कर्ताओं का समाधान किया जाता है।

अगले दिन लेखक द्वारा सम्मोहनानन्द का दर्शन किये जाने पर स्वयं सम्मोहनानन्द द्वारा यहां पहुँचने की कहानी की चर्चा होती है। सम्मोहानन्द जी, सूर्य विज्ञान के अवस्थान श्री भूदेव मिश्र से हुए साक्षात्कार का वर्णन करते हैं। वास्तव में सम्मोहानन्द जी ने भूदेव मिश्र को ही अपना गुरु बनाया था।

उपन्यास के अन्तिम चरण में स्वयं बाबा सम्मोहानन्द अपना जीवन वृत्त प्रस्तुत करते हैं। वे प्रारम्भ में नौकरी करने लगे थे। नौकरी में प्रायः विलम्ब से जाना उनका रोज का कार्य था। एक दिन अधिकारी के कुछ अनुचित व्यवहार से उन्होंने नौकरी छोड़ दी। गुरु प्रदत्त सावित्री विद्या के बल पर उन्हें रबर के भाव के द्वारा किस प्रकार पचहत्तर लाख रुपये की प्राप्ति हुई और किस प्रकार भगवती सुरानन्दा से ब्रज वल्लभ दास मसानी का साक्षात्कार हुआ? कैसे मसानी जी सम्मोहानन्द के नाम से जाने गये? यह घटना स्वयं बाबा सम्मोहानन्द ने ही 'नकछेद पण्डित' के रूप में ख्याति लेखक को बताई।

इसी के साथ ही इस अद्भुत चमत्कार अनेक कथा-वस्तु की

समाप्ति हो जाती है। यद्यपि कथा इतनी ही है किन्तु इसके परिप्रेक्ष्य में जिन अद्भुत चमत्कारों का वर्णन किया गया है प्रायः पाठक के मन मानस में वे अपना स्थायी स्थान बना लेते हैं। सम्पूर्ण कथा को कई बार पढ़ने के बाद ही वास्तविकता का खुलासा होता है।

•

प्रश्न ५—'नूनखार वाले बाबा सम्मोहनानन्द' की रचना, धर्मिता तथा उसके ऐतिहासिक श्रोतों पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—'नूनखार वाले बावा सम्मोहानन्द' रचना, रचना धर्मिता की दृष्टि से एक पुष्ट रचना मानी जा सकती है। सम्पूर्ण कथा का श्रोत वाराणसी के आस पास परिक्षेत्र है तथा अधिकांश वर्णन कुशलता भी भारत की स्वतन्त्रता के बाद की है। परतन्त्र भारत से लेखक का बिलकुल ही लेश इस रचना में नहीं दिखाई पड़ता। इसीलिये विशेष रूप से इस रचना में ऐतिहासिक संगति का आभास ही नहीं है। समस्त घटना चक्र, लेखक की आप बीती घटनाओं तथा प्रच्छन्न या गुप्त रूप से अपने से सम्बन्धित घटना चक्र के आधार पर ही चलता है।

लेखक स्वयं साहित्य लेखक तो है ही किन्तु उसके पीछे जो "जो अतीत से उतना ही जितना पोषक हो" वाली मैथिली शरण गुप्त की कहावत चरितार्थ हुई है। वह अक्षरसः सफल है। अतीत से हमें मोह अवश्य होना चाहिये किन्तु क्या अतीत का ही वर्णन करते रहा जाय वर्तमान को देखा ही न जाय ? ऐसा नहीं। किसी दार्शनिक ने एक स्थान पर कहा था "अतीत (भूत) तो गत हो चुका, वर्तमान को मैं अपने अनुकूल बना ही लूंगा। फिर अनागत भविष्य की चिन्ता क्या ?"

आज हमारा देश प्रत्येक प्रकार से इतना समृद्ध हो गया है कि रचना धर्मिता के लिये न जाने कितने नये आयाम मिल सकते हैं ? और कितने नये वाक्य, उपन्यास, कहानियाँ, संस्मरण तथा रेखा-चित्र आदि मात्र वर्तमान परिदृश्यों पर लिखे जा सकते हैं।

शायद डॉ० सत्यव्रत शर्मा इस बात से भली प्रकार सन्तुष्ट हैं कि यदि रचना धर्मिता का लक्ष्य लेकर चलना है तो वर्तमान आयामों में ही नये शीर्षक खोजे जायें। कुल मिलाकर डॉ० शर्मा का यह दृष्टि कोण बड़ा ही पवित्र तथा वर्तमान को निखारने वाला है।

'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' वस्तुतः एक वास्तविक कथा रचना है। भले ही काव्यात्मक कलेवर प्रदान करने के लिए कुछ कल्पना शक्ति का सहयोग लिया गया हो। किन्तु यह भी तो काव्यात्मक "सत्यम् शिवम् सुन्दरम्" ही तो है। यदि कल्पना का जामा पहना कर किसी घटना को निखारा नहीं जाता वह साहित्य रचना न होकर मात्र इतिहास बन कर रह जायेगा फिर वर्तमान के बीतते ही वह रचना धर्मिता भी अतीत के साये में सो जाएंगी।

हमारा देश आर्यावर्त है। भारत भूमि है, ऋषि-मुनियों का आश्रम है। प्रत्येक युग में ईश्वरीय शक्तियाँ यहाँ उत्पन्न होती रही हैं। और अपने प्रकाश पुन्ज द्वारा संसार को आलोकित करती रही हैं। नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द भी उन्हीं ईश्वरीय शक्तियों में माने जा सकते हैं। ऐसे महापुरुषों पर एक क्या अनेक काव्य ग्रन्थ, साहित्य पुष्पिकायें तथा कलाकृतियां तैयार की जा सकती हैं। फिर तो साहित्यकार की रचना धर्मिता का लालित्य ऐसे महापुरुष, ऐसे चरित नायक, ऐसे गायत्री-सावित्री के समुपासक सम्मोहानन्द पर कुछ लिखकर स्वयं ही आलोकित हो जायेगा।

संक्षेप में डॉ० सत्यव्रत शर्मा ने "नूनखार वाले बाबा सम्मोहा-

नन्द" पर संस्मरणात्मक उपन्यास को लिखकर अपनी उच्चकोटि की रचना धर्मिता का उदाहरण प्रस्तुत करके ऐसी ईश्वरीय शक्तियों को उजागर कर देने का उत्कृष्ट कार्य किया है।

•

प्रश्न ६—'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' रचना के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए देशकाल का वर्णन प्रस्तुत कीजिए ?

उत्तर—डॉ० सत्यव्रत द्वारा लिखित "नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" रचना आधुनिक परिदृश्य का सीमांकन करती हुई ब्रज-वल्लभ दास मसानी, जिन्हें बाद में सम्मोहानन्द के नाम से जाना गया, के जीवन पर चारित्रिक प्रकाश डालती हुई उनकी कौतुकीय ईश्वरीय शक्तियों का खुलाशा करने के लिये लिखी गई हैं। इस भारतीय वसुन्धरा पर न जाने कितने सिद्ध सन्त हो चुके हैं, जिनकी उत्कृष्ट प्रतिभा ने समाज को क्या-क्या प्रदान किया, कहा नहीं जा सकता।

वस्तुतः साहित्य ही समाज का दर्पण होता है। जैसा समाज होगा वैसा ही साहित्य लिखा जायेगा। दूसरे समाज का समुद्धार करने वाले ईश्वरीय प्रेरणा के आधार स्तम्भ इस आधार के मनीषी यदि एकान्तवास ही करते रहें अथवा कोई साहित्यकार ऐसे महा-पुरुषों पर अपनी लेखनी न चलाये तो निश्चय ही ऐसे नर-नारायण समाज से न तो जुड़ ही पायेंगे और न ही समाज उनके प्रखर ज्ञान से लाभान्वित ही हो पायेगा। साहित्यकार, जिसे अमरकोषकार ने "कविस्त्वंयम्भूपरिभू" कहा था अथवा जिसे अग्नि पुराणकार महामुनि कृष्णद्वैपायन व्यास ने इन शब्दों में विवेचित किया था—

अपारे काव्य संसारे कविरेव प्रजापतिः ।
यथा स्मै रोचते विश्वं तदेनं परिकल्प्यते ।।

अर्थात् कवि, इस अपार काव्य (साहित्य) संसार में साक्षात् प्रजापति ब्रह्मा है। उसे जैसा उचित समझ में आता है उसी प्रकार वह इस काव्य (साहित्य) संसार को विरचित करता रहता है। इस रचना से केवल साहित्यकार की ही रचना धर्मिता ही उजागर नहीं होती अपितु समाज के वे प्रबुद्ध रत्न जन-मानव के समक्ष आ जाते हैं। उनकी क्रियाओं गुण गरिमा तथा साधना से समाज, देश तथा राष्ट्र से लाभान्वित होता रहता है। शायद इसी उद्देश्य को ध्यान में रख कर प्रस्तुत रचना की गई है। और रचनाकर इस उद्देश्य की पूर्ति पूर्ण रूप से कर सका है। यह भी निर्विवाद है।

देश काल—नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द रचना का क्षेत्र वाराणसी, इलाहाबाद; लखनऊ तथा गाजीपुर के आस-पास फैला हुआ है। दूसरी ओर समुद्र पार पोलैण्ड तक का क्षेत्र इसके कलेवर में संगुम्फित है। वाराणसी के गोदोलिया, बटुक भैरव तथा लहुरावीर जैसे स्थानों से यदि इस उपन्यास की कथा चलती दिखाई पड़ती है तो दूसरी ओर पोजनान विश्वविद्यालय पोलैण्ड के क्षेत्र से आगे बढ़कर व्रिसकूपिन तक इस कथा का विस्तार है। महाकवि तुलसीदास के कथन—

"वहीं अयोध्या रहेगी जहां रहेंगे राम।" के कथनानुसार जहां लेखक का प्रवास होता है वहीं 'नकछेद पण्डित' के बाबा सम्मोहानन्द की वह छायामूर्ति अवश्य ही पहुँच जाती है। फिर चाहे बटुक भैरव मन्दिर वाराणसी की सँकरी गली हो, चाहे समुद्र पार पोलैण्ड में विसकूपिन का प्रकोष्ठ हो, दैवी शक्तियों के लिए कोई भी स्थान अगम्य नहीं है।

"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" रचनायें अधिकांश स्वतंत्र भारत के काल खण्ड का वर्णन है। कुछ घटनायें तो विलकुल ही नई हैं। जिनके लिये शायद ही एक दो वर्ष बीता हो। वर्तमान समय में डॉ० सत्यव्रत शर्मा पोलैण्ड के पोजनान विश्वविद्यालय में भारत सरकार की ओर से हिन्दी के विजिटिंग फ्रोफेसर हैं। उनके वहां पँहुचने के साथ ही वह बाबा सम्मोहानन्द की छायामूर्ति भी वहां पहुँच गई। यह घटना विलकुल ताजी ही है। हां यदि सम्मोहानन्द के गुरु भूदेव मिश्र तथा भगवती सुरानन्दा से लेकर इस रचना के काल चक्र को देखा चाय तो यह समस्त घटना क्रम अधिक से अधिक ५० या ६० वर्ष से वर्तमान समय तक है।

वस्तुतः इस रचना में डॉ० सत्यव्रत शर्मा ने अपने उद्देश्य में तो सफलता प्राप्त की ही है साथ ही देश-काल का जो मणिकोंचन संयोग बन पड़ा है वह एक उच्च कोटि के साहित्यकार की प्रतिभा का उत्कृष्ट नमूना है।

֍

प्रश्न ७—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" रचना का आधार भूत नायक कौन है ? उसका चरित्र चित्रण कीजिये—

अथवा

बाबा सम्मोहानन्द का चरित्र चित्रण कीजिये ?

उत्तर—'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' नामक उपन्यास के नाम से ही स्पष्ट हो जाता है कि इस उपन्यास के नायक बाबा सम्मोहानन्द हैं। जो इस उपन्यास में आदि से अन्त तक छाये हुए हैं। यह बात अलग है कि उनका जीवन वृत्त समस्त रूप से एक क्रम से नहीं

मिलता। तथापि समालोचना तथा समीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि सम्मोहानन्द अपने जीवन के प्रारम्भ में ब्रजवल्लभ दास के नाम से जाने जाते थे। अपने दार्शनिक ज्ञान के आधार पर उन्होंने अपने नाम के आगे मसानी उपनाम जोड़ रखा था। उनका अध्ययन प्रायः विश्वनाथपुरी वाराणसी में ही सम्पन्न हुआ। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी से संस्कृत में एम० ए० तथा गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज वाराणसी, जिसे वर्तमान में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी के नाम से जाना जाता है, से व्याकरण में आचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। शिक्षा का माध्यम होने के कारण अंग्रेजी तो ऐसे ही पुष्पित पल्लवित होती गई।

विश्व महान -- अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद वे 'जयपुर' के एक कालेज में संस्कृत के अध्यापक हो गये। इसके पूर्व जब उनकी नौकरी नहीं लगी थी तथा आयु २६ वर्ष के लगभग रही होगी उस समय वे गुजरात में प्रभास क्षेत्र में रह रहे थे। उस समय उनके गुरु ने उन्हें एक विलक्षण व्यक्ति से भेट होने की बात कही थी। उनके गुरु ने उन्हें एक विशिष्ट विद्या का उपदेश भी दिया था। अतः उन्होंने गुजरात की नौकरी छोड़ दी तथा भारत भ्रमण करने लगे। इसके बाद जयपुर के एक कालेज में नौकरी कर ली। गुरु द्वारा प्रदत्त विद्या का अभ्यास करने के कारण अधिकांशतः वे कालेज विलम्ब से पहुँचते थे। एक बार उनके प्रधानाचार्य ने उन्हें टोक दिया। इस पर उन्होंने कालेज से त्याग पत्र दे दिया। यद्यपि उनके मित्रों तथा प्रधानाचार्य ने उन्हें बहुत समझाया। किन्तु सब कुछ व्यर्थ रहा। ब्रज वल्लभ नौकरी छोड़ कर कमरे पर आ गये और अपने भविष्य की चिन्ता करते हुए किये पर पछितावा करने लगे।

संयोग वश जिस मकानमें रहते थे उस मकान की बहू के माध्यम से उन्होंने सट्टेबाजी विषयक प्रयोगनिष्ठ पूजा की। फलतः वह सेठ

करोड़ों रुपये का व्यापार के माध्य से मालिक बन गया। सेठ की बहू ने पचहत्तर लाख रुपये एक बोरे में भर कर ब्रजवल्लभ दास को प्रदान किये। जिससे उनकी आर्थिक चिन्ता समाप्त हो गई। वे सम्पन्न हो गये। इसके अतिरिक्त भी बहू ने अनेक उपहार दिये तथा विश्व महान् की पदवी प्रदान की

वासना में निर्लिप्त—सम्मोहानन्द वासना में कभी लिप्त नहीं हुए। सेठ की बहू के साथ एकान्त रात्रि में एक प्रहर तक प्रतिदिन अपनी प्रयोग निष्ठ पूजा करते रहने पर भी वासना की आंधी उन्हें हिला भी न पाई। इतना ही नहीं अपने सम्मोहानन्द अवस्था में आ जाने पर अनेक प्रकार के युवक तथा युवतियां उनके ऐकान्तिक उपदेशामृत का पान करते रहे। किन्तु सम्मोहानन्द को वासना की गन्ध भी न आ सकी। उन्होंने चाहे वह नरगिस हो या सुरैया या फिर सुरानन्द सभी को भगवती को ही प्रति रूप माना। एक विश्व महान् महापुरुष के द्वारा ही इतना बड़ा त्याग किया जा सकता है। अन्यथा "ज्ञातास्वाद: जघनविवृतं को विहातुं समर्थः।" धन्य हैं सम्मोहादन्द। अवश्य ही उदात्त व्यक्तित्व समाज के लिये एक नमूना है।

धर्म के प्रति पूर्ण-आस्थावान—सम्मोहानन्द धर्म के प्रति पूर्णरूप से अस्थावान दिखाई पड़ते हैं। यदि वाराणसी के बटुक भैरव तथा काशी विश्वनाथ जी का दर्शन करना उनका लक्ष्य है तो हिंगलाज स्थित मां दुर्गा का दर्शन कर लेना भी उनका अभीष्ठ था। गुरु का सम्मान करना, उनके उपदेशामृत का पान करना तथा उनके निर्देशों का पालन करना सम्मोहानन्द का परम लक्ष्य बन गया था। उनकी प्रथम गुरु एक महिला ही थी। जिसका नाम सुरानंदा था, उन्होंने ही ब्रजवल्लभ को वह प्रयोग निष्ठ विद्या दी थी जिसके आधार पर वे विश्व महान् बने। मां सुरानन्दा के आदेश तथा निर्देश से ही उनका सम्पर्क बाद में सूर्य विज्ञान के अवस्थान भूदेव मिश्र से हुआ।

और मां सुरानन्दा ने ही उनका नाम व्रजवल्लभ से बदल कर सम्मोहानन्द रखा।

सूक्ष्म शरीर में सर्वत्र भ्रमण शील-बाबा सम्मोहानन्द अपने सूक्ष्म शरीर के द्वारा सर्वत्र भ्रमण शील हैं। यदि पोलैण्ड में प्रोजनान विश्वविद्यालय में उनकी ध्वनि सुनाई पड़ती है तो विसकूपिन में भी उनकी छाया मूर्ति पहुंच जाती है। वे अपने भक्तके स्वप्न में भी आ जाते हैं। इस प्रकार की शक्ति दैवी शक्ति ही मानी जा सकती है। उन्हें आठो सिद्धियां तथा नवो प्रकार की निधियां स्वयं ही प्राप्त हैं।

दर्शन शास्त्र के उत्कण्ट विद्वान्—बाबा सम्मोहानन्द दर्शन शास्त्र के परम विद्वान् हैं। महारास में उनके द्वारा जिज्ञासु जनों की जिज्ञासा को शान्त करने में उनके दार्शनिक ज्ञान का वास्तविक रूप दिखाई देता है। 'ब्रह्म सत्यम् जगन्मिथ्या" का उपदेश उनके उपदेशों का सार है। दर्शन की उत्कृष्टता के कारण ही वे दुर्गा तथा कृष्ण मे अन्तर नहीं मानते। कबीर के द्वारा लिखे गये 'अन्धै अन्धा ठेलिया दोनों कूप पड़न्त।" की व्याख्या वे बड़े ही विचित्र प्रकार से करते हैं।

व्यक्तित्व के सच्चे पारसी—बाबा सम्मोहानन्द व्यक्तित्व के सच्चे पारखी हैं। एक बार देखने मात्र से उनके हृदय में जो भावना आ जाती है वह प्रायः स्थायी ही रहती है। इस उपन्यास के लेखक डॉ॰ सत्यव्रत शर्मा को वे गजानन तिवारी कह कर बाद में नकछेद पण्डित कह कर साग्रह अपने समीप लाते हैं। नरगिस तथा सुरैया के व्यक्तित्व की परख बिना किसी कठिनाई से कर लेते हैं। भगवती सुरानन्दा तथा भूदेव मिश्र के व्यक्तित्व को भी बिलकुल अजान होने पर भी वे समझ लेते हैं। 'यहां तक कि वे अपने उज्ज्वल व्यक्तित्व से विपरीत धारणा वाले व्यक्तित्व को भी अनुकूलित करते दिखाई

पड़ते हैं। विरनों के बाबू सूबासिंह सम्मोहानन्द की इसी व्यक्तित्व परख के कारण ही प्रभावित रहते हैं। वे 'वर्तमान सामीप्ये वर्तमान-वद्वा' इस पाणिनी के सूत्र के सफल अनुयायी हैं।

संक्षेप में बाबा सम्मोहानन्द का व्यक्तित्व बड़ा ही महान है। लेखक ने उनके चरित्र को अतिशय उत्कृष्ट बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। वास्तव में वे अपने उज्ज्वल व्यक्तित्व के कारण ही तो ब्रजवल्लभ से बाबा सम्मोहानन्द बन गये। और उन्हीं की अन्तर्भावना से ही प्रभावित होकर लेखक ने उनके व्यक्तित्व को जनमानस तक पहुँचाने के लिये ही मानो यह साहित्य ग्रन्थ संस्मरणात्मक उपन्यास लिख डाला।

•

प्रश्न ८—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर नकछेद पण्डित' का चरित्र चित्रण कीजिए ?

उत्तर—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक संस्मरणात्मक उपन्यास में सम्मोहानन्द के बाद यदि कोई दूसरा आकर्षण पात्र है तो वह 'नकछेद पण्डित' ही हैं। लेखक ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में प्रस्तावना में प्रथम शब्द नकछेद पण्डित ही लिखा है। उसने स्वयं लिखा है— "नकछेद पण्डित के बाबा सम्मोहानन्द विषयक इस आख्यान को मैंने बड़े ध्यान से पढ़ा, अथवा 'नकछेद पण्डित मेरे अन्तरंग हैं', अथवा 'नकछेद पण्डित के आग्रह से ही यह कृति प्रकाशित की जा रही है' और 'नकछेद पण्डित' इस बात के लिये पूरे बेपरवाह हैं—कि उनकी यह रचना साहित्य की किस विधा में स्थान पायेगी। इत्यादि कथन से स्पष्ट है कि इस रचना में नकछेद पण्डित का बड़ा ही महत्व है।

उपन्यास की पृष्ठ भूमि से स्वयं ही ज्ञात हो जाता है 'नकछेद ण्डित' बाबा सम्मोहानन्द के द्वारा दिया गया उपनाम है। मुख्य नाम ारी कोई और ही है। पहले 'गजानन तिवारी' नाम दिया गया ा। जब मूल नामधारी को इसमें इतराज हुआ कि हमारा मुख आनन) तो हाथी के समान नहीं है, हाँ बकरे की सी शकल मेरी रूर है। आप मुझे अजानन कह सकते हैं।

बाबा हँसे, बोले—"तू मुझसे तर्क करता है। एकमात्र तू ही है झसे तर्क करने वाला। अब चल, मैं तुझे 'नकछेद पण्डित हा करूँगा।

इस कथोपकथन से स्पष्ट हो जाता है कि 'नकछेद पण्डित' तो ाबा सम्मोहानन्द के द्वारा दिया गया उपनाम है। मूल नाम डॉ॰ त्यव्रत शर्मा हैं। जो इस ग्रंथ के लेखक स्वयं हैं। किन्तु अपनी स्तावना में इस विषय को इतना उलझा दिया है कि स्पष्ट ही नहीं ी पाता कि स्वयं डॉ॰ सत्यव्रत शर्मा ही उपन्यास धारी नकछेद ण्डित हैं। हम यहाँ नकछेद पण्डित नाम के आधार पर ही इनकी ारित्रिक मीमांसा करेंगे।

वैदुष्य पूर्ण व्यक्तित्व—नकछेद पण्डित का व्यक्तित्व बड़ा ही दुष्य पूर्ण है। वे पाणिनीय व्याकरण के महा पण्डित हैं। हिन्दी, स्कृत, अंग्रेजी, फ्रैंच, पोलिटिम्स आदि अनेक भाषाओं पर उनका धिकार हैं। अपनी उद्‌भट विद्वत्ता के कारण ही वे भारत सरकार ी ओर से पोलैण्ड के पोजनान बिश्वविद्यालय में हिन्दी के विजिटिग ोफेसर के पंद पर अभिषिक्त हुए। अपने व्यक्तित्व की छाप प्रायः नके शिष्यों पर पड़ी तथा शिष्य मण्डली उनके उत्कृष्ट ज्ञान से रन्तर लाभान्वित हो रही है। यह गौरव उन्हें अपनी योग्यता के ारण ही प्राप्त हो रहा है। उनकी विद्वता का स्पष्ट उदाहरण

महारास शीर्षक में प्राप्त होता है। नकछेद पण्डित से जब बाबा सम्मोहानन्द महारास की भूमिका में कुछ कहने के लिये आदेशित करते हैं तो नकछेद पण्डित अपने विद्यार्थी जीवन की एक घटना का परिचय देते हुए एक विदेशी महिला की चर्चा करते हैं जो क्राइस्ट को भगवान कृष्ण से बढ़ कर मानती थी। वे स्पष्ट कहते हैं कि क्राइस्ट भगवान के अवतार हो सकते हैं, किन्तु कृष्ण भगवान ही थे।—

"येते चांशकला सर्वे कृष्णस्तु भगवान स्वयम्।" श्री मद्भागवत

नकछेद पण्डित वस्त्रापहारी, बाँसुरी वादक तथा गोचारक कृष्ण का वास्तविक स्वरूप, कालिया दमनकारी, अघासुर, बकासुर वध कर्ता तथा संसार के प्रकाण्ड राजनीतिज्ञ कृष्ण में ढूढ़ने के लिये कहते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि नकछेद पण्डित पुराण परम्परा को समालोचना की कसौटी पर कस कर कृष्ण की परम भक्ति भावना को अपने में धारण करने वाले हैं।

सुपात्र की परख करने वाले—नकछेद पण्डित किसी भी पात्र को तुरन्त समझ जाने वाले कथित हैं। सबसे पहले जब ब्रजवल्लभ दास मसानी से उनका परिचय हुआ तो एक ही दृष्टि में उन्होंने उनके विषय में जान लिया कि यह उत्तम व्यक्तित्व वाला पुरुष है। इससे सम्पर्क करना अत्यावश्यक है। परिणाम स्वरूप उन्होंने मसानी जी को ऐसा पकड़ा कि फिर पोलैण्ड में विमकूपिन में भी मसानी जी की बाबा सम्मोहानन्द के रूप में छाया मूर्ति दिखाई पड़ती रही। इसी प्रकार से उनकी घड़ी खोजना तो मात्र एक सामान्य आधार था। उसका पता चल जाय या उसका चोर पकड़ा जाय ऐसी जिज्ञासा भी उनके मन में बहुत नहीं थी। हाँ जब उन्हें विरनों के बाबू सूगा सिंह के सम्बन्ध में ज्ञात हुआ कि वे विना पूछे ही प्रश्न का सही उत्तर

देकर समस्या का समाधान करते रहते हैं तो बाबू सूबा सिंह से मिलने के लिये बलवती स्पृहा उनके अन्तःकरण में जागत हो गई और भरसक प्रयत्न करके उन्होंने सूबा सिंह को प्राप्त ही कर लिया। उनके व्यक्तित्व से आकर्षित भी हुए और सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि उन्हीं के माध्यम से उन्होंने बाबा ब्रम्मोहानन्द को प्राप्त किया।

मां छिन्नमस्ता के परम भक्त--नकछेद पण्डित मां छिन्नमस्ता के परम उपासक हैं। उनकी क्रम पूजा का ज्ञान विहार के एक प्रसिद्ध गुरु से प्राप्त हुआ था। तभी से नकछेद पण्डित छिन्नमस्ता को इष्ट देवी रूप में स्वीकार कर लिया। उनकी साधना में उन्होंने भयंकर जंगल में भटकने में कोई परवाह नहीं की। बेतिया के जंगल में आधी रात में जाना, कठोर तपस्या करना, जप का पुरश्चरण करना प्रायः साधारण साधक के वश की बात नहीं होती। नकछेद पण्डित ने सब कुछ कष्ट सहन किये किन्तु लक्ष्य से भ्रष्ट नहीं हुए। यही कारण है कि एक दिन वह आया कि वे अपने लक्ष्य को प्राप्त करके ही रहे। इस कार्य में साहस तथा निडरता का रूप प्रायः स्पष्ट हो गया है।

कर्मजयी तथा लगनशील व्यक्तित्व—नकछेद पण्डित एक कर्मजयी तथा लगन शील व्यक्तित्व वाले मनुष्य है। अपने कठोर परिश्रम के आधार पर ही उन्होंने विश्वनाथपुरी काशी में स्वाध्याय करके लखनऊ तथा अन्त में पुनः सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में एक अच्छे पद पर अलंकृत किया और बाद में भारत सरकार की ओर से विदेश गये। जहाँ भी रहे उन्होंने समय का सावधानी पूर्वक ध्यान रखा। अपनी सरकारी सेवा के साथ-साथ उनका स्वाध्याय तथा धर्म के प्रति अस्थावान बने रहने का कार्य चलता रहा। इस कार्य में उन्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। किन्तु "कार्यं वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्" की कर्मठ भावना उनके चित्त में सदा

रही। अपनी राजकीय सेवा के अवसर पर उन्होंने परिस्थितियों
जमकर मुकाबला किया। यहाँ तक कि उनका सात वर्ष का बा
भयंकर रोग शैया पर लेटा रहा, किन्तु विश्वविद्यालय की अ
ड्यूटी पर समय से जाना है। इस प्रकार का आदर्श प्रायः खो
पर भी नहीं मिलता।

जिज्ञासा की प्रबल भावना—नकछेद पण्डित के अन्दर जिज्ञा
की भावना प्रबल हैं। जिस विषय में शंका होती हैं। प्रायः उस
निवारण या समाधान चाहते हैं। यही कारण है कि नूनखार व
बाबा सम्मोहानन्द, विरनों के बाबू सूबा सिंह तथा न जाने कित
अलौकिक विद्या से सम्पन्न लोगों से उनका परिचय है। माँ हि
मस्ता की कृपा भी उन्हें इसी जिज्ञास प्रवृत्ति के कारण ही प्राप्त हु
है। संक्षेप में नकछेद पण्डित के ही चारो ओर इस उपन्यास
कथावस्तु संचरित होती है। और उन्हीं के साथ कथा का अवस
भी हो जाता है। वास्तव में नकछेद पण्डित में दैवी गुण विद्यम
है। वे ही उनके चरित्र को उच्चतम सीमा तक ले जाते हैं जिन
प्राप्ति के लिये सामान्य मनुष्य अभिलाषी रहता हैं।

☆

प्रश्न ९—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार प
विसकूपिन में वह छायामूर्ति विषय पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द' नामक संस्मरणा
उपन्यास के प्रथम शीर्षक के रूप में 'विसकूपिन में वह छाया मू
विषय प्रस्तुत किया गया है। विसकूपिन पोलैण्ड (यूरोप) में पो
नान नगर के समीप है। यह स्थान उस लूसेसियन संस्कृति

जीवन्त स्वरूप है जो ३५०० से २५०० वर्ष ईशा पूर्व आरम्भ हुई थी। यही वह स्थान है जहाँ उन लोगों ने लकड़ी के लठ्ठों का प्रयोग करके अपने सुदृढ़ निवास स्थानों का निर्माण किया था। और लकड़ी के उन्हीं मोटे-मोटे डण्डों से अपने समूह की रक्षा हेतु जल तथा थल दोनों में अद्भुत सुरक्षात्मक चहार दीवारी बनाई थी। जिसके अवशेष अपने पूरे दर्प के साथ आज भी विद्यमान हैं। इस स्थान के चारो ओर एक विस्तृत तथा गहरा जलाशय दूर-दूर तक फैला हुआ है। जिसमें सैलानी लोग दूर-दूर तक स्टीमर में बैठकर आज भी सफर करते दिखाई पड़ते हैं। एक दूर स्थित संग्रहालय तक पहुँचते हैं।

इस ग्रन्थ का लेखक जो नकछेद पण्डित उपनाम से भी जाना जाता है जब भारत सरकार की ओर से हिन्दी के विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में नियुक्त होकर यूरोप महाद्वीप के पोलैण्ड स्थित पोजनान विश्वविद्यालय में पहुँचकर अपनी योगदान आख्या प्रस्तुत करता है। संयोग से उसी समय वहाँ भयंकर वर्फ गिर जाती है। परिणाम स्वरूप 'सिर मुड़ाते ओले पड़े', वाली कहावत चरितार्थ हो जाती है। पहुँचते ही वर्फ से फिसल जाता है तथा चोट लग जाती है। काफी उपचार के बाद कष्ट से कुछ राहत मिलती है। उसे एक अच्छा सा फ्लैट जो मकान की आठवीं मंजिल पर है, मिल जाता है। और उसमें वह पहुँच कर शान्ति का अनुभव करता है। गृह स्वामिनी 'माता' यदाकदा आकर नकछेद पण्डित' का सहयोग कर देती हैं।

जब किसी समय लेखक का छात्र बात चीत के दौरान 'विसकूपिन' की चर्चा करता है तो लेखक को वहाँ पहुँचने की योजना बनानी ही पड़ती है। एक दिन लेखक उस छात्र के साथ विसकूपिन पहुँचता है। उसके साथ मकान मालकिन माता तथा उसका मित्र

वोदेक भी जाता है। कार का संचालन उनके मित्र वोदेक ही किय करते थे। वहाँ पहुँच कर लेखक ने आनन्द पूर्वक वहाँ भ्रमण किया वहांएक कमरा विश्राम के लिये निश्चित किया गया। लेखक जब उस प्रकोष्ठ के अन्दर पहुँचता है तो वहां एक जाना पहिचाना स्वर सुनाई पड़ता है। कोई कह रहा है—'ए नकछेद पण्डित'

यह स्वर बाबा सम्मोहानन्द का था। यहां तक बाबा सम्मोहानन्द आ गये। उसने घ्यान से देखा कोई रूप वहां दिखाई नहीं पड़ा। थोड़ी देर में लेखक पुनः माता के साथ बड़े ही गम्भीर भाव से चल दिया। थोड़ी देर में पुनः विश्राम प्रकोष्ठ में जब वह पहुँचता है, एक कोने में स्पष्ट रूप से एक अजीत सा झटका लगा। कमरे के भीतर बाबा सम्मोहानन्द खड़े हैं। चेहरे पर मुस्कान है। स्नेह पूर्ण दृष्टि से वे लेखक की ओर देख रहे थे। अपने स्वभाव के विपरीत कह रहे थे-- ' मुझ पर कुछ लिखोगे नहीं, "नकछेद पण्डित।"

लेखक को बड़ा ही आश्चर्य होता है वह कहता है—' अरे आप यहां ?"

इसके बाद छाया मूर्ति वहां से गायब हो गई। लेखक विचार करने लगा कि विसकूपिन नामक स्थान के एक खण्डहर हो चले मकान में बाबा सम्मोहानन्द का पहुँच जाना अवश्य ही एक आश्चर्य ही हो रहा है। किन्तु वास्तव में जो अपने चक्षुओं को खोलकर इतने जागरूक हो चुके हैं कि उनके पास देश-काल का बन्धन नहीं रहा है। एक ही क्षण में कहीं से कहीं उदित या प्रकट हो जाते हैं तथा कहीं गुप्त हो जाते हैं। सम्मोहानन्द भी इसी प्रकार की तपश्चर्या तथा आत्म चिन्तन से परिपूर्ण थे। फिर वे स्वयं को विश्व महान कहते हैं तो क्या वाराणसी अथवा नूनखार आश्रम और क्या विसकूपिन का वह पुराना झोपड़ा।'

मनस्वी तथा अत्यन्त सूक्ष्म में गये हुए बाबा सम्मोहानन्द के लिये कुछ भी असम्भव नहीं है।

"विसकूपिन में वह छायामूर्ति" विषय पर इतनी ही समीक्षा पर्याप्त लगती है।

❋

प्रश्न १०—नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द के आधार पर बिरनों के बाबू सूबा सिंह का चरित्र चित्रण करो?

उत्तर—बिरनों के बाबू सूबा सिंह "नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक उपन्यास के मुख्य पात्र हैं वे माध्यम हैं—नकछेद पण्डित को सम्मोहानन्द से मिलाने के लिए वे स्वयं ही कुछ अद्भुत गुणों से युक्त है। एक छोटे से गाँव बिरनों जो ग़ाजीपुर जनपद में है, के निवासी हैं और सामान्य कृषक हैं किन्तु उनके पास एक ऐसी दैवी शक्ति का वरदान है कि उसके शुभाशीष से, उसके प्रभाव से वे किसी का भी चोरी गया सामान बता देते हैं। कि वस्तुतः इससे कौन चुरा ले गया है, कोई भी गुप्त धन कहाँ गड़ा है, कोई बालक यदि घर से भाग गया है या खो गया है तो कहाँ गया है। इत्यादि गुणों के आधार पर हर समय उनकी पाँचो अँगुलियाँ घी में हीं रहती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि उनके पास कभी भी धन की कमी नहीं रहती, नोटों की वर्षा होती रहती है।

बाबू सूबा सिंह का चरित्र इस ग्रन्थ में एक शीर्षक के अन्तर्गत समाहित है। उनका प्राकट्य भी एक छोटी सी घटना के माध्यम से होता है। लेखक डॉ० सत्यव्रत शर्मा की लखनऊ में काम करने के समय हाथ की घड़ी खो जाती है। यद्यपि घड़ी बन्द हो गई थी किन्तु

ससुराल से प्राप्त हुई उस सोने के पानी से मण्डित घड़ी में निश्चय
भावना का आधिक्य था। उनके एक मित्र ने जब यह घटना सु
तो उन्होंने गाजीपुर के दुल्लहपुर रेलवे स्टेशन से उतर कर विर
के बाबू सूबा सिंह से मिलने की बात कही। उन्होंने कहा कि व
जाने पर दूध का दूध पानी का पानी हो जायेगा। लेखक वहां पहुं
तथा बाबू सूबा सिंह से साक्षात्कार हुआ। सूबा सिंह का चरित्र ब
ही सामान्य था। किन्तु गुणों का जो उनमें समावेश था उससे निश्च
ही सूबा सिंह आदर्श पात्र बन गये हैं।

अति साधारण रहन-सहन—बाबू सूबा सिंह अत्यन्त साधार
रहन-सहन वाले व्यक्ति थे। इस घटना के समय उनकी आयु प
पन-छप्पन की रही होगी। उनका शरीर दोहरे क़द का था तथ
अत्यन्त ग्रामीण वेष में रहते थे। उनको बाहर से देख कर कोई भ
नहीं कह सकता था कि यह व्यक्ति इस प्रकार के विचित्र चमत्कार
से युक्त है। वे अपने मुख से अपनी बड़ाई नहीं करते लेखक
मिलने पर वे स्वयं कहते हैं—"मैं ही सूबा सिंह हूँ मेरी रफ्फल खो
गई है घर-घर पूछ रहा हूँ। क्या मैं जानता नहीं हूँ। लेकिन फि
भी सब से पूछ रहा हूँ। ... ... सब जानता हूँ; लेकिन चुप
रहता हूँ।"

विनोदी स्वभाव—बाबू सूबा सिंह अत्यन्त विनोदी स्वभाव वाले
व्यक्ति हैं। लेखक से प्रथम साक्षात्कार पर ही उनके विनोदी स्वभाव
के दर्शन हो जाते हैं। सूबा सिंह कहते हैं "पिछले बार लोग बाग
मेरा आलू कोढ़ ले गये। क्या मुझे पता नहीं चला। ... ... क्या
करूँ थोड़ा मजा मुझे भी तो मिलना चाहिये।" उनके इसी विनोदी
स्वभाव के कारण लेखक उनसे आकर्षित हो जाता है।

गोपनीयता का खुलासा करने में प्रवीण—बाबू सूबा सिंह सरल

तथा विनोदी स्वभाव होने पर जो सबसे बड़ा गुण रखते हैं वह उनका अपना चमत्कार है। किसी गुप्त प्रश्न को वे तुरन्त जान लेते हैं। प्रत्येक मंगलवार को उनकी बैठक पर प्रश्न कर्ताओं का तांता लग जाता है। किन्तु वे किसी भी प्रश्न कर्ता से पूछते कुछ भी नहीं हैं उनके अन्दर ऐसा ईश्वरीय चमत्कार है कि प्रश्न कर्ता के प्रश्न को वे स्वयं जान लेते हैं और तुरन्त बाद उसका समाधान भी कर देते हैं। उस समय निश्चित ही वे किसी दैवी शक्ति से आवेष्टित हो जाते हैं। यह भी ज्ञात हो जाता है कि यह रुपया प्रश्न कर्ता के जेब से निकाला हैं या उसके साथी ने दिया है। एक दो कथोपकथन पर्याप्त होंगे—

"... ... सूबा सिंह ने मेरा अच्छत रुपया उठाया—"यह रुपया आपका तो नहीं है ? " यह रुपया तो उनका (हमारे साथी का) है।" सोखा बाबा हँसे और बोले—हमसे कुछ छिपता नहीं।" ... ... विजड़ित मुद्रा में ... ... वह जो तुम्हारा नोकर है तेरह चौदह साल का ... ... उसी ने वह घड़ी ली है।" उस समय घड़ी बन्द थी।"

"अपने तीनों नौकरों के नाम अक्षत रखिये अभी मैं टिक करता हूँ।" इस प्रकार लेखक के अक्षत अलग-अलग तीन स्थानों पर रखाने पर सूबा सिंह ने एक अक्षत पर टिक कर दिया। इस प्रकार का चमत्कार बाबू सूबा सिंह की बहुत बड़ी विशेषता थी। जो सामान्य व्यक्ति में नहीं हो पाती। लगता था उन्हें भगवती का इष्ट हो।

व्यक्तित्व के पारखी—बाबू सूबा सिंह की दूसरी बहुत बड़ी विशेषता थी, उनकी व्यक्तित्व की परख। वे किसी को भी देख कर पहिचान लेते थे कि यह किस प्रकार के व्यक्तित्व वाला पुरुष है। लेखक से वे एकदम कह उठते हैं—"श्रीमन आपने पैसे तो मुझे बहुत कम दिया लेकिन आप पता नहीं क्यों मुझे बहुत अच्छे लगे।"

थोड़ी देर में एकाएक मेरी ओर घूमे और सामान्य ढंग से देखते हुए बोले—"जब आप लखनऊ से इतनी दूर आ ही गये हैं तो नूनखार वाले बाबा से मिलते जाइये श्रीमन्!" लेखक के पूछने पर उन्होंने पुनः कहा—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" वे आपसे मिलना चाहते हैं। उनसे मिले बिना आप न लौटियेगा।

लक्ष्मी के वरद पुत्र--बाबू सूबा सिंह लक्ष्मी के वरद पुत्र हैं। लक्ष्मी की उनपर वर्षा होती रहती है। अन्दर बस्ती में उनकी कोठी है। फिर भी वे गाँव के बाहर एक कुटिया बना कर रहते हैं। हाथी की सवारी करते हैं। तथा परम भक्त हैं। अपनी गद्दी पर बैठने के पूर्व वे हाथी की परिक्रमा भी करते हैं। जब वे गद्दी पर बैठते हैं उस समय उनके ऊपर नोटों रुपयों की वर्षा होती है। वे बार-बार जेब से सभी के सामने नोट निकालते हैं और देखकर अपनी ओर प्राप्त करने की इच्छा करते हैं।

संक्षेप में इस उपन्यास में बिरनों के बाबू सूबा सिंह का चरित्र बड़ा ही उत्तम कोटि का चित्रित हुआ है। शायद उसी उत्तम कोटि की चरित्र वत्ता के कारण ही नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द स्वयं ही बाबू सूबा सिंह के व्यक्तित्व के प्रति आकर्षित हैं। जिसका उल्लेख वे लेखक से अपने माध्यम शीर्षक में भी करते हैं।

❀

प्रश्न ११—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर माँ छिन्नमस्ता की स्थिति तथा पूजा पद्धति पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द नामक संस्मरणात्मक उपन्यास में माँ छिन्नमस्ता की पूजा पद्धति का बड़ा ही सुन्दर वर्णन

प्राप्त होता है। छिन्नमस्ता माता काली का ही एक विशेष रूप माना जाय तो अत्युक्ति न होगी। इस ग्रन्थ का लेखक डॉ० सत्यव्रत शर्मा जो इस ग्रन्थ में नकछेद पण्डित के नाम से सर्वत्र जाना गया है उसका मित्र फणीश छिन्नमस्ता का उपासक है या यों कहें कि माँ छिन्नमस्ता ही उसकी इष्ट देवी हैं। माँ छिन्नमस्ता के विषय में फणीश को प्रारम्भ में एक विहार के प्रसिद्ध गुरु से ज्ञानकारी प्राप्त हुई थी। उनकी निकटता प्राप्त होने पर फणीश ने अपने पूज्य पिता जी से परामर्श करके आज्ञा प्राप्त कर उन गुरु के साथ बेतिया के जंगल में अनुगमन किया। तथा उनके द्वारा बताये गये सिद्ध मन्त्र के जप का अनुष्ठान किया। ठीक एक मास बाद उस अनुष्ठान का पुरश्चरण किया। उस पवित्र कार्य में फणीश ने जिस प्रकार निर्वाह किया तथा पूजन का विधान किया, सम्भवतः एक योग्य गुरु के बताया हुआ वही माँ छिन्नमस्ता की पूजा का विधान है। यहाँ हम उसी विधान का क्रम से वर्णन प्रस्तुत करते हुए पूजा पद्धति पर प्रकाश डालेंगे।

स्थान—माँ छिन्नमस्ता का स्थान बेतिया के जंगल में है यह स्थान भयंकर जंगल के अन्तर्गत बड़े-बड़े पेड़ों के मध्य है और एक संकेत मात्र छोटा सा मन्दिर है। जहाँ खड़ा पहाड़ी है शीघ्रता से उस पर चढ़ पाना सबके बश की बात नहीं होती। यद्यपि ऊपर चढ़ जाने पर शिखर भूमि चौरस है। उसी शिखर भूमि के एक ओर वह माँ छिन्नमस्ता का छोटा मन्दिर है। जिसे नीचे से देख पाना सम्भव नहीं लगता।

मन्दिर की विशेषतायें—मन्दिर छोटा होने पर भी बड़ा ही आकर्षक है। उसके भीतर रखे हुए तांबे के एक बहुत बड़े पात्र को पर्याप्त तेल से भरकर उसमें यदि दीप संयोजन कर दिया जाय तो उसकी बत्ती कम से कम पखवारे तक निर्विघ्न चलती रहेगी। मन्दिर

के बाहर "उञ्चासो पवन अपनी चक्रवात लीला भले ही दिखाती रहें दीपक की लौ अकम्पभाव से चलती रहती हैं। रक्तपान करती हुई वस्त्र विहीन योगिनियों के साथ माँ छिन्नमस्ता की लाल पत्थरों की छोटी सी एक बड़ी सुन्दर मूर्ति में है। सारी मूर्तियाँ लाल पत्थर के कटाव दार सहस्त्र दल कमल पर खड़ी हैं। और स्नान जल एक ओर से बह कर पूजन के पात्र में इकट्ठा हो जाता है।

जिस छोटे द्वार से झुक कर उसमें प्रवेश किया जाता है वह द्वार प्रातः कालीन पूजा के बाद बन्द कर दिया जाता है। ठीक सूर्योदय के समय उस पहाड़ी के शिखर पर एक बजते हुए घण्टे की आवाज सुनाई पड़ती है। और फिर कहीं कुछ नहीं। जैसे उस शिखर पर कुछ है ही नहीं। उस मन्दिर में देवी की प्रातः पूजा का अधिकार जंगल के पार वाले गाँव के किसी गुप्त व्यक्ति को है। पूजा करने के बाद द्वार बन्द करके वह व्यक्ति द्वार की कुंजी को एक आले में रखकर चला जाता है। उस मन्दिर की व्यवस्था का यही संक्षिप्त सा क्रम है। जो न जाने कब से चला आ रहा है। कभी कोई विरला उपासक किसी सूत्र के सहारे वहाँ पहुँचता है। वरना उस शक्ति पीठ का पता किसी को नहीं है।

पूजा पद्धति—जब कोई व्यक्ति किसी सूत्र के माध्यम से उस मन्दिर में पहुँच जाता है तो वह पूजन करता है। अर्ध रात्रि में ठीक १२ बजे उस शक्ति पीठ में भगवान शंकर की कावेरी शक्ति जागृत हो जाती है। अतः अर्द्ध रात्रि में ही पूजा करने का विधान है। सब से पहले मन्दिर के बाहर आले में रखी कुंजी से ताला खोल कर अन्दर जाना होता है। फिर एक व्याघ्र चर्म पर बैठ जाता है। दिग्बन्ध किया जाता है फिर एक खास मात्रा में तेज सुरा का पान किया जाता है। उसके साथ अल्प मात्रा में भुना हुआ मांस भी खाया जाता है। इसके बाद उसी व्याघ्र चर्म पर बैठकर एक मन्त्र का जप किया जाता है। यह कार्य लगातार एक मास तक चलता रहता है।

इसके बाद पुरश्चरण का समय आता है। प्रायः उस दिन मावश्या का होना आवश्यक है। अतः यह पूजन अमावश्या से कर अमावश्या तक ही करने का विधान है। पुरश्चरण के समय क्त चन्दन तथा रक्त पुष्पों का भी होना आवश्यक है। मन्दिर में वेश करके मूर्ति के दाहिनी ओर घी का दीपक जलाया जाता है। ाथ में लाये गये कलश जल से विधिवत मूर्तियों का स्नान कराया ाता है। तब धुले हुये वस्त्र से उनका प्रोञ्छन किया जाता है। सके बाद मद्य से मूर्तियों का स्नान कराया जाता है। साथ में कोई विशेष मन्त्र भी पढ़ा जाता है। वह मद्य बह कर एक ताम्रपात्र में कट्ठा हो जाता है। उसकी सुगन्ध सम्पूर्ण मन्दिर तथा परिसर में ैल जाती है। स्नान करा कर पुनः केवड़े का सेण्ट लगाया जाता है। इसके बाद अनेकों अगरबत्ती जला कर माँ की आरती की जाती है। इसके बाद पुष्पों तथा मालाओं से छिन्न मस्ता का शृंगार किया ाता है। फिर चांदी के कटोरे में विशेष मद्य माँ को समर्पित किया ाता है। चांदी के दूसरे छोटे पात्र में अन्य योगिनियों को भी मद्य दिया जाता है। पुनः आचमन कराकर घी के दिये से आरती उतारी ाती है। गन्ध, धूप दीप निवेदन करके भुने हुये मांस का नैवेद्य गाकर आचमन कराकर अपना मस्तक छिन्नमस्ता के चरणों मे रख दिया जाता है।

इसके बाद एकत्रित मद्य की एक विशेष मात्रा पांच बार पी जाती है। साथ में मांस का एक-एक टुकड़ा भी लेते रहते हैं। पुनः कपूर की बाती जगाकर आरती कर बाहर निकल आते हैं। इस प्रक्रिया में पैंतीस-चालीस मिनट तक लग जाता है।

पुरश्चरण का अवसान—पूजा पद्धति का पुरश्चरण बड़ा ही भयंकर तथा उसकी सम्मप्ति अत्यन्त डरावनी होती है। जो इस भाव में भी वीर भाव से बना रहकर माँ के जागृत होने पर उनके उद्योगों

से घबड़ाता नहीं है वही सिद्धी को प्राप्त करता है। जब माँ छिन्नमस्ता आती है जप का विधान बाहर किया जाता है वहीं जब माँ हाथ फैलाये उन्हें २–४ अक्षत दे दिये जाते हैं। लगातार यही होता रहता है। कुछ समय के बाद माँ प्रसन्न हो जाती है। और तब नीराजक को दुनियाँ की कोई ताकत अपने लक्ष्य से डिगा नहीं पाती। किन्तु यह मार्ग कठिन है मद्य कवि डल जी के शब्दो में।

ज्ञांन पन्थ कृपाण कै धारा।
परत खगेश होत नहि बारा॥

संक्षेप में माँ छिन्नमस्ता की पूजा पद्धति का यही विधान है।

प्रश्न १२—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर लाहिडी महाशय का चरित्र चित्रण कीजिए ?

उत्तर—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर लाहिडी महाशय का चरित्र बड़ा ही उत्तम बन पड़ा है। यद्यपि उनका वर्णन योगवश ही आया है। किन्तु उनकी चारित्रिक विशेषताओं के कारण उनकी पात्र चरित्र चित्रण में अच्छी स्थिति है। प्रस्तुत ग्रन्थ के माध्यम नामक शीर्षक में श्यामा चरण लाहिड़ी का वर्णन आया है। जब नकछेद पण्डित बाबा सम्मोहानन्द से माध्यम के विषय में पूछते हैं तो बाबा सम्मोहानन्द बताते हैं। इसी विषय क्रम में भारत की वर्तमान स्थिति के विषय में चर्चा होती है। भारत के स्वतन्त्र हो जाने पर भी छल छद्म की भावना यहाँ प्रत्येक मनुष्य में घुसी पड़ी है। कर्मचारी छल बल करके सामान्य जनता से धन खींच रहा है। ऐसे व्यक्ति समाज में बहुत थोड़े हैं जो धर्म तथा मर्यादा को लेकर चलते हैं।

इसी बात को लेकर सत्याशरण जी लाहिड़ी अपने पिता तथा पितामह श्यामाचरण लाहिड़ी के आदर्श चरित्र की एक झलक प्रस्तुत करते हैं। सत्याशरण जी ने बताया जब उनकी आयु मात्र चौदह वर्ष की थी उसी समय उनके पिता रिटायर हो चुके थे। किन्तु लोगों के बहुत बाध्य करने पर वाराणसी में ही मुंशी घाट पर रानी रास मणि के ट्रस्ट का काम धाम देखने लगे थें। शाम के समय इस कार्य के लिये अपना थोड़ा समय देते थे। फिर वहां से उठकर दशाश्वमेध घाट पर अपना कुछ समय एकान्त में बिताते थे।

एक दिन एक पोस्टकार्ड का पैसा देकर वे अपने बेटे सत्याचरण लाहिड़ी से बोले—"पोस्ट आफिस से एक पोस्ट कार्ड लेकर मेरे पास पाँच बजे तक आ जाना। जब उनके बेटे सत्याचरण लाहिड़ी पोस्ट-कार्ड लेकर कार्यालय पहुँचे तब उनके पिता बहुत व्यस्त थें। इसके बाद उन्होंने लिखा और उसे अपने बेटे को थमा कर कहा—इसे पोस्ट करके घर पहुँचो। मैं भी पहुँचता हूँ। चलते समय उन्होंने एक पैसा कार्यालय के दान पात्र में डाला तब कार्यालय बन्द किया। रात को जब उनके बालक सत्या चरण ने कौतूहल से पूछा कि पिता जी हमें आपके एक दो कार्य समझ में नहीं आये। उन्होंने पूछा—कौन से कार्य? इस पर उनके बेटे ने कहा—पिता जी! कार्यालय में बहुत पोस्टकार्ड रखे थे, उनमें से कई पोस्टकार्ड आपने प्रयोग भी किये थे। तथापि आपने एक पोस्टकार्ड पोस्ट आफिस से मंगवाया। दूसरे आपने चलते समय दानपात्र में एक पैसा डाला।

लाहिड़ी महाशय ने कहा—"बेटे! यथार्थ है। पोस्टकार्डों की वे गड्डियां अपनी नहीं थीं वे ट्रस्ट की थीं। इसी तरह वे नौकर ट्रस्ट के है। हम अपना छोटे से छोटा काम उनसे कैसे ले सकते हैं। हम उन्हें तनख्वाह तो नहीं देते? उनसे काम लेने का मतलब है बेगार कराना। यह बात तो एक दम ठीक नहीं है।

तुमने देखा था कि मैंने वहाँ की कलम स्याही तथा दावात का इस्तेमाल किया था। वहाँ के डेस्क पर मैंने लिखा था। इसलिये दान पेटी में कम से कम एक पैसा डालना तो जरूरी था।

इसके बाद सत्याशरण लाहिड़ी ने अपने पितामह श्यामाचरण लाहिड़ी का परिचय दिया। उनके पिता सरकारी नौकर थे। पूरे समय में उन्होंने अवकाश प्राप्त किया था। इसके बाद घर का खर्च चलाने के लिये ट्यूशन करने लगे थे। ठीक समय पर पहुँचते थे। बाद में काशी नरेश के विशेष आग्रह वश वे रामनगर में उन्हें जाकर संस्कृत पढ़ाने लगे थे। उस समय पुल नहीं था। नाव से जाते थे। बाद में जब बरसात के दिनों में गंगा बढ़ जाती थी तो सोमवार को जाते थे और शनिवार को लौटकर वापस आते थे। आखीर डियुटी तो डियुटी होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं लाहिड़ी महाशय का चरित्र बहुत ही उत्तम है। ऐसे ही महापुरुष देश को समुन्नति के उत्कर्ष पर ले जाते हैं। किन्तु दुःख है इस प्रकार के व्यक्ति संसार में कम ही हैं।

❋

प्रश्न १३—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर 'व्यंकटेश को यक्षिणी का शाप' विषय पर प्रकाश डालिए ?

उत्तर—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक संस्मरणात्मक उपन्यास में 'व्यंकटेश को यक्षिणी का शाप" एक घटना के रूप में चित्रित किया गया है। बाबा सम्मोहानन्द ने नकछेद पण्डित को बताया कि हमारे एक गुरु थे—माधव सम्प्रदाय के आचार्य श्री दामोदर दास गोस्वामी। वे मुझे नैषधीय चरितम् पढ़ाते थे। एक दिन

ाते समय किसी विशेष प्रसंग वश उन्होंने ही व्यंकटेश को यक्षिणी
शाप विषयक वास्तविक घटना बताई। उनके द्वारा घटना का
ोरा इस प्रकार प्राप्त होता है—

व्यंकटेश आचार्य दामोदर दास गोस्वामी का सहपाठि था। जब
नवद्वीप में न्याय का अध्ययन कर रहे थे। एक दिन वे घूमने
कले तो उन्हें एक स्थान पर एक झाड़ी से रोने की आवाज आई।
नकारी करने पर ज्ञात हुआ कि यह तो उनका सहपाठी व्यंकटेश
। बहुत कुछ पूछने पर व्यंकटेश ने बताया। 'व्यंकटेश को यक्षिणी
शाप' घटना व्यंकटेश के मुख से बताई गई घटना इस प्रकार
स्तुत है।

व्यंकटेश एक सम्पन्न घर का पलित पुत्र है। उनके पिता एक
हुत बड़े जमीदार थे। बड़ी सी कोठी। उस समय जब व्यंकटेश
आयु उन्तीष के आस पास होगी। प्राय: वह शिकार का शौकीन
। प्रतिदिन प्रात:कालीन अध्ययन समाप्त करके घोड़ की सवारी
रके शिकार के लिये निकलना उसका दैनिक कार्यक्रम बन गया
। बहुत दिन इसी प्रकार बीतते गये। एक दिन शिकार से
ौटने पर उसी शिकारी वेश में वह अपने कमरे में पहुँच गया। थका
ने के कारण बिस्तर पर लेटते ही गहरी नींद आ गई।

वैसाख मास की आमावश्या की रात्रि का घना अन्धेरा। आकाश
मात्र तारे चमक रहे थे। अर्द्ध रात्रि को अकस्मात् व्यंकटेश की
द्रा टूटी। उसे लगा आकाश मण्डल में एक अत्यन्त दीप्तिमान
रा चलता सा हैं। थोड़ी देर में ही वह तारा व्यंकटेश के समक्ष
ता दिखाई पड़ा। सामने आते ही उसमें परिवर्तन होने लगा।
े तो वह तारा शरीरधारी मानवाकृति बनाने लगा। बिलकुल
मने आने पर वह मानवाकृति एक सुन्दर स्त्री के रूप में बदल गई।

अत्यन्त सुन्दर स्त्री थी। धीरे-धीरे वह पलंग के पास आने लगी
व्यंकटेश को बड़ा आश्चर्य हो रहा था। उसने बिलकुल निकट आती
हुई उस दिव्य स्त्री से अन्त में पूछ ही दिया कि तुम कौन हो? यहाँ
एकान्त में रात में मेरे पास क्या करने आई हो?

उस दिव्यांगना ने बताया कि मैं तुम्हारी परीक्षा बहुत वर्षों से
कर रही हूँ। ऐसा कहती हुई उसने व्यंकटेश को एक चुम्बन ले
लिया। कहा—'राजवंश! मैं तुम्हारी प्रतीक्षा के दीवानी हो
गई थी। इस पर व्यंकटेश ने कहा—आप शायद भूल रही हैं
राजवंश नहीं हूँ मैं तो व्यंकटेश हूँ।

इसपर विश्वलेखा ने बताया कि तुम इस जन्म में अवश्य व्यंकटेश
हो किन्तु पिछले जन्म में तुम राजवंश थे। तुमने हमें प्राप्त करने
लिये भयंकर तपस्या की थी। मैं यक्ष लोक में निवास करने वाली
विश्वलेखा हूँ। तपस्या पूर्ण होते ही तुम्हारी अकस्मात् मृत्यु हो
थी। मैं तुम्हें पाने की स्थिति में जैसे ही आई थी तब तक तुम्हारा
शरीर छूट गया था। तुम्हारा पुनर्जन्म हुआ। मैं तुम्हें सब जगह
खोजती रही। आज तुम हमें प्राप्त हुए। चलो तुम्हें पिछले जन्म
की कामना पूर्ण करने के लिये यक्ष लोक ले चलती हूँ।

ऐसा कह कर वह व्यंकटेश को अपने साथ उड़ा ले गयी भयंकर
पर्वतीय सौन्दर्य को दिखाती हुई अपने यक्ष लोक ले गई तथा एक
सुन्दर भवन में ले जाकर सुन्दर पलंग पर लिटा दिया। वह
अकस्मात् अपनी भावना को रोक न सका तथा रतिकर्म में व्यापृत
हो गया। ब्राह्म मुहूर्त होते ही उसने व्यंकटेश को पुनः उसके भवन
में छोड़ दिया।

व्यंकटेश ने बताया कि इसके बाद से तो उसका क्रम हीबन गया
रात के बारह बजते ही वह विश्व लेखा आ जाती और २-३ घं

क उसके साथ रमण करतीं इसके बाद ब्राह्म मुहूर्त होने से कुछ हिले ही वह उसे उसके पलंग पर घर में छोड़ जाती थी।

धीरे धीरे यह क्रम चलते महीनों हो गये। व्यंकटेश दुर्बल होने लगा। डाक्टरों, हकीमों के भी समझ में नहीं आ रहा था। परिणाम स्वरूप तान्त्रिकों को बुलाना आवश्यक हो गया। व्यंकटेश के पिताजी ने वाराणसी के एक प्रसिद्ध तांत्रिक को बुलाया। उसने आकर व्यंकटेश के हाथ में एक ताबीज (मणिवन्ध) बांध दिया। दिग्वन्ध कर दिया। व्यंकटेश का मकान कील दिया गया। व्यंकटेश को किसी भी स्थिति में उसके कमरे से बाहर न जाने के लिये आदेशित कर दिया गया। इसके बाद तान्त्रिक महोदय चले गये।

रात के बारह बजते ही, पुनः व्यंकटेश की निद्रा नित्य की भांति खुल गई। कोई बुला रहा था—"व्यंकटेश नहीं राजवंश! राजवंश!!" किन्तु व्यंकटेश तो आविष्ट की तरह पड़ा था। विश्वलेखा कह रही थी—इस ताबीज को खोल कर फेंक दो। दरवाजे पर मकान में जो यन्त्र लटका रखा है, उसे उखाड़ डालो। किन्तु व्यंकटेश तो तान्त्रिक के उस तन्त्र के जाल में बंधा हुआ पाषाण खण्ड की भांति पड़ा था। हिल भी नहीं पा रहा था। खिड़की के पास आकाश में वह विश्वलेखा नाम की यक्षिणी उसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

समय बीतता गया। धीरे-धीरे वह यक्षिणी विलुप्त हो गई। तीस दिन तक वह यक्षिणी प्रतिदिन आती रही तथा मिलन की प्रतीक्षा करती रही। अन्त में वह स्वयं ही परास्त हो गई। अन्त में जाते हुए उसने इस प्रकार कहा—

"राजवंश! जा रही हूं। अतः फिर नहीं आऊंगी। पिछले

जन्म में तुमने मेरी साधना की थी और दुर्भाग्य कि सिद्धि रात्रि
ही अकस्मात् तुम्हारा देहावसान हो गया था।"" ""मैं तुम्हें मिल
चुकी थी किन्तु तुम नहीं रहे। मेरा कोई अपराध नहीं है। साध
तुमने की थी, फल तुम्हें मिला। अब मैं जा रही हूँ। किन्तु तु
जीवन भर बेचैन रहोगे। दुःख और सन्ताप के महासागर में
छोटे द्वीप की भाँति निरन्तर डूबते चले जाओगे।"" तुम जीव
भर रोते रहोगे।"

व्यंकटेश ने बताया कि इतना कह कर वह यक्षिणी लुप्त हो ग
उसके लुप्त होते ही दुःख का पहाड़ उसके ऊपर गिर पड़ा।
समय के बाद व्यंकटेश जब भी एकान्त में होता है, पीड़ा से
जाता है। और रुदन करने के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं
जाता।

इस प्रकार 'व्यंकटेश को यक्षिणी का शाप' यह घटना बड़ी
रोमांचक तथा कष्ट कर है। जिसे सुनकर कोई भी व्याकुल
बिना नहीं रह पाता।

●

प्रश्न १४--"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार
महारास का वर्णन कीजिये ?

उत्तर--"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक संस्मर
त्मक उपन्यास में महारास का बड़ा ही मनोहारी चित्रण किया ग
है। जब पटना विश्व विद्यालय की प्राध्यापिका डॉ० ज्योत्स्ना
ने बाबा सम्मोहानन्द से सत्संग के अवसर पर महारास के विषय
पूछा। तो बाबा सम्मोहानन्द ने नकछेद पण्डित की ओर सं

किया कि महारास पर पण्डित जी बोलेंगे । पण्डित ने संकोच वश इन्कार किया किन्तु बाद में महारास की मात्र भूमिका पर बोलने के लिये तैयार हो गयें । उन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन की एक घटना को बताते हुए कहा कि जिस समय वे विश्व विद्यालय में पढ़ते थे डॉ० विदोली जर्मन भाषा की शिक्षिका थीं जो भारत में भारतीय गणवेश में रहती थी। एक बार जब उन्होंने जीनस क्राइस्ट को कृष्ण से महान ठहराते हुए कृष्ण को स्त्री लम्पट बताया तो उन्हें बड़ा कष्ट हुआ।

नकछेद पण्डित ने इस बात पर विरोध किया और स्पष्ट कह दिया कि क्राइस्ट भगवान के अवतार हो सकते हैं किन्तु कृष्ण तो भगवान ही थे। आप लोग महारास रचाने वाले तथा वस्त्राधारी कृष्ण को देख रही हैं। किन्तु कालिय दमनकारी कृष्ण को नहीं देख रही हैं। कृष्ण १२० वर्ष जीवित रहे जब कि क्राइस्ट मात्र ३५ वर्ष की आयु ही प्राप्त कर सके। उपासना का स्वरूप कृष्ण ने पचुरता से बताया जब कि क्राइस्ट ने बिलकुल नहीं। इस प्रकार कहने से वह महिला नाराज हो गई तथा चली गई। इस व्यवहार से नकछेद पण्डित को बड़ा कष्ट हुआ था अतः वे अपने को अपराधी मान रहे थे। उन्होंने बाबा सम्मोहानन्द से महारास के बारे में विस्तार से बताने के लिये निवेदन किया।

बाबा सम्मोहानन्द ने नकछेद पण्डित को अपराध मुक्त बताते हुए उसी जिद्दी महिला को ही दोष दिया। जीनस क्राइस्ट को ईश्वर पुत्र मानते हुए बताया कि उनके सिद्धान्त तो कृष्ण के ही सिद्धान्त हैं। जिन्हें कुछ न कुछ परिवर्तन करके ईसाई धर्मावलम्बियों ने स्वीकार कर लिया है। वास्तव में श्री कृष्ण के चार स्वरूप हैं—प्रत्यक्ष, प्रत्यक्ष तथा मानस प्रत्यक्ष, मानस प्रत्यक्ष और अचिन्त्य।

बकासुर बध आदि कृष्ण की प्रत्यक्ष लीलायें हैं। इन्हें समस्त

भूत प्राणी देख रहे थे। पूतना तथा तृणावर्त वध प्रत्यक्ष तथा मानस प्रत्यक्ष हैं। चीर हरण तथा महारास, ब्रह्मा का मद मर्दन आदि मानस प्रत्यक्ष लीलायें हैं। भगवान व्यास ने योगस्थ होकर उनका दर्शन किया था। ये लीलायें किसी के द्वारा देखी नहीं गई थीं। श्री कृष्ण का वस्त्र रूप में परिणत होना, परम क्रोध भट्टारक महर्षि दुर्वासा की भोजन संतृप्ति, अर्जुन का विश्वरूप दर्शन आदि उनकी अचिन्त्य लीलायें हैं। भगवान व्यास ही इन गहन लीलाओं के एकमात्र साक्षी हैं।

महारास कृष्ण की विराट लीला का एक लघु चल चित्र है। भगवान व्यास के अतिरिक्त देव गन्धर्व आदि भी महारास के साक्षी हैं। उस प्रदेश पर कामदेव क्षोभ उत्पन्न करने के लिये पहले ही उपस्थित होता है किन्तु कृष्ण की रूप राशि तथा उनकी मोहक मुसकान से वह पहले ही मूर्छित हो जाता है। कामदेव के गण उसे उठाकर उस प्रदेश से बाहर ले जाते हैं। वह ऐसा प्रदेश है जहाँ कामदेव का प्रवेश नहीं है। कामदेव रास मण्डल का वहिस्कृत देवता हैं। रास मण्डल कामातीत मण्डल है। कामदेव की दुनिया सुख दुःख की दुनिया है। किन्तु रास मण्डल मानस प्रत्यक्ष आनन्द मण्डल है।

महारास एक सतत कौंध है। वह एक समयातीत आनन्द चमक है। महारास का अन्त नहीं है। वह नित्य है। महारास के बाद कुछ नहीं है। श्री कृष्ण का वंशी विनाद निरन्तर हो रहा है। रास मण्डल पार्थिव तल से ऊपर है। इसलिये रासमण्डल में गोपियों की पार्थिव उपस्थिति का कोई अर्थ नहीं है। शरीरी गोपियाँ आ कहाँ पाती हैं। वे तो रोक ली जाती हैं। वंशी गीत एक विशेष तरह का गीत है।

बात क्या है? वंशी ध्वनि किसी और को सुनाई नहीं पड़ती। वह ध्वनि उस समय पुरुषों को सुनाई नहीं दे रही। क्योंकि उनका मन श्री कृष्ण द्वारा ग्रहीत नहीं है। गोपियां ही पहुँचती हैं वह भी अशरीरी रूप में। फिर शरीरी-गोपियां भी नहीं रह जातीं। क्योंकि हर गोपी साथ वाली गोपी को कृष्ण ही समझती हैं। रास मण्डल में होते हुए भी कोई गोपी नहीं है। केवल कृष्ण। एकमात्र कृष्ण।

श्री कृष्ण निस्काम हैं। वे कामेश्वर हैं। काम उनका पुत्र है। वे प्रद्युम्न के पिता हैं। अशरीरी काम प्रद्युम्न उनका बेटा है। जैसा तुलसी ने भी कहा है—"जब जदुवंश कृष्ण अवतारा।" ...... कृष्ण तनय होइहै पति तोरा ॥" श्री कृष्ण के आनन्दमय लोक में कामदेव का प्रवेश नहीं है। 'महारास के अन्त में भगवान व्यास ने इसीलिये कहा है कि यह सारा वर्णन कामापनोदन के लिये है। इसके पढ़ने-सुनने से काम बीज दग्ध हो जाता है। दग्ध बीज में फिर कभी अकुर नहीं फूटते।

आगे महारास का वर्णन करते हुए बाबा सम्मोहानन्द बोले—कि दर असल हम 'रास पंचाध्यायी' को ध्यान से पढ़ते-सुनते कहां हैं? कीमियांगिरी का वहां प्रयोग हुआ है उसे समझने की हम कोशिश कहां करते हैं। नतीजा कुछ नहीं निकलता। श्री कृष्ण ठीक से समझ में नहीं आते। वस्त्रापहरण तथा महारास साधना के विभिन्न सोपान हैं।

श्री कृष्ण की वंशी ध्वनि से उस अनाहत नाद से शरीरस्थ काम मूर्छित होने लगता है। सुप्त तथा गुप्त शक्ति ऊपर उठने लगती है। वास्तविक प्रेम उदय होता है। वही पण्डित बन जाता है कबीर के शब्दों में—

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय ॥

पोथी पढ़ने और पण्डित बनने आशा करना ठीक उसी प्रकार है जैसे कैथ का पेड़ लगा कर आम के फल तोड़ना। इसी आशा में सब के सब समाप्त हो गये। किन्तु पण्डित नहीं बन पाये। अतः तुम प्रेमाक्षर पढ़ो। प्रेम का एक अक्षर। और फिर तुम्हारा सन्ताप मिट जायेगा। तुम पण्डित हो जाओगे।

इस प्रकार की स्थिति होने पर हमारा फिर से जन्म माना जायेगा। हम द्विज हो जाते हैं। पहले वंशी सुननी होगी फिर महा-रास और अच्छी तरह समझ में आ जायेगा।

इस प्रकार बाबा सम्मोहानन्द ने विस्तार से महारास का वर्णन किया है जो अपने में बड़ा ही बेजोड़ है।

●

प्रश्न १५—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर सूर्य विज्ञान अवस्थान भूदेव मिश्र का चित्रांकन कीजिये ?

उत्तर—'नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक संस्मरणा-त्मक उपन्यास में सूर्य विज्ञान के अवस्थान भूदेव मिश्र का मुख्य स्थान है। भूदेव मिश्र का परिचय बाबा सम्मोहानन्द की गुरु भगवती सुरानन्दा ने दिया था। उन्होंने कहा था कि "कालान्तर में तुम्हारी भेंट एक विलक्षण व्यक्ति से होगी। वर्तमान समय में भारत के उत्तरी क्षेत्र में वे सूर्य विज्ञान के अवस्थान हैं। आज कल गुप्त रूप से एक गाँव में रहते हैं। वह गाँव बनारस से १५० मील दूर है। समय पाकर अनायास ही तुम वहाँ पहुँचोगे और उनकी देह कान्ति से स्वयं ही तुम उन्हें पहिचान लोगे।"

भूदेव मिश्र का वास्तविक नाम ताराशंकर मिश्र था। भूदेव मिश्र गुरु प्रदत्त नाम है। ये ब्रिटिश शासन में स्वतन्त्रता संग्राम में कूदे और बहुत दिन तक पुलिस से बचने के लिये गुप्त रहे। इनका अध्ययन मात्र हाई स्कूल तक ही चला इसके बाद स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़े। गाजीपुर में गंगा तट पर अफीम कोठी में इन्होंने अनेक अंग्रेजों का वध कर डाला। किसी अंग्रेज को देखते ही परशुराम की भाँति वे क्रुद्ध हो जाते थे तथा तुरन्त उस पर वार करके उसका काम तमाम कर डालते थे परिणाम स्वरूप श्री ताराशंकर मिश्र को मार कर उनकी खोपड़ी को लाने के लिए बड़ा पुरस्कार रखा गया। किन्तु अंग्रेज सरकार इन्हें पकड़ न पाई। समय बढ़ता गया।

एक दिन जबकि वे गुप्त रूप से वाराणसी में रह रहे थे तथा लहुराबीर के गायत्री मन्दिर में दर्शन करने गये थे। उसी समय किसी सन्यासी ने कहा तुम्हारी गायत्री पर बड़ी श्रद्धा है। यदि गायत्री का रहस्यात्मक स्वरूप जानना हो तो हमारे पीछे चले आओ। परिणाम स्वरूप ताराशंकर मिश्र (भूदेव मिश्र) उनके पीछे-पीछे चलते हुये गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज के सरस्वती भवन के सामने से निकलते हुये उनके पीछे-पीछे वे जी० टी० रोड पर पहुँच गये। इसके बाद सड़क पार करके एक पेड़ के पास बने हुये कमरे को खोलकर जब वे सन्यासी अन्दर पहुँचे। भूदेव मिश्र भी अन्दर चले गये। सन्यासी जी उस सुन्दर सजे हुये कमरे में एक सुन्दर आसन पर आसीन हो गये और सामने ही रखी हुई कुर्सी पर बैठने का संकेत किया। भूदेव मिश्र बैठ गये। इसके बाद सन्यासी ने रत्न जटित सुन्दर दुपट्टा दिया। जिसे भूदेव मिश्र ने ओढ़ लिया। इसके बाद सन्यासी ने रत्न जड़ित गिलाश कुछ पीने के लिये दिया जिसे पीकर भूदेव मिश्र का मस्तिष्क ताजा हो गया।

इसके बाद सन्यासी जी ने सावित्री विद्या का उपदेश दिया। बड़ी

देर तक मन्त्रार्थ को स्पष्ट करते रहे। सन्यासी जी बड़े ही कान्तिमान थे। उनके ओष्ठ लाल थे। वे स्वर्णिम परिधान धारण किये थे। तथा अनेक रत्नों की अँगूठिया धारण किये हुये थे। सन्यासी जी ने हृष्ट मन्त्र साधन के लिये भूदेव मिश्र का मुँह खुलवाया। उनके मुख से निकली हुई पीली लौ युक्त किरणें भूदेव मिश्र के मुख में प्रविष्ट हो गई। जिससे भूदेव मिश्र की देहकान्ति तत्क्षण कई गुना बढ़ गई। थोड़ी देर बाद भूदेव मिश्र की आँख बन्द हो गई और वे पत्थर की भाँति निश्चेष्ट हो गये। थोड़ी देर बाद भूदेव मिश्र की आँखें खुली देखा कि गुरु जी सामने सन्तुष्ट भाव से बैठे हैं।

गुरु जी ने कहा कि मैं तुम्हे बहुत दिनों से देख रहा था। तुम अधिकारी हो। तुम्हें आज एक दुर्लभ विद्या मिली है। इस ग्रह पर एक साथ केवल पाँच व्यक्ति ही इस विद्या के जानने वाले निवास कर पाते हैं। तुम बड़े ही भाग्य शाली हो। यह तुम्हारा अन्तिम जन्म है। आज से तुम तारा शंकर मिश्र नहीं भूदेव मिश्र हो।

तुम्हारी दृढ़ काया मे इस विद्या को अनायास ही सभाँल लिया है। इससे मैं बहुत सन्तुष्ट हूँ। इस विद्या का रात के तीसरे प्रहर प्रति दिन जप करना। और प्रतिदिन दशांश हृष्ट मन्त्र का हवन करना। समय आने पर समस्त सावित्री तत्व तुम्हें स्वयं ही स्पष्ट हो जायेगा। अगली पूर्णिमा को तुम फिर आना। आज चैत्र पूर्णिमा है। वैसाख पूर्णिमा को मैं इसी समय इसी स्थान पर मिलूंगा। इसके बाद सन्यासी जी ने भूदेव मिश्र को स्वादिष्ट व्यंजन खिलाये। सुराही से स्फूर्तिमय पेय पीने को दिया। सोने वर्क से युक्त ताम्बूल बीटिका खाने को दिया। इसके बाद साष्टांग प्रणाम करके भूदेव मिश्र वहीं से चले आये।

भूदेव मिश्र को एक मास से अधिक हो गया। वैसाख पूर्णिमा की याद ही नहीं रही। पन्द्रह दिन बाद जब उन्हें याद आया तो वे

बनारस आये। चौकाघाट पार करके जी० टी० रोड पर देखने लगे। वहाँ भी वह कमरा उन्हें दिखाई नहीं पड़ा। कई लोगों से पूछा किन्तु उपहास के ही पात्र हुये। अन्त में दुखित भाव से परास्त होकर सोचने लगे-शायद गुरु ने इस विद्या को हमारे अन्दर संक्रमित करके अपने को समाप्त कर दिया।

इसके बाद भूदेव मिश्र ने स्वतः ही उस गुरु प्रदन्त विद्या का अभ्यास करना प्रारम्भ कर दिया। विद्या के प्रभाव से वैदिक मन्त्रों का स्वयं ही आभास होने लगा। यन्त्रस्थ देवता स्वयं ही दिखाई पड़ने लगे। और मन्त्रों का रहस्य खुलने लगा।

सावित्री विद्या सृष्टि विद्या है। उसको प्राप्त कर मनुष्य का फिर जन्म नहीं होता। इस विद्या को प्राप्त कर भूदेव मिश्र ब्रह्मज्ञ हो गये थे। तीन वर्ष के बाद उन्होंने एक व्यक्ति को बाबा सम्मोहानन्द के पास भेजा और कहा कि मैं आपकी प्रतीक्षा कर रहा हूं। जिस दिन बाबा सम्मोहानन्द भूदेव मिश्र के पास पहुँचे उसी दिन भूदेव मिश्र ने उस सावित्री विद्या को बाबा सम्मोहानन्द के अन्दर संक्रमित किया और समाधि पर चले गये। अपने गुरु द्वारा प्राप्त स्वर्ण जटित दुपट्टा को भी उन्होंने बाबा सम्मोहानन्द को दे दिया।

भूदेव मिश्र सावित्री विद्या का साक्षात् प्रति रूप थे। वे बहुत छिपने पर भी छिप नहीं पाते थे। दूर-दूर से उनसे मिलने तथा प्रश्न करने वाले वहाँ पहुँचते ही रहते थे। वे पहले छरहरे शरीर वाले बड़े सुन्दर व्यक्ति थे। उन्होंने स्वयं को छिपा कर रहने का भरसक प्रयास किया था किन्तु सूर्य भी क्या छिपाये छिपता है। वास्तव में वे भूदेव थे। पृथ्वी पर चलने फिरने वाले एक अलौकिक आभा संयत्र महात्मा। उनकी वाणी बड़ी बेफिक्र थी।

प्रश्न १६—"नूनखार वाले बाबा सम्मोहानन्द" के आधार पर भगवती सुरानन्दा का चरित्र चित्रण कीजिये ?

उत्तर—"नूनखारवाले बाबा सम्मोहानन्द" नामक संस्मरणात्मक उपन्यास में भगवती सुरानन्दा का विशिष्ट स्थान हैं। सबसे बड़ी बात तो यही है कि भगवती सुरानन्दा! ही इस उपन्यास के नायक की वास्तविक गुरु थी। सत्संग में चल रही वार्ता के दौरान नकछेद पण्डित ने बाबा सम्मोहानन्द से पूछा कि आपकी वार्ता से स्पष्ट होता है कि आपकी गुरु कोई महिला थी। क्या आप उन आध्यात्मिक महिला के सम्बन्ध में कुछ हमें भी बतायेंगे। इस पर बावा सम्मोहानन्द ने कहा कि हमने तुम्हें बुलाया ही इसी लिये हैं।

बावा सम्मोहानन्द ने बताया कि हमारी प्रथम भेंट भगवती सुरानन्दा से प्रभास क्षेत्र में समुद्र के किनारे स्थित भवन में हो रही आरती के समय हुई थी।

भगवती सुरानन्दा इतनी सुन्दर थी कि स्त्री वंश में भगवान श्रीकृष्ण की ही प्रति मूर्ति दिखाई पड़ती थी। वे परम शक्ति भक्त थे। उन्हीं के आग्रह पर भगवती सुरानन्दा कुछ समय के लिये वहाँ आई हुई थी. उनका प्रवचन सुनने के लिये लोग वहाँ दूर-दूर से पहुँचते रहते थे। अकस्मात किसी भी व्यक्ति को इस प्रकार से आदर भाव से वे मिलती थी। जैसे कोई उनका चिर परचित ही हो। बाबा सम्मोहानन्द को भी उन्होंने उसी आदर भाव से बिठाया था। सच्चे गुरु वास्तव में ऐसे ही होते हैं। भगवती सुरानन्दा ने बाबा सम्मोहानन्द से स्थान आदि के विषय में पूछा इतना आत्मिक भाव से मानो कोई चिर परिचित ही हो।

वे माँ सुरानन्दा के नाम से जानी जाती थीं। वे उस तारुण्य में ही सिद्धि के शिखर पर पहुँच चुकी थीं। वे ब्राह्मी भाव में प्रति-

ष्ठित थीं और उनके ज्ञान का अन्त नहीं था। माँ सुरानन्दा के सौन्दर्य की कोई तुलना नहीं थी। बाबा सम्मोहानन्द से पहली भेंट के अवसर पर इन्होंने एक धानी रंग की साड़ी पहिन रखी थी और सामान्य से आभूषण शरीर पर विराजमान थे नाक में कील कानों में कर्णफूल, कलाइयों में हल्के से सोने के कंगन और पैरों में पायजेब, आँखों में आँजन नहीं था किन्तु नेत्रों में ताजा मोतियों की आभा के साथ माणिक्य की लालिमा सी फैल रही थी। उस समय उनकी आयु उन्नीस के आस-पास थी। महाराज की विशेष इच्छा को आवाहन पर वे आई हुई थीं। वहीं सम्मोहानन्द को उन्होंने बुलाया था।

जब बाबा सम्मोहानन्द वहाँ राज भवन में पहुँचे तो वहां भयंकर अंधेरा था। किन्तु उनकी आभा से स्वयं ही प्रकाश हो रहा था। ऐश्वर्य तथा सौन्दर्य का एक़ीकृत रूप वहाँ दिखाई पड़ रहा था। माँ सुरानन्दा बाबा सम्मोहानन्द को एक सुसज्जित प्रकोष्ठ में ले गईं। इसके बाद इन्हें वहाँ अकेले छोड़ कर दूसरे प्रकोष्ठ में चली गईं। उस कक्ष को ही देख कर आभासित होता था कि माँ सुरानन्दा कला की साक्षात् प्रतिमा थीं। उनका कमरा सजा हुआ था।

भगवती सुरानन्दा थोड़ी देर में दूसरे प्रकोष्ठ से रत्न जटित एक तस्तरी और दूसरे हाथ में रत्न जटित एक पतली सुराही लेकर बाहर आईं। समस्त सामग्री को मेज पर रख कर वे एक कुर्सी पर बैठ गईं। बाबा सम्मोहानन्द को भी एक आसन पर बैठने के लिये आदेशित किया।

तस्तरी में एक सोने का कटोरा था। जिसमें किसी पक्षी का भुना मांस था। उस कटोरे के साथ दो रत्न जटित चषक रखे हुए थे। माँ सुरानन्दा ने मणिमय चषकों में सुराही से कोई पेय पदार्थ उड़ेला। एक को स्वयं लेकर पीने लगीं। दूसरे चषक को बाबा

सम्मोहानन्द को दे दिया। कटोरे में रखे हुए भुने हुए मांस की ओर संकेत करने लगीं।

थोड़ी देर बाद माँ सुरानन्दा ने कहा—व्रज वल्लभ तुम चुने गये हो। इस समय इस महाविद्या के एकमात्र अधिकारी हो। यह एक प्रयोग निष्ठ विद्या है। इस विद्या का कोई व्याख्यान नहीं होता। महाविद्या कोई किताबी चीज नहीं है। वह एक तेज है और तेज का संक्रमण होता है।

'तुम काली और कृष्ण को अलग-अलग मत समझना। वे अभिन्न हैं। कृष्ण ही काली हैं।' ऐसा कहकर माँ सुरानन्दा ने बाबा सम्मोहानन्द के चषक को पुनः पूरा भर दिया। और उसे पी जाने को कहा। उसी अवस्था में उन्होंने बाबा सम्मोहानन्द को काली का बीज मन्त्र दिया। जिसे सुनते ही बाबा सम्मोहानन्द के मूल चक्र में जगमगाते हीरे का सा प्रकाश फैल गया। इसके बाद माँ सुरानन्दा ने कहा—'व्रज वल्लभ! आज से तुम मुक्त हो गये। यत्न भर बाकी है जिसे तुम जीवन-पर्यन्त साधते रहोगे।

इसके बाद सुरानन्दा पुनः अन्दर गईं तथा एक शक्तिपात्र को लाकर बाबा सम्मोहानन्द को देकर बोलीं। कि यह परम रहस्य मय शक्ति जल है। इसे पी लो और ऊपर का वस्त्र उतार कर उस व्याघ्र के आसन पर बैठ जाओ। अपनी पूरी शक्ति से काली के बीज मंत्र का उपांशु जप करते-करते उसमें लीन हो जाओ। तुम्हें जप नहीं करना है तुम्हें जप ही हो जाना। बाबा सम्मोहानन्द जप करते रहे तथा संज्ञा शून्य वत हो गये।

थोड़ी देर में माँ सुरानन्दा ने उद्‌बुद्ध करते हुये कहा—"हमें प्रसन्नता है। तुम्हारी दीक्षा का प्रथम चरण पूरा हुआ। तुम्हारी शक्ति अब उठने लगी है। मन्त्र जप करते हुए कालान्तर में तुम्

सारी प्रक्रिया का स्वयं ज्ञान हो जायेगा। तुम जो कहोगे वही होगा। उन्हें विवाह करते की कोई आवश्यकता नहीं रह जायेगी। दूसरा चरण तीन घण्टे तक चलेगा। उसका मैं अप्रत्यक्ष भाव से निरीक्षण करूँगी।

दूसरा चरण भी सफलता पूर्वक जब पूर्ण हुआ तो मां सुरानन्दा अतिशय प्रसन्न हुई तथा बाबा सम्मोहानन्द को हृदय से लगा लिया। इसके बाद बाबा सम्मोहानन्द मां सुरानन्दा के चरणों में गिर पड़े। आशीर्वाद प्राप्त करके वे वापस आये। लौटते समय मां सुरानन्दा ने ही कहा था कि आज से पांच वर्ष बाद तुम इस वर्तमान जीवन से मुक्त हो जाना। तथा देश देशान्तरों में भ्रमण करना। तुम्हें सूर्य विज्ञान के अवस्थान, भूदेव मिश्र से मिलने का अवसर मिलेगा। आज से तुम व्रज वल्लभ न होकर बाबा सम्मोहानन्द हो।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस उपन्यास में मां सुरानन्दा का चित्रांकन बड़ा ही सुन्दर हुआ है तथा मां सुरानन्दा ही इस उपन्यास के नायक को महत्वाकांक्षा की सीढ़ी पर बैठाने वाली सच्ची गुरु हैं।

*

७ निबन्ध

१. एकता और राष्ट्रीय अखण्डता

राष्ट्रीय एकता आज समय की माँग है। हमारा इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब भारत एकताबद्ध रहा, उसने गौरव और महानता अर्जित की और उसका प्रभाव दूर-दूर तक फैला, किन्तु जब भी उसके जीवन में वैमनस्य, फुट एवं विघटनकारी प्रवृतियाँ आई, उसे अपमान और अधीनता का सामना करना पड़ा। आज जबकि दुनियाँ बहुत तेजी से आगे बढ़ रही है। हम विघटनकारी शक्तियों को प्रश्रय नहीं दे सकते, क्योंकि इस प्रकार की स्थिति पुनः हमें दासता और अधीनता की ओर ले जाएगी। हमको भूत-काल के गौरवहीन इतिहास की पुनरावृत्ति नहीं होने देना चाहिए चाहे कुछ भी और कितना भी बलिदान हमको करना पड़े।

किन्तु दुर्भाग्य से हम आज देखते हैं कि फूटकारी और विघटनकारी प्रवृत्तियाँ पुनः सिर उठा रही है। साम्प्रदायिकता जो कि हमें अंग्रेजी राज्य से विरासत में मिली, अब विभिन्न दुःखद स्वरूपों को ग्रहण कर लिया है। मुश्किल से ही कोई महीना बीतता हो कि हमको देश के किसी न किसी भाग में साम्प्रदायिक हिंसा फैलाने के समाचार न मिल जाते हों। कुछ दिशा भ्रमित सिक्खों ने नए प्रकार के साम्प्रदायवाद को जन्म दिया है। सिक्ख और हिन्दू भी जिन्होंने मिलकर देश की आजादी की खातिर बलिदान किए हैं, आज अपने को विरोधी शिविरों में पाते हैं, इस स्थिति का कारण चाहे कुछ भी हो, साम्प्रदायिक पागलपन में सैकड़ों जिन्दगियाँ हर वर्ष समाप्त हो जाती है। क्षेत्रियवाद दूसरा विघटनकारी तत्व है जिससे राष्ट्रीय एकता और प्रादेशिक अखण्डता को खतरा उत्पन्न हो गया है। यह स्थिति आज कल असम में, पंजाब, नागालैण्ड या देश के किसी अन्य भाग में है। भारत की एकता के प्रति

षड्यन्त्र करके कुछ असन्तुष्ट लोग भारत से अलग होने की धमकी देते हैं। इनमें से अधिकतर लोग विदेशी सरकारों के सम्पर्क में हैं और उनसे पैसा प्राप्त करते हैं। ये लोग अपने संकुचित स्वार्थों को देशहित के ऊपर रखते हैं वे देशद्रोही के रूप में भी कार्य करते हैं और कुछ सीमित धन की खातिर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा से सम्बन्धित गोपनीय सूचना विदेशी एजेन्सियों को भेज देते हैं। भाषावाद और जातिवाद भारत के जीवन में अन्य विघटनकारी तत्व बने हुए हैं। लोग भाषा और जाति के नाम पर एक दूसरे से लड़ेंगे और अपने जीवन की आहुति दे देंगे। यह स्थिति उन पूर्व साम्राज्यवादियों ने और अधिक ख़राब कर दी है जो कि यह नहीं चाहते हैं कि भारत प्रगति करे और मजबूत बनें। वे इस प्रकार की एजेन्सियों को धन की आपूर्ति करते हैं जो विभिन्न प्रकार की फूट भारत में डाले।

सबसे ज्यादा नुकसान भारतीय राजनीतिक जीवन की वोट को राजनीति से हो रहा है। ऐसे संकोच विहीन नेता हैं, जो कि धार्मिक या साम्प्रदायिक हिंसा भड़काने में जरा भी नहीं हिचकिचायेगें, यदि इससे उनको चुनाव जीतने में सहायता मिलती है। इन लोगों के द्वारा राजनीतिक समीकरण बैठाये जाते हैं और लोगों के विश्वास करने की भावना का अनुचित लाभ उठाया जाता है। इन स्वार्थी और संकोचविहीन राजनीतिज्ञों द्वारा ऐसे लोगों को आपस में लड़ने के लिए भड़काया जाता है। जो कि शान्ति और मित्रता से रहना चाहते हैं। हममें से बहुतों में राष्ट्रीय भावना की छवि बनी है जो कि राष्ट्रीय एकता की भावना के रास्ते में बड़ी बाधा है।

इस फिर सिरों वाले एकता हीनता के राक्षस को नियन्त्रित करना पड़ेगा यदि हमको एक गौरवशाली और प्रतिष्ठित राष्ट्र के नागरिक रूप में जीना है तो हमें अपने बच्चों और युवकों को इस प्रकार की शिक्षा प्रदान करनी है जो उनमें राष्ट्रीय दृष्टिकोण विकसित कर सकें और विभिन्न प्रकार की संकुचित, अर्थहीनता के विषय में समझा सके। हमें धर्म निरपेक्षता को सार्थकता प्रदान करनी है। एक राष्ट्रीय भाषा का विकास करना समय की माँग है। वोट की

राजनीति तो पूर्णरूपेण त्याग ही देना चाहिए। सरकार को अपना 'नरम' रुख छोड़ देना चाहिए और उन लोगों को कड़ा दण्ड देना चाहिए जो राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के विरुद्ध कार्य करते हैं। जनता की शक्ति को रचनात्मक धारा में प्रवाहित करना चाहिए और लोकतन्त्र की महत्ता लोगों के दिल और जान में उतरे। देशभक्ति हमारा धर्म बन जाना चाहिए और संकीर्णता का त्याग कर दिया जाना चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हम यह देखें कि एक स्वतन्त्र एवं उत्तरदायित्वपूर्ण प्रेस लोगों को स्वतन्त्रता की नहीं बल्कि राष्ट्रीय एकता और अखण्डता का भी संरक्षक बने। आइये, हम अपने राष्ट्र को वह गौरव और प्रतिष्ठा प्रदान करने का हर सम्भव प्रयास करें जो कि उसे प्राचीन काल में प्राप्त था।

२. भारत में लोकतन्त्र का भविष्य

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतन्त्र राष्ट्र है। लगभग ३२ करोड़ लोगों को राज्यों की विधान सभाओं और केन्द्र में लोक सभा के सदस्यों को चुनने के लिए मताधिकार प्राप्त हैं। २६ जनवरी १९५० को हमारे संविधान के लागू होने के पश्चात लोकसभा के लिए नौ और राज्य विधान सभाओं के लिए इससे भी कई अधिक बार आम चुनाव सम्पन्न हो चुके हैं। इस पूरी अवधि में लोकतान्त्रिक क्रिया-कलाप भारत में भली प्रकार होते रहे हैं, जिन्होंने भारतीय लोकतन्त्र को विश्वसनीयता प्रदान की है। जब कि हमारे पड़ोस में पश्चिम और पूरब दोनों में ही और कुछ हद तक उत्तर में भी विभिन्न प्रकार की तानाशाही का उदय होता रहा है। यह प्रवृत्ति अब भी जारी है, भारतीय लोकतन्त्र समय की कसौटी पर खरा उतरा है और इसकी लोकतान्त्रिकता की पश्चिमी देशों के बहुत से नेताओं द्वारा प्रशंसा की गई है।

भारत में लोकतन्त्र की इस सफलता के पश्चात् भी इसके विषय में संदेह एवं भय प्रकट किए गये हैं। शिक्षाविदियों का कहना है कि भारत में लोकतन्त्र की वर्तमान सफलता केवल एक अस्थाई स्थिति है। उनके अनुसार भारत ने

लम्बी अवधि तक गुलामी को सहा है, इतना कि दासता की भावना हमारी प्रतिभा और चरित्र का प्रमुख अङ्ग बन चुकी है। भारतीय राजनीति में बहुत से ऐसे तत्व हैं जो भारत को पुनः गुलामी की ओर जाने से मजबूर कर देंगे साम्प्रदायवाद भारत में इतना गहरा समाया हुआ है ? और वह लोकतन्त्र की आत्मा का भाग्राहय है, भारत में बेहद गरीबी है और गरीबी और निर्धनता लोकतन्त्र एवं लोकतान्त्रिक परम्पराओं के विकास के लिए स्वास्थ्यप्रद नहीं है। क्या इन नागरिकों के जीवन में लोकतान्त्रिक तरीका समा सकता है जो कि घोर सामाजिक और आर्थिक असमानताओं के शिकार हैं। जातिवाद और प्रांतवाद भी ऐसे तत्व हैं जो कि भारत में लोकतन्त्र के जिन्दा रहने तक के लिए खतरा बने हुए हैं। उसके अतिरिक्त निराशावादियों का यह भी कहना है कि भारतीयों को पर्याप्त राजनीतिक प्रशिक्षण भी प्राप्त नहीं है वे मुश्किल से ही यह जानते हैं कि मताधिकार का प्रयोग कैसे किया जाता है वे धन के प्रभाव से अपने को मुक्त नहीं रख पाते जिसकी भारतीय चुनावों में बहुत बड़ी भूमिका है। चुनाव शायद ही कभी स्वच्छ होते हैं। चुनावों में जीत प्राप्त नहीं की जाती है बल्कि हथकंडे अपनाकर चुनाव की जीत सुनिश्चित की जाती है। भारत में एक बहुदलीय प्रणाली है और जो दल चुनावों के बाद सत्ता में आता है वह मुश्किल से देश की एक तिहाई जनता का प्रतिनिधित्व करता है। सच्चा लोकतन्त्र तो वह है जिसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रत्येक का प्रतिनिधित्व है। भारतीय लोकतन्त्र को कुछ बाहरी देशों से भी खतरा बना रहता है। जो कि विभिन्न तरीकों से लोकतन्त्र को तोड़ने और नष्ट करने आमादा पर रहता है। क्या लोकतन्त्र के रूप में भारत इस खतरे का मुकाबला कर सकेगा ?

हमारी दृष्टि से ये संदेह एवं भय गलत आधार पर टिके हैं। वे केवल उन प्रलय के पैगम्बरों की अभिव्यक्ति है जो कि चीजों के ऋणात्मक पहलू को ही दृष्टिगत करते हैं। भारतीय लोकतन्त्र ने एक अन्य प्रकार की जीवन्तता प्रदर्शित की है। नौ आम चुनावों का लगभग शांतिपूर्वक सम्पन्न हो जाना एवं

सरकारों के शक्तिमय परिवर्तनों से इन निराशावादियों का सन्देह समाप्त हो जाना चाहिए। भारतीय जनता निरक्षर हो सकती हैं, किन्तु उसने उच्च प्रकार की बुद्धिमता का परिचय तब दिया जब उसने उन शक्तियों को उखाड़ फेंका जो कि लोकतन्त्र को नष्ट करना चाहती थी और तानाशाही की स्थापना करना चाहती थी। इसके अलावा भारत से निरक्षरता को समाप्त का हर सम्भव प्रयास किया जा रहा है। हम बहुत दिनों तक गुलाम रहे हो सकते हैं किन्तु साथ ही यह भी समान रूप से सत्य है कि हमारे यहाँ बहुत लम्बे समय लोकतान्त्रिक से है। यह सही है कि जनता की घोर निर्धनता लोकतन्त्र के विकास के लिए ऋणात्मक एवं बाधा तत्व है किन्तु समान रूप से यह भी सत्य है कि सम्पन्नता के रास्ते पर हम काफी चल आये हैं। १९९० का भारत १९३७ के भारत से कहीं भिन्न है। और वह विश्व के औद्योगिक देशों में से एक होने का दावा कर सकता है। विज्ञान और तकनीकी का उपयोग, जनत को निर्धनता के कीचड़ से बाहर निकालने और उसे उत्तम जीवन की उज्जवल धूप में लाने के लिए किया जा रहा है। हमारी पंचवर्षीय योजनायें जिसमें मिश्रीत अर्थव्यवस्था पर बल है। और असमानता और निर्धनता को समाप्त करने के लिए कृत संकल्प है। जनता में राष्ट्रीयता की भावना का संचार करने और राष्ट्रीय एकता और प्रादेशिक अखण्डता को बनाए रखने की इच्छा उत्पन्न करने हेतु नई शिक्षा निती रूप धारण कर चुकी है और इसका लक्ष्य जनता में राष्ट्रप्रेम की भावना पैदा करना और राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को बनाए रखने की इच्छा का विकास करना है। हमें व्यवहार मेंह दिखा देना है कि नकारात्मक शक्तियों का हम पर नियन्त्रण नहीं होगा और हम देश तथा राष्ट्र के सन्दर्भ में ही सोचेगें। हमें विदेशी तोड़फोड़ से सावधान रहना है और इसके लिए हम अपने को हर प्रकार से शक्तिशाली बना रहे हैं। बहुदलीय प्रणाली से भारतीय राजनीति में एक अजीब आकर्षण है, न कि यह लोकतन्त्र के लिए कोई खतरा है। हमारा स्वतन्त्र देश लोकतन्त्र का सजग पहरेदार है और जनता के हाथ में तानाशाही की शक्तियों से जूझने

के लिए शसक्त हथियार है। भारत का महान लोकतन्त्र का एक मजबूत बाँध हैं। कौन नहीं जानता कि हमने अनेक बार अस्थिरता पैदा करने वाली शक्तियों पर विजय पाई है। भारत में लोकतन्त्र का भविष्य बहुत उज्जवल है।

३. कुटीर उद्योग

कुटीर उद्योग वह उद्योग है जो पूर्ण रूप से या प्रमुख रूप से परिवार के सदस्यों द्वारा पूर्ण समय या आंशिक समय में व्यवसाय के रूप में चलाया जाता है। लघु उद्योग कई प्रकार के हैं प्रथम श्रेणी के उद्योग काश्तकार को एक व्यवसाय प्रदान करते हैं जैसे—हथकरघा कपड़ा बुनना, डलिया बनाना, रस्सा बनाना, आदि।

दूसरी श्रेणी के उद्योग ग्रामीण क्राफ्टज आते हैं। जैसे—लोहारगिरी, बढ़ईगिरी, घानियों के द्वारा तेल निकालना, मिट्टी के बर्तन बनाना, ग्राम चमड़ा बनाना उद्योग आदि।

तीसरी श्रेणी के उद्योग शहरी क्षेत्रों में उनमें लगे श्रमिकों को पूर्ण कालिक रोजगार प्रदान करते हैं। जैसे—लकड़ी और हाथदाँत पर काशीदाकारी, खिलौना बनाना, स्वर्ण एवं चाँदी के तार बनाना आदि। भारत जैसे कम विकसित देशों में लघु कुटीर एवं कुटीर उद्योगों का विकास एवं प्रोत्साहन देने हेतु कार्य बहुत मजबूत है।

कुटीर उद्योग की स्थापना हेतु तर्क :—

प्रथम—कुटीर उद्योग श्रम साधन होते हैं। कुटीर उद्योगों में विनियोग की गई राशि भारी उद्योगों में लगी बराबर राशि से अधिक लोगों को रोज-

गार प्रदान कर सकती है। भारत जैसे देश में जहाँ आंशिक रोजगार युक्त या बेरोजगार लोगों की संख्या बहुत अधिक है, यह विचार की बात है।

द्वितीय—सामान तैयार करने के लिए कुटीर उद्योगों को कम पूंजी विनियोग की आवश्यकता पड़ती है। उनको पूंजी सरल कहा जा सकता है। इस प्रकार पूंजी के प्रयोग में कुटीर उद्योगों को मितव्ययतायें करना सम्भव है। क्योंकि भारत जैसे अर्थविकसित या विकासशील देश में पूंजी की कमी है, कुटीर उद्योगों से औद्योगीकरण की दिशा में बहुत मदद मिलेगी, यदि अधिक-से-अधिक संख्या में स्थापित किया जाय।

तृतीय—पूंजी के प्रयोग में नियमितताओं के अतिरिक्त कुटीर उद्योग से ऐसी पूंजी का सृजन हो सकता है। जो कि अन्यथा अस्तित्व में नहीं आती है। ग्रामों में कुटीर उद्योग का फैलाव लोगों में मितव्यता एवं विनियोग की भावना को प्रोत्साहित करेगा। छोटे-छोटे उद्योगो अपने मित्रों की सहायता से पूंजी की व्यवस्था करेंगे।

चतुर्थ—कुटीर उद्योग के दक्षता सरल होते हैं। भारी उद्योगों में तरह-तरह के दक्ष फोरमैन, इन्जीनियरों आदि के भारी तामझाम की आवश्यकता पड़ती है। पूंजी की भाँति इन दक्षताओं की भी हमारे देश में बहुत कमी है और यह आवश्यक है कि इनके प्रयोग में किफायत बरती जाय।

पंचम—कुटीर उद्योग भारी उद्योगों की अपेक्षा आयतित मशीनरी आदि पर निर्भर रहते हैं भारी उद्योगों में इन सामानों और मशीनरियों के आयात की आवश्यकता पड़ती है। जिसके कारण भुगतान सन्तुलन की स्थिति अल्पवस्थित हो जाती है। इसके अलावा कुटीर उद्योगों में बहुत समय लगता है।

षष्ठम—कुटीर उद्योग में धन एवं आर्थिक शक्ति में कुछ ही हाथों में केन्द्रित होने की सम्भावना कम रहती है। इनसे आय एवं धन का अधिक समान एवं न्यायोचित वितरण सम्भव होता है। भारी उद्योगों में आय एवं धन कुछ ही हाथों में केन्द्रित होने की प्रवृत्ति होती है जो कि समता पर आधारित समाज की स्थापना के ही विपरीत है।

कठिनाइयाँ—(i) कुटीर उद्योग श्रमिक निरक्षरता एवं अज्ञानता के कारण एवं पुराने तौर-तरीकों के प्रयोग के कारण कम कुशल हैं। (ii) वे सामान्यतः बहुत गरीब हैं और उनकी सस्ती पूर्ण सुविधाएँ भी प्राप्त नहीं हैं। (iii) संगठित विपणन के व्यवस्था के अभाव में असहाय कारीगरों को अपने सामान को बेचने के लिए बिचौलियों पर निर्भर रहना पड़ना है। (iv) कुटीर उद्योगों की मशीनरी और साज-समान की अपर्याप्त आपूर्ति है।

सुझाव—भारत के औद्योगिक ढाँचे में इनके महत्वपूर्ण स्थान को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यक है कि वर्तमान कमियों को ठीक करने और मुख्य कठिनाइयों को दूर करने के लिए उपयुक्त कदम उठाने चाहिए। (i) कारीगरों को उत्पादन के लिए नये और किफायती तरीकों की जानकारी करायी जानी चाहिए। (ii) उपयुक्त उपमा द्वारा अच्छे कच्चे सामानों की पूर्ति सुनिश्चित की जानी चाहिए। (iii) आसान किस्तों पर सामान की आपूर्ति उपलब्ध कराई जानी चाहिए। (iv) लघु उद्योगों द्वारा निर्मित सामान की उचित बिक्री के लिए प्रयास किये जाने चाहिए। (v) कुटीर उद्योग बड़े उद्योगों के पूरक होने चाहिए।

इन सुझावों को व्यवहार में परिवर्तित करने और उनको सारयुक्त बनाने हेतु तीन चीजें आवश्यक हैं—(i) लघु एवं कुटीर उद्योगों के क्षेत्र में सहकारिता के सिद्धान्त को अंगीकृत करना। (ii) राजकीय सहायता की एक कारण नीति। (iii) जनता में स्वदेशी भावना का प्रोत्साहन। (iv) कुटीर उद्योगों द्वारा निर्मित सामान की गुणवत्ता में सुधार। सन्तोष का विषय है कि सरकार कुटीर उद्योगों के विकास को आवश्यकता के प्रति सजग है और विभिन्न योजनाओं में इसके लिए राजकीय प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए कदम उठाये गये हैं। इनको और अधिक सार्थक बनाया जाना चाहिए। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि निर्धनता से हमारी मुक्ति बड़ी सीमा तक कुटीर उद्योग को एक शत प्रतिशत सफल आन्दोलन बनाने पर निर्भर करती है।

४. विश्व-शान्ति की समस्या

आजकल विश्व एक गम्भीर संकट से गुजर रहा है। युद्ध का खतरा डिमोक्लीज की तलवार की तरह मानव जाति के सिर पर लटक रहा मानव जाति ने बड़े कष्ट और दुःख कठिन परीक्षाओं एवं तकलीफों का सामना किया है। वह शान्ति के पीछे भागती रही है। जो कि इसके पकड़ में नहीं आती। शान्ति बहुत महान चीज है जिसको मानवता चाहती है क्योंकि इसके बिना मुक्ति नहीं है। युद्ध के विनाशकारी शस्त्र विशेषकर नाभिकीय शस्त्रों के आविष्कार एवं भण्डारण इस पृथ्वी पर मानव जाति के अस्तित्व के लिए एक वास्तविक खतरा बने हुए हैं।

विश्व शान्ति की समस्या हमारे युग के लिए नई नहीं है यह तो यहाँ हमेशा रही है और राजनीतिज्ञ एवं विद्वान निरन्तर इसके समाधान के लिए प्रयास कर रहे हैं। बहुत से पाश्चात्य दार्शनिकों ने विश्व राज्य या विश्व सरकार की स्थापना की आवश्यकता पर जोर दिया है। इनकी दृष्टि में विश्व राज्य या विश्व सरकार मानव जाति की विभिन्न इकाइयों को, जिनको राष्ट्र कहा जाता है एक दूसरे का आदर करने हेतु अनुशासित करेगी। यह सबको न्याय प्रदान करने हेतु कार्य करेगी। एक देश दूसरे देश के खिलाफ शिकायतें ले जा सकें और वातचीत, मध्यस्थता और पंच फैसले के द्वारा समाधान पा सकें। १९११ एवं १९०७ आयोजित देश सम्मेलन स्थाई आधार पर शक्ति स्थापित करने की दिशा में प्रयास कर सकें।

१९१९ का पेरिस समझौता और इसका लिंक लिग ऑफ नेशनल मानव जाति को युद्ध के विनाश से बचाने के प्रयत्न किए जा रहे हैं। किन्तु सफलता बराबर हाथ आने से कतराती रही समस्त विश्व द्वितीय युद्ध की लपटों में फँस गया। इस युद्ध में लगभग दो करोड़ लोग मारे गए और इससे अधिक घायल हुए।

तृतीय विश्व युद्ध स्वाभाविक रूप से अधिक विनाशकारी होगा कि यह पृथ्वी से सभ्यता के प्रत्येक चिन्ह को समाप्त कर देगा क्योंकि नाभिकीय

क्तियों के शास्त्रों में इनसे भी अधिक विनाशकारी हथियार हैं तृतीय विश्व-
द्ध होने की आशा में न तो कोई विजेता रहेगा न विजित क्योंकि प्रत्येक का
खद अन्त हो जाएगा। क्या हम रूककर ऐसे उपाय नहीं सोच सकते हैं
सिसे कि तृतीय विश्व युद्ध रोका जाय हम उन कारणों की तलाश करें जिनसे
तीय विश्व युद्ध छिड़ सकता है प्रथम संकुचित राष्ट्रवाद अब भी विभिन्न
ष्ट्रों के लोगों के स्वभाव और विचार का अङ्ग है। वे अपना वैभव दूसरे
कीमत पर बढ़ाने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ेगें। ऐसा वे युद्ध के द्वारा
र सकते हैं द्वितीय वैचारिक राजनीतिक मतभेद जो कि विभिन्न राष्ट्रों के
च हैं वे युद्ध की धमकी बराबर बने हुए हैं। विश्व दो गुटों में बटा हुआ है।
स के नेतृत्ववाला पूर्वी साम्यवादी गुट और यू० एस० ए० के नेतृत्ववाला
श्चिमी लोकतांत्रिक गुट। दोनों अपने-अपने प्रकार की वैचारिक प्रजा को सारे
श्व में फैलाना चाहते हैं। इसके लिए वे युद्ध भी कर सकते हैं। जबकी दोनों
शास्त्रागारों में नाभिकीय अस्त्र जमा है। क्या दोनों महाशक्तियों के बीच का
र्ष केवल सीमित क्षेत्र के अन्तर्गत सीमित रहेगा। आज की दुनियां में प्रवृ[illegible]
ह है कि विश्व के किसी भी भाग में प्रारम्भ हुआ युद्ध एक खूनी और पूर्ण
कसित युद्ध के रूप में परिवर्तित हो सकता है। रङ्ग भेद नीतियां विश्व के
छ हिस्सों में अपनाई जाने वाली जातीय भेदभाव की नीति भी शांति के लिए
तरा है। यह विश्वास भी है। युद्ध से ही विवादों को तय किया जा सकता
चिन्ता का अन्य कारण है यदि हम पृथ्वी पर वास्तव में शांति चाहते हैं तो
श्वशांति के लिए इन खतरों को दूर करना होगा यह कार्य सम्पन्न करने के
ये संयुक्त राष्ट्र संघ को मजबूत करना होगा। क्या यही अच्छा हो कि विश्व
रकार या विश्व राज्य की पूर्व संस्था के रूप में कार्य करें क्योंकि इसकी
ापना से ही हमारी इस पृथ्वी पर स्थाई शांति सुनिश्चित की जा सकती है।

५. विश्व-शांति के लिए भारत की देन

भारत को शक्ति और देशों को शांतिमय सह-अस्तित्व में विश्वास है।
सका प्राचीन भूतकाल इस बात का साक्षी है कि उसने सदैव प्रथम प्रथलता,

भौतिक वस्तुओं को न देकर मानव को दी। उसकी स्वार्थरहितता, बलिदान और त्याग मानववाद और विश्वास की परम्परायें हैं। वह शांति के खोज की, धार्मिक पुरुषों और उन लोगों का जो मानव जाति को प्रलोभन, लालच और कुबेर की पंजों से मुक्त करना चाहते थे, निवास स्थान थे हमारे भूतकाल की ये परम्परायें आज वर्तमान तक कुछ हद तक जिन्दा है और भारत समस्त मानव जाति के लिए शांति दूत देने का दावा कर सकता है। बात यह है कि भारत ने शायद ही कभी आक्रमण की लड़ाइयाँ लड़ी हों. निःसन्देह भारत के पास शक्ति-शाली सशस्त्र सेनायें थी किन्तु उनका कर्म मातृभूमि की रक्षा तक ही सीमित था। भारत ने तत्परता से दूसरे लोगों की आजादी का आदर किया।

आधुनिक युग में भारत ने विश्व शाति को अपूर्व योगदान दिया है। यदि भारत का प्रयास न रहे तो तृतीय विश्व युद्ध हो गया होता। स्वतन्त्रता प्राप्त करने से पूर्व ही भारत के नेताओं ने शांति एवं राष्ट्रों के बीच सम्मान जनक सम्बन्धों की वकालत की। उसने लोग के पक्ष का समर्थन किया जो कि जाति रङ्ग की नीति अपनाने वाले आक्रमणकारी एवं साम्राज्यवादियों के षड़यन्त्रों के शिकार हो गये थे। भारत, चीन के साथ शांति के पाँच सिद्धांतों जिनको पंचशील के नाम से पुकारा जाता है उनका प्रतिपादन किया। कुछ सम्मेलनो द्वारा जिन सिद्धांतों को प्रतिवाद किया जाये शक्ति के सिद्धांत थे। उसने नेपाल के साथ मित्रतापूर्वक सम्बन्ध बनाए रखने के लिये प्रयास किया है और उस देश के विकास के लिये उसके साथ सहयोग किया है। उसके साथ सभी विवादों को शांतिमय तरीकों को सुलझाया गया है इस प्रकार अपने पड़ोसियों के साथ सम्बन्धों चाहे वे बड़े देश हों या छोटे देश, उसने समन्वय एवं सहयोग सद्‌भावना का, न कि संघर्ष, अविश्वास और सन्देह का रास्ता अपनाया है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के विस्तृत क्षेत्र में भारत ने शांत निर्माता की भूमिका निभाई है। गुट निरपेक्षता की नीति अपनाकर उसने दोनों शक्ति गुटों

के बीच पुल बनाने का प्रयास किया है और यह कोशिश की है कि महाशक्तियों के बीच समझौते की भावना प्रबल हो। उसी की पहल एवं रूची के कारण आज गुट निरपेक्ष महान शक्ति बन कर सामने आया है। गुट निरपेक्ष राष्ट्र के रूप में भारत ने शांति के ढांचे को मजबूत किया है। दुनियां के किसी भी काम में अन्याय और शोषण की घटनाओं के प्रति निर्मम रूख अपनाकर उसने अधिकांश देशों का सम्मान अर्जित किया है। गुट निरपेक्ष राष्ट्र के रूप में उसने किसी भी महाशक्ति के द्वारा किये आक्रमण युद्धों की निन्दा की है।

इस प्रकार उसने रूस द्वारा हंगरी और जेकोस्लावाकया के ऊपर किये गये हमले को इण्डो चीन में अमरीका के हस्तक्षेप की और अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप की निन्दा की।

उसने सन् १९६२ में केरीबियन संकट के समय विश्व विनाश के बादलों को टालने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। चीन से सीमा समस्या के होते हुए भी उसने उस देश को संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रवेश देने की बराबर वकालत की। युद्ध की धमकी को समाप्त करने के लिए भागीरथी प्रयत्न करता रहा है। उसने रङ्गभेद नीति, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, नव-उपनिवेशवाद एक देश के द्वारा दूसरे देश का आर्थिक शोषण और मानव जाति पर किये गये किसी भी प्रकार के अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई है। उसने फिलीस्तीनियों की ग्रह राष्ट्र के विषय को समर्थन प्रदान किया और ईरान, इराक युद्ध का अन्त करने के लिए बहुत प्रयत्न किया है, इस प्रकार भारत ने विश्व शांति के लिये बहुत देन दी है एवं इस नींव को पोषित करने का-प्रयास किया है। जिस पर विश्व शांति का भवन खड़ा होगा।

६. भारत में दूरदर्शन का सामाजिक महत्व

दूरदर्शन विज्ञान के अत्यन्त मनमोहक आविष्कारों में से एक है। वायरलेस और रेडियो को विज्ञान के महान चमत्कारों में गिना जाता था। हजारों मील पार से आवाज सुनकर लोगों में सनसनी पैदा हो जाती थी और वे आश्चर्य करते थे कि ऐसा सम्भव हो सकता है। किन्तु जब दूरदर्शन के पर्दे पर सैकड़ों

मील दूर से मनुष्य की आवाज के साथ इसकी तस्वीर भी दिखाई पड़ने लगी हमारे आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा और यह निःसन्देह ही सिद्ध हो गया कि मनुष्य की आविष्कार करने की शक्ति पर कोई सीमा नहीं लगाई जा सकती ।

दूरदर्शन ने पूरे विश्व में जीवन में क्रांति ला दी है । अन्य देशों में तो लगभग प्रत्येक घर में टेलीविजन सेट है । वहाँ पर ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीविजन देखने की सुविधा प्रदान कर दी गई है । भारत में दूरदर्शन की स्थापना १ सितम्बर १९५९ को हुई । छठीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक भारत में लगभग १८० दूरदर्शन केंद्र स्थापित किये जा चुके थे । १८० केन्द्रों के स्थापित हो जाने पर भी भारत की जनता का एक बहुत बड़ा भाग अब भी उस आनन्द और मनोरञ्जन तथा सुचना से वंचित है जो कि विज्ञान के ऐसे चमत्कारिक आविष्कार के कारण हमें उपलब्ध है । हमारी सरकार को कम से कम समय में दूरदर्शन प्रत्येक घर में पहुँचाने का प्रयास करना चाहिए ।

भारत में दूरदर्शन का बड़ा सामाजिक महत्व है । हमको दूरदर्शन स्टेशनों का जाल बिछाना होगा । शीघ्र से शीघ्र समस्त जनता तक टेलीविजन पहुँचाना होगा । टेलीविजन मनोरञ्जन का अच्छा साधन है । यह जन संचार के बहुत ही प्रभावी साधनों में से है । यह वांछित तरीके से जनता को शिक्षित भी कर सकती है । खेतों में ऊपज बढ़ाने के लिए खेती के आधुनिकतम तरीके के प्रचार में टेलीविजन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है । अनाज के भण्डार, बागवानी, पशुपालन रेशम के कीड़ों का पालना, बी कीपिंग, सफाई, रोगों के इलाज के लिए सादा घरेलू नुस्खे, परिवार नियोजन के तरीके आदि विषयों में जानकारी उपलब्ध कराई जा सकती है । नाटकों, प्रियजनों के द्वारा टेलीविजन बहुत प्रभावी ढंग से उन बहुत सी सामाजिक बुराइयों को दूर करने में सहायता कर सकता है । जिन्होंने भारत समाज को खोखला कर रखा है कुटीर एवं लघु उद्योग के लिए आधुनिकतम तकनीकी का प्रचार टेलीविजन की सहायता से किया जा सकता है । और लोगों में जोखिम उठाने की भावना

को प्रोत्साहित करके देश के अधिक से अधिक औद्योगीकरण के लिए वातावरण पैदा किया जा सकता है।

टेलीविजन शैक्षिक महत्व तो स्वयं स्पष्ट है टेलीविजन स्कूलों और कालेजों के लिए विभिन्न विषयों पर कार्यक्रम प्रसारित कर अध्यापक के बोझ को हल्का कर सकता है, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों प्रकार के रोजमर्रा के समाचारों की जानकारी टेलीविजन बराबर दे सकता है। टेलीविजन अभि-प्रेरणा की बहुत सी प्रभावी भूमिका अदा कर सकता है। जब हम अपनी आँखों से बड़े लोगों को बड़े कार्य करते हुए देखते तो उसी प्रकार के बड़े कार्य करने की हमारी महत्वकांक्षायें जाग जाता है। अतः स्पष्ट है कि भारत में टेलीविजन का बड़ा सामाजिक महत्व है।

७. भारत में दहेज प्रथा

दहेज प्रथा भारत में बहुत बड़ी सामाजिक बुराइयों में से एक है। आए दिन दहेज के कारण मृत्यु के समाचार सुनने को मिलते हैं। इस दहेज के राक्षस द्वारा माता-पिताओं की बहुत सी बेटियाँ उनसे छीन ली जाती हैं। हमारे समाज में प्रचलित भ्रष्टाचार के कारणों में से अधिकांश दहेज का कारण है। लोग गैर कानूनी रूप से धन संचय करते हैं। क्योंकि उन्हें अपनी पुत्रियों की शादी में दहेज पर खर्च वहन करना पड़ता है। यह बुराई समाज को खोखला कर रही है और वास्तविक प्रगति अवरुद्ध हो गई है।

दहेज प्रथा वर्तमान भारतीय समाज की ही प्रथा नहीं है। यह हमें हमारे भूतकाल से विरासत में मिली है। हमारी पुराण कथाओं में माता-पिता द्वारा अपनी पुत्रियों को अच्छा दहेज दिये जाने का उल्लेख है। सेल्यूकस से निकेतर में चन्द्रगुप्त मौर्य को अपनी पुत्री के विवाह में समाजों के अतिरिक्त लगभग सभी समाजों में यह प्रथा प्रचलित है।

वास्तव में देखा जाय तो प्रथा में कोई खराबी नहीं है। यदि इसको सीमा के अन्तर्गत रखा जाय तो यह स्वस्थ रिवाज है। नकदी या उपहार के

रूप नव विवाहित दम्पति को जो कुछ दिया जाता है उससे वे असानी से अपना जीवन प्रारम्भ कर सकते हैं। किन्तु समस्त बोझ लड़की के माता-पिता ही क्यों उठाए ? जबकी पहले दहेज प्रेम और स्नेह का प्रतीक था। अब तो यह व्यापार या सौदेबाजी हो गई है। सभी भावनात्मक पहलुओं को समाप्त कर इसने निन्दनीय भौतिकवादी रूप ग्रहण कर लिया है। घृणास्पद्र बुराई के द्वारा भारतीय समाज के भवन को ही खतरा पैदा हो गया है।

भारतीय समाज में इस प्रथा के प्रचलन का पहला कारण महिलाओं की पुरुषों पर आर्थिक निर्भरता है। आए पति इनकी कीमत अपनी पत्नी के माता-पिताओं से मांगता है। दूसरे महिलाओं को समाज में निम्न स्तर प्रदान किया जाता है। उनको समझा जाता है। इसके अतिरिक्त भारतीय समाज में कौमार्य पवित्रता पर बहुत बल दिया गया है। भारतीय माता-पिता की अपनी पुत्री का विवाह एक विशेष समय पर किसी उपयुक्त लड़के के साथ करना होता है। चाहे कितना ही मूल्य देना पड़े। उन्हें भय रहता है कि विवाह बिना एक विशेष आयु से उपर जाने में कौमार्य नष्ट किया जा सकता है। लड़के के माता पिता इसी मजबूरी का अनुचित लाभ उठाते हैं। इसके अलावा नारी शिक्षा की भी अभी कमी है हमारे पुरुषों में भी औचित्य एवं न्याय की भावना का विकास नहीं हुआ है। इस घृणास्पद बुराई के प्रति उनके हृदय पत्थर बन गए हैं।

यदि भारतीय समाज की प्रगति करनी है और तेजी से आगे बढ़ रहे विश्व के अन्य रिवाजों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलता है तो दहेज प्रथा का अन्त होना चाहिए। महिलाओं और पुरुषों दोनों के लिए सही प्रकार की शिक्षा प्रदान किए जाने की आवश्यकता है। विज्ञापन एवं प्रचार के द्वारा इस बुराई के खिलाफ सामाजिक अन्तःकरण को जागृत किया जाना चाहिए। अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन देना चाहिए। दहेज विरोधी नियम बनाना चाहिए। दोषियों को ऐसा दण्ड देना चाहिए जिससे कि भविष्य में ऐसा अपराध न कर सकें भारतीय समाज से इस बुराई का अन्त करने के लिए समाज

कल्याण संगठनों को आगे आना चाहिए। यदि हम आगे बढ़ना और प्रगति करना चाहते हैं तो जितना शीघ्र यह कार्य हो जाए, उतना ही हमारे लिए अच्छा है।

८. प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम

१९८१ की जनगणना के अनुसार भारत में साक्षरता की प्रतिशत की लगभग ३६ प्रतिशत है इसका अर्थ है कि भारत के ६४ प्रतिशत जनता भी निरक्षर है। महिला साक्षरता की स्थिति और अधिक दयनीय है। जो कि केवल लगभग ७२ प्रतिशत है। इसका अर्थ है कि भारत की कुल महिला जनसंख्या का ७३ प्रतिशत भाग निरक्षरता के अंधेरे में भटक रहा है। भारत में अन्य किसी देश की अपेक्षा अधिक गुलामी नहीं है। यह जनता की अज्ञानता और निरक्षरता भी है।

निरक्षरता और निर्धनता साथ-साथ चलते हैं। यह तथ्य कि कुल मिलकर सम्पन्नता के सन्दर्भ में भारत राष्ट्रों के १००वें स्थान से भी नीचे है। इसका कारण व्यापक निरक्षरता है। निर्धनता से पिछड़ापन पैदा होता है। भारतीय जनता निर्धनता पिछड़ेपन रहन-सहन व गन्दे वातावरण और बीमारी के घेरे से घिरी हुई है। इसका कारण भी निरक्षरता है। भारत सरकार एवं नियोजन बराबर निरक्षरता एवं निर्धनता एवं बुराइयों के सम्बन्ध को अनुभव करते रहे हैं। उन्होंने इस देश से निरक्षरता को समाप्त करने के प्रयास भी किए। किन्तु ये प्रयास असफल रहे। आखिरकार भूतकाल के अनुभवों से उन्होंने सबक सीखा और उन्होंने जनता सरकार सत्ता में आई तो विस्तृत नियोजन किया।

फलतः २ अक्टूबर १९७८ को राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इस बार जो रणनीति अपनाई गई वह पहले से भिन्न थी। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम का क्रियान्वय करने के लिए विस्तृत संगठनात्मक ढांचा तैयार किया गया। केन्द्र में केन्द्रीय प्रौढ़ शिक्षा परिषद सृजन किया गया और राज्य

स्तर पर राज्य प्रौढ़ शिक्षा परिषदों की स्थापना की गई इसके बाद केन्द्रीय एवं राज्य स्तर पर अलग-अलग प्रौढ़ शिक्षा विभाग की स्थापना की गई अधिकारियों और कर्मचारियों का पद सोपान प्रक्रिया ढांचा अस्तित्व में आया और अप्रैल १९८० से प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम आगे बढ़ने लगा। सरकारी प्रयासों के अतिरिक्त कुछ स्वैच्छिक संस्थाओं ने भी कार्यक्रम को हाथ में लिया। विश्वविद्यालयों ने इसको अपनी राष्ट्रीय सेवा योजना में स्थान दिया और नेहरू युवक केन्द्रों ने इसे ग्रामीण युवकों के लिए अपने पांच सूत्री कार्यक्रम में स्थान दिया।

प्रौढ़ शिक्षा के तीन आयाम हैं—(१) साक्षरता (२) व्यवसायिक दक्षता एवं (३) चेतना जागृति, गरीब प्रतिभागियों में अपनी जीवन स्तर को उठाने की आशा नहीं देखती। केवल साक्षरता के लिए वे प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों पर आने में आकर्षित नहीं होंगे। इसलिए चेतना जागृत्ति भी महत्वपूर्ण है। जितनी को साक्षरता ने कार्यक्रम के क्रियान्वयन के प्रारम्भ होने से अब तक सात वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। इनसे काफी प्रगति की है। किन्तु यह सन्तोषप्रद नहीं है। इसमें बहुत से केन्द्र सुस्त पड़े रहते हैं। मुख्य कारण जो प्रकाश में आये हैं वे इस प्रकार हैं। (१) प्रतिभागियों का कम अभिप्रेरण (२) कार्यकर्ताओं के लिए कम वेतन (३) अधिकारियों में प्रतिबद्धता की कमी और निहित स्वार्थ द्वारा पैदा की जाने वाली बाधाएँ (४) ग्रामीण दूरदराज के इलाकों की कठिनाई के कारण कार्यकर्त्ता वांछित स्थानों पर पहुँच नहीं पाते। (५) संसाधनों की कमी के कारण अच्छा प्रोत्साहन प्रदान नहीं किया जा सकता। (६) उच्च स्तर पर भ्रष्टाचार जिसकी प्रवृत्ति निम्न स्तरों तक पहुँचने की होती है।

इन बाधाओं को दूर करने के लिए भी सभी प्रयास किये जाने चाहिए और अधिक से अधिक मात्रा में जन सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए। इस कार्यक्रम को आन्दोलन में बदलने की आवश्यकता है। जिनका उद्देश्य अगले पांच वर्ष में शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त करना हो। व्यापक प्रचार, अच्छे

कार्यकर्ताओं का चयन, कर्मचारियों, अधिकारियों और सरकार में गहरी प्रतिबद्धता का सृजन करके हम निश्चय ही कार्यक्रम को अच्छी सफलता प्रदान कर सकते हैं।

९. प्रेस की स्वतन्त्रता

प्रेस लोकतन्त्र की एक शक्तिशाली संस्था है। यह लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था में इतना प्रभाव रखती है कि इसको चतुर्थस्यासत कहा गया है इसने यू० एस० एस० के प्रेसीडेन्ट के पद से रिचर्ड निक्सन जैसे शक्तिशाली व्यक्ति को हटाने और अन्याय के शिकार भारत के प्रधान मन्त्री को फिर से सत्ता में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। देश का कोई भी कोना मुश्किल से ही ऐसा हो जो इसकी पैनी दृष्टि से अदृश्य रहता हो। यही कारण है कि शक्तिशाली शासक भी इसके महत्व एवं शक्ति को नजरन्दाज नहीं कर सकते। पहली भूमिका जो प्रेस लोकतन्त्र में बीमारी है वह यह है कि यह जनता प्रवक्ता के रूप में कार्य करती है। जो सरकार की कमियों के विषय में अपनी शिकायतों को प्रेस के माध्यम से व्यक्त करते हैं। दूसरी ओर सरकार को भी प्रेस के माध्यम से राष्ट्र की नब्ज मालूम करना आसान हो जाता है। जब चीन ने भारत पर आक्रमण किया तब चीन के साथ सम्बन्धों के सन्दर्भ में उस समय प्रतिरक्षा मन्त्री कृष्ण मेनन करी भूमका को लेकर प्रेस में बड़ा शोर मचा। नतीजा यह हुआ कि जनता की इच्छा का आदर करते हुए प्रधानमन्त्री के पास श्री मेनन से मन्त्रिमण्डल से त्याग पत्र माँगने के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प नहीं था।

दूसरा बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य जो प्रेस लोकतन्त्र में कर रही है वह है जनतन्त्र निर्माण की सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों पर टिप्पणियों एवं आलोचनाओं के द्वारा यह वास्तविकता को जनता के समक्ष रखी हैं। यह महत्वपूर्ण नीतियों के उस गूढ़ अर्थ को जिसको सामान्य आदमी नहीं समझा पाता स्पष्ट करती है। इस प्रकार प्रेस की सहायता से सरकार की नीतियों

एवं कार्यक्रमों के विषय में लोग अपनी राय बनाते हैं। प्रेस सारे विश्व में समाचारों और विचारों की फेलारी है और लोगों को विश्व में होने वाली घटनाओं के विषय में सूक्ष्म जानकारी कराती है। इसके अतिरिक्त विश्व के निकट एवं दूर के स्थानों में व्यक्तियों और घटनाओं के विषय में ज्ञान संचय करने में सहायक होती है। प्रेस का सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि यह देश एवं विश्व के लोगों के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की समस्याओं पर राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय परिचर्या एवं वाद-विवाद में भाग लेना आसान बनाती है। सरकार जनता के बहुमत द्वारा विचारों के प्रकाश में अपनी नीतियों में आवश्यक परिवर्तन के करना महसूस करती है।

अपनी आलोचना और टिप्पणियों से द्वारा प्रेस सरकार को सजग रखती है। और किसी गलत कार्य के परिणामों के प्रति आगाह करती है। क्योंकि आज के समाजिक जीवन में प्रेस कई महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। यह आवश्यक है कि इसको अपने कार्यों उत्तरदायित्वों को निभाने हेतु आवश्यक स्वतन्त्रता प्रदान की जाए यदि सेंसर शीप लगाकर या सम्पादकों और समाचार पत्र मालिकों को डरा धमकाकर प्रेस की आजादी प्रतिबन्धित की जाती है तो विचारों की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति एवं समाचारों का स्वतन्त्र प्रसारण सम्भव नहीं होगा आधार भूत रूप से प्रेस ही वाणी और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता को वास्तविकता प्रदान करती है। जो कि वास्तव में स्वतन्त्रा और लोकतन्त्र का मुख्य कार्यक्रमों की आलोचना करने की स्वतन्त्रता प्रेस को मिलती है तो नए-नए तथ्य प्रकाश में आयेंगे,यह सरकार और जनता दोनों के लिए ही लाभप्रद रहेगा दूसरे एक स्वतन्त्रता प्रेस ही जनता को सही रूप से सूचित कर सकती है और सही जनता निर्माण करने में सहायक हो सकती है। यदि प्रेस पर प्रतिबन्ध लगाए जाते हैं। तो इससे तथ्य तोड़-मरोड़ कर सामने लाए जायेंगे और इससे सत्यता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा इसके अतिरिक्त स्वतन्त्र प्रेस के माध्यम से लोगों की अभिव्यक्ति की शक्ति को बाधा रहित विकास होता है जिसका कि व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण बड़ा महत्व है।

एक स्वतन्त्र प्रेस निश्चय ही स्वतन्त्रता की मशाल को जलाए रखती है और अधिनायक वाद की शक्तियों को नियन्त्रण में रखती है। इसके अतिरिक्त यह तथ्यों को उद्घाटित करने के द्वारा अन्याय सहने वाले की सहायता करने और अत्याचारी को दण्डित करने की शक्ति रखती है। यह जनता को राजनीतिक सुस्ती से जगाती है और उन्हें अपने कर्त्तव्य और अधिकारों का बोध कराती है। स्वतन्त्रता और उत्तरदायित्व साथ-साथ चलते हैं। पूर्ण स्वतन्त्रता वांछनीय नहीं है। प्रेस की स्वतन्त्रता और जनहित में ताल-मेल होना चाहिए प्रेस को स्वतन्त्रता का उपयोग इस प्रकार करना चाहिए कि जनहित में अधिक वृद्धि हो इसको कुछ थोड़े से लोगों के हित में पत्र पत्रकारिता एवं सनसनाहट से बचाना चाहिए इसको स्वानुशासन के अन्दर कार्य करना चाहिए। जहाँ इसके लिए यह आवश्यक है कि सत्य को प्रकाश में लाए वही उसके लिए यह भी आवश्यक है कि उस कड़वे सत्य के प्रकाश से बचे जिससे राष्ट्रीय हित को क्षति पहुँचाती हो इसका क्षितिज व्यापक होना चाहिए और इसकी परिधि विस्तृत एवं उदार होनी चाहिए। इससे यह अपने उत्तरदायित्वों को ठीक से निभा पाएगी और वास्तविक स्वतन्त्रता का उपयोग कर पायेगी।

१०. आतंकवाद

आये दिन हम देश एवं विश्व के अन्य हिस्सों में राजनीतिक विचारधारा के विभिन्न रङ्गों के आतंकवादियों उग्रवादियों द्वारा किए गये कार्यों के विषय में समाचार सुनते हैं कभी किसी सुविख्यात राजनीतिज्ञ की हत्या है। कभी किसी राजदूत का अपहरण है और कभी अपनी उचित अनुचित माँगों को मनवाने हेतु आतंकवादियों द्वारा निर्दोष लोगों को बाले बनाकर किसी सरकार को ब्लेक मेल करना है। हवाई जहाजों का अपहरण करना उनको अपनी इच्छा से स्थानों में ले जाना और उनके द्वारा दिए गये समय में उनकी माँग पूरा न किया जाने पर सवारियों के साथ जहाजों को उड़ाने की धमकी देना आदि सामान्य घटनायें हो चली है। भीड़-भाड़ के स्थानों राजनीतिज्ञों के घरों या उन स्थानों पर जहाँ राजनीतिज्ञ मिलते हैं और राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय

विषयों पर विचार विमर्श करते हैं। बम विस्फोटों के बारे में भी समाचार सुने जाते हैं उपरोक्त प्रकारों के अलावा आतंकवाद ने अन्य कई रूप भी धारण किए हैं। रेलवे लाइनों में फिश प्लेट हटा दी जाती हैं और इस प्रकार से बहुत सी रेल दुर्घटनायें भी घटित हुई है। कभी-कभी आतंक वादियों द्वारा कुयें या पानी के तालावों में जहर मिलाने के विषय में भी समाचार प्राप्त है।

आतंकवादी इस प्रकार के असामाजिक व राष्ट्रविरोधी कार्यकलापों में लिप्त इस लिए होते हैं ताकि वे राष्ट्रीय सरकार या विश्व समुदाय का ध्यान किसी समस्या पर केन्द्रित कर सकें या अपनी उचित या अनुचित माँगों को मनवा सकें। आतंकवाद का कोई स्वरूप या इसके कार्यकलाप करने का कोई भी भौगोलिक क्षेत्र क्यों न हो यह निर्विवाद है कि आतंकवाद ने हमारे जीवन को असुरक्षित एवं अनिश्चित बना दिया है। हम कल की या फिर अगले क्षण की ताजा हवा का सेवन कर पायेंगे या नहीं यह अनिश्चित हो गया है। किस क्षण हम किस बम विस्फोट रेल या वायुयान दुर्घटना का शिकार बन जाएं हम नहीं जानते। उद्देश्यों की दृष्टि से आतंकवाद को दो श्रेणियों में रखा जा सकता है—(१) धनात्मक एवं (२) ऋणात्मक। धनात्मक आतंकवाद वह है जिसमें उद्देश्य अच्छे हैं। उदाहरण के लिए कुछ देश भक्तों ने ब्रिटिश सरकार में आतंकवाद फैलाकर उसे भारत को स्वतन्त्रता प्रदान करने के लिए बाध्य करने हेतु आतंकवाद अपनाया। कुछ-कुछ इसी प्रकार की घटनाएँ उन देशों में घटित हुई हैं जिन्होंने विदेशी लोगों से अपने को मुक्त कराने हेतु संघर्ष किये हैं। उत्तर आयरलैंड, फिलीस्तीन, दक्षिण अफ्रीका आदि के आतंकवादी इस श्रेणी में रखे जा सकते हैं। इस प्रकार का आतंकवाद तो क्षम्य हो सकता है, क्योंकि उद्देश्य युक्त है किन्तु हम अच्छे उद्देश्य के लिए इस प्रकार के उपायों को अपनाये जाने का अनुमोदन नहीं करते जैसा कि महात्मा गांधी ने कहा था अच्छे उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अच्छे ही साधन अपनाये जाने चाहिए। साधन और साध्य में बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति के

लिए सही साधन अपनाने चाहिए। शान्तिमय और अहिंसा ही स्थाई उपलब्धियों की ओर ले जाते हैं। ऋणात्मक आतंकवाद वह है जिसमें किसी देश या जाति का कोई असन्तुष्ट गुट अपनी गुट सम्बन्धी या देश से अलग होने अलग राज्य स्थापित करने की मांग को मनवाने के लिये सारे समुदाय से फिरौती मांगता है। पंजाब के आतंकवाद को जिससे अपने पंजे देश की सीमा के बाहर भी फैला रखे हैं, श्रेणी में रखा जा सकता है। आतंकवाद विशेषकर ऋणात्मक आतंकवाद मानव जाति के लिए कलंक है। इसको सख्ती के साथ दबा दिया जाना चाहिए। भारत की संसद ने आतंकवाद विरोधी विधेयक पारित कर दिया है। जिसमें आतंकवाद के क्रिया-कलापों में आतंकवाद की भत्सर्ना विश्व नेताओं द्वारा भी की गई है और समस्या से निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास किये जा रहे हैं। गुप्तचर एजेन्सियों को सशक्त किये जाने की आवश्यकता है। कानून एवं व्यवस्था को और अधिक प्रभावी बनाया जाना चाहिए। आतंकवादियों को पकड़ने और उनको प्रतिरोधात्मक दण्ड देने हेतु आधुनिक तकनीकों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए। आतंकवाद से लड़ने के साधनों और उपायों के विषय में जनता को शिक्षित किए जाने की आवश्यकता है। विश्व की सभी सरकारों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद से निपटने के लिए आपस में सहयोग करना चाहिए। राष्ट्रीय सरकारों को हठ का रवैया छोड़ देना चाहिए और समुदाय के किसी वर्ग की उचित मांगों को अविलम्ब स्वीकार कर लेना चाहिए। किसी चीज को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लेना एक सरकार के लिए उचित नहीं कहा जा सकता। ये और अन्य उपाय हमें आतंकवाद से प्रभावी रूप से निपटने हेतु सहायता प्रदान कर सकते हैं। आतंकवाद को समाप्त करने के लिए त्वरित किन्तु प्रभारी कदम उठाये जाने चाहिए जिससे लोगों को जीवन की सुरक्षा प्रदान की जा सके और सरकार के प्रभावीपन में उनकी आस्था को फिर से बैठाया जा सके। सभी देश किसी भी प्रकार के आतंकवाद को समाप्त करने की आवश्यकता के प्रति जाग उठे हैं। दुर्भाग्य से हाल ही में हमें विश्व के कुछ भागों में राज्य द्वारा प्रायो-

जित आतंकवाद देखने को मिला। इस प्रकार के देश दुनियाँ की दृष्टि से भर्त्सना योग्य है। क्या हम यह नहीं पहचान सकते हैं कि हम सब एक ही परमात्मा की सन्तान हैं और हम बुनियादी रूप से एक ही हैं, क्या हम यह नहीं समझ सकते कि किसी भी व्यक्ति की मृत्यु से हम सबका ह्रास होता है। कोई भी व्यक्ति स्वयं अपने में ही द्वीप नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति सभी पर अंश है इस सत्य की जानकारी का संचार हम सबमें किये जाने की आवश्यकता है।

११. पंजाब समझौता

२४ जुलाई १९८५ भारत के इतिहास में एक अति महत्वपूर्ण दिन के रूप में याद किया जाएगा। इसी दिन पंजाब समस्या पर भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी और अकालीदल अध्यक्ष सन्त हरचन्दसिंह लोगोंवाल के बीच एक समझौता पर हस्ताक्षर हुआ। इस समझौते ने पाँच वर्ष के क्लेश, आतंकवाद एवं विघटन, जिसने भारत की एकता और अखण्डता को खतरे में डाल दिया था, को समाप्त करने का प्रयास किया।

यह एक ११ सूत्री समझौता है इस प्रावधानों के अनुसार ११८१-८२ के पश्चात् आंदोलन या किसी कार्यवाही में मारे गये निर्दोष लोगों को अनुग्रह राशि तो मिलेगी ही साथ ही क्षतिपूर्ति भी प्रदान की जायेगी। श्रीमती इन्दिरा गांधी की हत्या के बाद अन्य दङ्गों की भी जाँच कराई जाए इसके अनुसार जिन लोगों को सेना से बर्खास्त किया गया है उनका पुनर्वास किया जाय। भारत सरकार इस बात पर भी सहमत हो गई है कि वह एक आल इण्डिया गुरु द्वारा विधेयक भी लायेगी वर्तमान की विशेष अदालतें केवल युद्ध करना और अपहरण की सुनवाई करेंगी।

समझौते के अनुसार चण्डीगढ़ की राजधानी परियोजना क्षेत्र पंजाब को दिया जायेगा। जो कि हरियाणा के हिन्दी क्षेत्र से संघीय प्रदेश में मिलाये गये थे, वे हरियाणा को दे दिये जायेंगे पूरी सुखनाझील, चण्डीगढ़ का भाग रहेगी और इस प्रकार वह पंजाब को मिलेगी।

इसके अतिरिक्त पंजाब हरियाणा वर्तमान सीमाओं के पुनः समायोजन के लिए दावे एवं प्रतिदावे हैं। सरकार एक अन्य आयोग की नियुक्ति करेगा जो उन मामलों पर विचार करे और अपने निष्कर्षों से अवगत कराए। इसे मानने हेतु सम्बन्धित राज्य बाध्य होंगे।

समझौते में कुछ बातें केन्द्र राज्यों सम्बन्धों को लेकर है। आनन्दपुर साहब प्रस्ताव को जहाँ तक इसका सम्बन्ध केन्द्र राज्य सम्बन्धों से हो। सहकारिता आयोग भी सन्दर्भित किया गया है।

अलग प्रावधान नदियों के जल के बटवारे से है। पंजाब, हरियाणा, एवं राजस्थान के किसान रावी व्यास प्रणाली से पानी की जो मात्रा १-७-८५ को प्राप्त कर रहे थे। वे अब भी प्राप्त करेंगे और बाकी के लिए न्यायाधिकरण अपना फैसला ६ महिने के अन्तर्गत देगा और उसे दोनों पक्ष मानने के लिए बाध्य होंगे। सतलंज, यमुना नहर का निर्माण कार्य जारी रहेगा, इसका निर्माण १५-८-८६ तक पूरा हो जाना चाहिए। समझौते में शर्त के अनुसार केन्द्र सरकार पंजाबी भाषा के विकास के लिए कुछ कदम उठाएगी।

इस प्रकार समझौते की शर्तें काफी व्यापक थी और यह आशा की जाती थी कि संघर्ष के दौर का अन्त करके मित्रता, सद्भावना और सहयोग के युग का सूत्रपात होगा जिससे भारत की एकता और अखण्डता का सवर्धन हो सके। किन्तु समझौते के बाद की घटनाओं ने हमारी आशाओं पर पानी फेर दिया। पंजाब में आम चुनाव कराये गये और सुरजीत सिंह बरनाला के नेतृत्व में सरकार सत्ता में आई। वे पंजाब में आतंकवाद को नियन्त्रित करने में असफल रहे। अतः राष्ट्रपति शासन लागू हो जाने के कारण उन्हें अपने पद से हटना पड़ा। राष्ट्रपति शासन भी समस्या का समाधान करने में असफल रही। पंजाब में आतंकवाद ने लोगों विशेषकर अल्पसंख्यक लोगों की जिन्दगी को नरक बना दिया। वह समझौता खटाई में पड़ गया है। आतंकवाद खुल कर सामने आ गया है। सम्पूर्ण राष्ट्र इस आशा से देख रहा है कि नाटक के

अभिनेताओं को सद्बुद्धि आयेगी और शीघ्र ही यह उलझी समस्या सुलझ जायेगी।

१२. भारत में कम्प्यूटर क्रान्ति

भारत विश्व के अनन्त समृद्ध और सुखी देशों में से एक के रूप में २१वीं सदी में प्रवेश करने के लिए गतिशील हो रहा है। वी. पी. सिंह के युवा एवं गतिशील नेतृत्व ने इसको एक नया आयाम प्रदान किया है। क्या हम तेज गति से चलते हुए समय के साथ बराबर कदम से कदम मिलाकर चल सकते हैं। २१वीं सदी तो आयेगी चाहे हम कुछ भी न करें। २१वीं सदी शुरू होने से पहले जो हमारे पास १० (दस) वर्ष हमारे पास हैं। वह एक देश के जीवन में बहुत छोटी-सी अवधि है। एक ऐसे राष्ट्र के रूप में प्रवेश करना है जिसकी आवाज राष्ट्रों के समुदाय में बहुत महत्व रखेगी। कम्प्यूटर क्रान्ति हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। पूर्व और पश्चिम के कुछ विकसित देशों में कम्प्यूटर क्रान्ति अपनी पूरी ऊँचाई पर है। भारत ने भी अपनी कम्प्यूटर नीति की घोषणा १९८४ में की थी। भारत में पहले कम्प्यूटर का निर्माण सन् १९६६ में ताता इन्स्टीट्यूट ऑफ फण्डामेंट रिसर्च बम्बई द्वारा किया गया था। उसके बाद भाभा एटोमिक रिसर्च सेन्टर ने इस श्रृंखला में कम्प्यूटरों का निर्माण किया। वी. पी. सिंह ने अभी हाल में इस बात पर बल दिया कि इलेक्ट्रानिस से भारत को नये और अच्छे भविष्य का निर्माण करने में मदद मिलेगी। इलेक्ट्रानिक्स का प्रयोग कृषि में भूमि परीक्षण, मौसम परीक्षण आदि के लिए सुरक्षित और प्रभावी रूप से हो सकता है।

कम्प्यूटर का प्रयोग पिछले लोक सभा और विधान सभा चुनावों में शासकीय दल द्वारा किया गया। सरकार ने इलेक्ट्रानिक्स आयोग के अन्तर्गत नई दिल्ली में एक राष्ट्रीय सूचना केन्द्र स्थापित किया है जिसमें बहुत से आधुनिकतम कम्प्यूटर लगे हुए हैं। राज्यों एवं संघीय प्रदेशों की राजधानी में कम्प्यूटर लगाने के लिए योजना बनाई गई है। बैंकों में भी कम्प्यूटर का प्रयोग युद्ध स्तर पर अपनाया जा रहा है।

यातायात प्रणाली में कम्प्यूटर का प्रयोग बहुत पहले ही सुविधाजनक पाया गया है। अन्तराष्ट्रीय हवाई सेवाओं ने इसे पहले ही प्राप्त कर लिया है। पुलिस और न्याय व्यावस्था के लिए कम्प्यूटर के महत्व को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कंम्प्यूटर की सहायता से अपराधी का पता लगाना सम्भव पाया गया है। इस लिए राज्य पुलिस मुख्यालय पर लगे कम्प्यूटरों का कनेक्शन नई दिल्ली में स्थित राष्ट्रीय कम्प्यूटर केन्द्र में किया जायेगा। कम्प्यूटर का चिकित्सा के रूप में प्रयोग बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा। भारत में ई. जी. सी. और रक्त विश्लेषण करने के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा रहा है। होम्योपैथी ने इसका प्रयोग करके शुरू कर दिया है। सर्जरी में तो इसकी उपयोगिता और भी अधिक है।

मिलीटरी, पोस्ट एण्ड टेलिग्राफ, वाणिज्य एवं उद्योग क्षेत्र में कम्प्यूटर के प्रयोग से इन विभागों की कार्य प्रणाली और जीवन के अन्य क्षेत्रों में क्रांति आयेगी। भारत के ही बहुत से विश्वविद्यालय एवं विद्यालय में कम्प्यूटर की सहायता से ही कार्य किया जा रहा है। अब भारत में कम्प्यूटर आ ही गया है। किन्तु हमें सचेत होना चाहिए कि कम्प्यूटर अन्न नहीं उगाता और नहीं माल तैयार करने लिए उद्योग के पहियों को ही चलाता है। यह नये स्कूल और कालेजों की स्थापना भी नहीं करता जिससे कीं अधिक से अधिक लोग शिक्षित हो सकें। यह अपने आप ही में निरक्षरता को कम नहीं करता। इस लिए आवश्यकता इस बात की है कि हम पहले सभी क्षेत्रों में आत्म निर्भर बनें अपनी जनता के जीवन स्तर और गुणवता को ऊँचा उठायें, तभी कम्प्यूटर का प्रयोग सार्थक होगा।

१३. नई शिक्षा निति

भारतीय संसद में मई १९८६ में शिक्षा पर राष्ट्रीय नीति के प्रारूप को अनुमोदन प्रदान कर दिया। भूतपूर्व मानव संसाधन मंत्री श्री वी. पी. नरसिंह

राव ने ससद को अश्वासन दिया कि वित्तीय कमी के कारण इस नीति के कार्यान्वयन की कठिनाई में नहीं पड़ने दिया जायेगा ज्ञातव्य है कि पद धारण के बाद राजीव गाँधी ने नई शिक्षा नीति के निर्माण करने का वादा किया था। प्रारूप में नोति की मुख्य बातें निम्न प्रकार है।

नई शिक्षा नोति मे इस बात पर बल दिया गया है कि धनात्मक सम्पत्ति और बहुमूल्य राष्ट्रीय संसाधन है। जिसका पालन पोषण कोमलता एवं सावधानी एवं गतिशीलता के साथ करना चाहिए इसलिए शिक्षा सबके लिए आवश्यक मानी गई है। शिक्षा वर्तमान और भविष्य दोनों क लिए अद्वितीय है। यह सिद्धांत नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की कुन्जी है।

नई नीति का प्रयास राष्ट्रीय शिक्षा पद्धति निर्मित करने का है। जिसके लिए १९६८ की नोति द्वारा संस्तुति कॉमन स्कूल पद्धति की दिशा में कदम उठायें जायेंगे। यह राष्ट्रीय कार्यक्रम ढाँचे पर आधारित होगा। इसका उद्देश्य कुछ मान्यताओं जैसे भारत कॉमन सांस्कृतिक विरासत, समानता प्रजातन्त्र और धर्म निरपेक्षता, पुरुष और महिलाओं की समानता, वातावरण की शुद्धि को बढ़ावा देना है।

नई नीति असमानताओं को समाप्त करने और शैक्षिक अवसरों को बराबर करने पर विशेष बल देती है। शिक्षा को महिलाओं के स्तर में आधारभूत परिवर्तन के रूप में प्रयोग किया जाएगा महिला निरक्षरता के उन्मूलन को सबसे अधिक प्राथमिकता प्रदान की जायेगी।

अनुसूचित जातियों के नैतिक विकास के लिए केन्द्रीय बिन्दु है। उनको गैर अनुसूचित्त जातियों के बराबर लाना शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर है। अनुसूचित जन-जातियों को भी अन्य जातियों के बराबर लाने के लिए भी कदम उठायें जायेंगे।

नई शिक्षा नीति में प्रौढ़ शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।

सम्पूर्ण राष्ट्र निरक्षरता के उन्मूलन के लिए विशेष कर १५–३५ आयु वर्ग में अपने को समर्पित करेगा। उपयुक्त शिक्षा विकास की बढ़ती आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए अरली चाइल्स हुड केयर एवं एजूकेशन को उच्च प्राथमिकता प्रदान की जायेगी।

प्रारम्भिक शिक्षा में दो बातों पर बल दिया जायेगा। (१) यूनीवर्सल एन्रोलमेंट और १४ वर्ष तक की आयु तक सभी बच्चों को स्कूल में बनाए रखना। (११)-शिक्षा की गुणवत्ता में पर्याप्त सुधार शारीरिक दण्ड को शैक्षिक प्रणाली में से मजबूती के साथ निकाल दिया जायेगा। माध्यमिक शिक्षा तक पर विशेष ध्यान दिया जायेगा। विशेष प्रतिभाशाली बच्चों को अधिक तीव्र-गति से आगे बढ़ने का अवसर प्रदान किया जाएगा। यह प्रस्तावित किया गया है कि वर्ष १९९५ तक २५ प्रतिशत अशिक्षित रह जायें। शिक्षा पद्धति के स्तरों को पतन से रोकने के लिए तत्परता से कदम उठायें जायें। भारत के प्राचीन ज्ञान समूह में और अधिक नीचे उतरने और इसको वर्तमान की वास्तविकताओं से सम्बद्ध करने के लिए प्रयास किये जायेंगे। डिग्रियों को नौकरियों से अलग किया जायेगा जिनमें विश्वविद्यालय की डिग्री को अनिवार्य योग्यता आवश्यक नहीं समझा जाता है।

ओपन यूनिवर्सिटी पद्धति को विकसित किये जायें। टेक्नीकल एवं मैनेजमेंट एजूकेशन को नये आयाम प्राप्त होंगे। इसके सभी स्तरों पर कुशलता और प्रभावीजन को और अधिक बढ़वा देने के लिए कदम उठायें जायेंगे। नई शिक्षा नीति का यह उद्देश्य है कि ठीक तरह से कार्य करें। इसलिए पद्धति में अनुशासन के लिए उपायों को उच्च प्राथमिकता प्रदान दी जायेगी। भाषाओं के सम्बन्ध में १९६८ की शिक्षा नीति को अत्यधिक संगत समझा गया है। विज्ञान और गणित के अध्यापन को विशेष प्राथमिकता प्रदान दी जायेगी। मूल्यांकन प्रक्रिया और परीक्षा सुधार कार्यक्रम भी किया जायेगा डिस्ट्रिक्स इस्टीट्यूट ऑफ अजूकेशन एंण्ड ट्रेनिंग बोर्ड की स्थापना की जायेगी। जिससे

अध्यापकों का प्रशिक्षण अधिक उद्देश्यपूर्ण बनाया जा सके। शिक्षा में एक उपयुक्त प्रबन्ध ढाँचा सुनिश्चित करने के लिए अखिल भारतीय शिक्षा सेवा की स्थापना आवश्यक होगी।

यह भी प्रस्ताव है कि इसके बाद शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का ६ प्रतिशत से अधिक व्यय किया जायेगा। यह सुझाव १९६८ की नीति में दिया गया था।

१४. भाषा की समस्या

भारतीय राष्ट्र सांस्कृतिक परम्पराओं की विविधता एवं भाषाओं की बहुलता से विशिष्टता प्राप्त किए हुये हैं। इस तथ्य के कारण इसमें अलग ही आकर्षण और सौन्दर्य है। किन्तु राजनीति ने झूठे नेताओं के दिमाग उतने खराब कर रखे हैं कि जो कोई मुद्दा नहीं है उसे भी मुद्दा बनाए हुए हैं। भारत में बहुत सी भाषाएँ हैं। भारत में निराश और विफल राजनीतिज्ञ भाषा के नाम पर लोगों को हिंसा करने के लिए भड़काते हैं। इन चीजों अब अन्त होना चाहिए। हमें भारत के विभिन्न भागों में बोली जाने वाली भाषाओं से प्यार है और उन्हें सम्मान देना है। साथ में हमें एक सम्पर्क भाषा का विकास करना है। भारत में अधिकांश लोग हिन्दी बोलते हैं क्षेत्रीय भाषाओं को भी उन्नति एवं विकास के अवसर मिलने चाहिए। हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी के प्रति स्थापना की वकालत करना देश भक्ति के विरुद्ध है। कोई भी विदेशी भाषा भारत की राष्ट्र भाषा नहीं हो सकती है और न होनी चाहिए। अंग्रेजी को रखना बहुत जरूरी है क्योंकि यह विश्व की अत्यन्त समृद्ध भाषाओं में से एक है और भारतीयों के लिए बाहरी दुनियां के के लिए एक खिड़की के समान है।

भाषाई आधार पर राज्यों का पुनर्गठन एक बड़ी भूल थी जिसकी हमें काफ़ी कीमत चुकानी पड़ी है किन्तु जो हो गया सो गया। उससे अब कुछ नहीं हो सकता। यदि हमें कोई शिकायत भी है तो इसके समाधान के लिए

हमें सकारात्मक रूप से सोचना चाहिए। नीचे कुछ सुझाव दिये जा रहे हैं। जिनको भाषाई संवेदना को आघात पहुँचने से बचने और भाषा की समस्या के समाधान हेतु क्रियान्वित किया जा सकता है।

(i) त्रि भाषा फार्मूला का तत्परतापूर्ण क्रियान्वयन।

(ii) गैर पब्लिक स्कूलों में अंग्रेजी के अध्ययन को उन्नत करना जिससे की इन स्कूलों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों को अंग्रेजी का ज्ञान पब्लिक स्कूल में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अंग्रेजी के ज्ञान के बराबर हो।

(iii) जिन भाषाओं को अभी तक कोई सरकारी दर्जा प्रदान नहीं किया गया है उनके इस दावे को मान्यता प्रदान करना।

(iv) भारत के विभिन्न भागों के विद्वानों और बुद्धिजीवियों में अधिक गहरे सम्पर्क का सम्वर्धन हो।

(v) हिन्दी के द्वारा क्षेत्रीय भाषाओं को अधिक से अधिक संख्या में अपनाना जिससे एक ऐसी भाषा का विकास हो सके जिससे भारत की सभी मुख्य भाषाओं के शब्द हों।

(vi) भाषा के मुद्दे पर एक आम एवं व्यापक राष्ट्रीय सहमति किन्तु इससे पूर्व इस विषय पर किसी निश्चित अवधि के लिए राष्ट्रीय डिबेट अवश्य हो चुकी हो। राष्ट्रीय सहमति प्राप्त करने के पश्चात उसका तत्परतापूर्ण क्रियान्वयन हो।

उपरोक्त उपायों से हमें भाषा की समस्या से मुक्ति मिल सकती है। आइए भारत के हम सभी वर्ग और क्षेत्र के निवासी अपने चिन्तन को सकारात्मक रूप में लगाएँ।

१५. ग्रामोत्थान

भारत एक कृषि प्रधान देश है। भारत की तीन चौथाई जनसंख्या गाँवों

में रहती है ग्रामीण भारत ही वास्तव में भारत की शक्ति एवं समृद्धि का निर्धारण करता है। किन्तु दुर्भाग्य से हमारे गाँवों ने शताब्दियों की उपेक्षा सहन की है। आजादी के ४३ वर्ष बाद भी हम ग्रामीण और शहरी जीवन के अन्तर को कम करने में सफल नहीं हुए। निःसन्देह हमारे गाँवों द्वारा बहुत प्रगति की गई है। किन्तु इतनी नहीं जितनी कि की जा सकती थी।

बहुत ही महत्वपूर्ण कारणों में से एक कारण ग्रामीण जनता की व्यापक निरक्षरता है। इसके कारण वे कृषि के आधुनिक तकनीकों और खेतों की उपज बढ़ाने के नवीनतम तरीकों से लाभ उठाने में अपने को अक्षम पाते हैं। ग्रामीण निर्धन निडर होकर अपने दावों को लड़ने की हिम्मत नहीं कर सकता। इसलिए इन्होंने अपने को अपने भाग्य पर छोड़ दिया है। वे गाँव के सम्पन्न और प्रभावशाली लोगों के प्रलोभन में आ जाते है। सबसे मुख्य बात यह है कि जनसंख्या विस्फोट ने विकास के सभी अवसरों को प्रायः समाप्त कर दिया है। जो कुछ प्रगति होती है। वह बढ़ती हुई जनसंख्या द्वारा निगल ली जाती है।

विकास की धीमी गति के लिए सरकार की दूषित नियोजन व्यवस्था भी उत्तरदाई रही है। गाँवों में शैक्षिक सुविधायें वांछित स्तर की नहीं हैं। गाँवों में अच्छी चिकित्सा सुविधा उपलब्ध नहीं है। ग्रामों में विकास की सोचनीय सुविधायें भी ग्रामीण ऋण ग्रस्तता के लिए उत्तरदाई रही हैं। हमारे अधिकतर ग्रामीण गरीब ऋण में ही पैदा होते हैं। ऋण में ही जीवन यापन करते हैं। और ऋण में ही मर जाते हैं। सामयिक बेरोजगारी लघु उद्योगों की दयनीय दशा और उनकी समुचित प्रगति के लिए प्रोत्साहन की कमी, विभिन्न सामाजिक रीतिरिवाजों पर व्यर्थ का व्यय इन सबने ग्रामीण जनता को गरीब बनाने में योगदान दिया है।

अब समय आ गया है जबकि हम अपनी प्राथमिकताओं का पुनः मूल्यांकन करें और अपनी ग्रामीण जनता की दशा सुधारने के कार्य में केंद्रित लायें

किन्तु सड़कों के निर्माण कार्य में जीवन लगा देना चाहिए जिससे प्रत्येक कार्य सुविधा जनक हो जाय। जिससे प्रत्येक गाँव मुख्य सड़क से जुड़ जायें, यातायात की कठिनाई दूर हो जाए, और ग्रामीण गरीबों का शहरों में आना जाना सुलभ हो जाये जहाँ से वे जागृति और अपनी प्रगति के लिए प्रोत्साहन प्राप्त करें। ग्रामीण विद्युतीकरण कार्य को कम से कम समय के अन्तर्गत पूर्ण कर लिया जाना चाहिए। अच्छे प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम को सफल बनायें जाये। लघु उद्योगों को अधिक प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। सिंचाई सुविधाओं का तीव्रगति से विस्तार किया जाना चाहिए। सबसे मुख्य आवश्यकता इस की है कि सरकारी अधिकारियों और सरकारी नेताओं में प्रतिबद्धता की भावना पैदा हो और वे भारतीय ग्रामीण निर्धन से वास्तविक प्यार करने के अपने दावे पर खरा उतारें।

●

१६. भारतीय उपग्रह

भारत में निर्मित पहला सुदूर संवेदन (रिमोट सैनसिंग) उपग्रह १७ मार्च १९८८ को सोवियत संघ के बैकोनूर अन्तरिक्ष केन्द्र से छोड़ा गया। इस उपग्रह को भारतीय वैज्ञानिकों ने वर्षों के अथक परिश्रम से बनाया है। यह उपग्रह यहाँ के जल संसाधनों, वन, खनिज तथा पृथ्वी के गर्भ में छिपे पेट्रोलियम का पता अन्तरिक्ष में रहकर करेगा। वैज्ञानिकों ने इस उपग्रह को आई० आर० एस०—वन ए (इण्डियन रिमोट सैंसिग—वन) नाम दिता है।

भारत के इन भू—सर्वेक्षक उपग्रह की, अन्तरिक्ष में प्रक्षेपण करने से पूर्व बैंगलूर के अन्तरिक्ष केन्द्र में दिसम्बर १९८७ में कड़ी जाँच की गई। ६ जनवरी १९८८ को सोवियत रूस भेजने के लिये पैक किया तथा २१ जनवरी १९८८ के दिन एक विशेष विमान द्वारा रूस भेज दिया गया।

यद्यपि इस उपग्रह के सम्पूर्ण निर्माण-कार्य में भारतीय तकनीकी का

प्रयोग हुआ, परन्तु प्रक्षेपण सोवियत संघ की सहायता से वाणिज्यिक आधार पर साड़े सात करोड़ रुपये की विपुल धनराशि देकर किया गया। इस संवेदी उपग्रह के निर्माण से भारत विश्व के पांच देशों अमरीका, रूस, फ्रांस और जापान की श्रेणी में पहुँच गया है तथा विकासशील देशों में वह प्रथम देश है जिसने अन्तरिक्ष विज्ञान क्षेत्र में यह उपलब्धि प्राप्त की है।

उपग्रह ९०४ किलोमीटर की ऊँचाई पर प्रत्येक १०३.२ मिनट में एक बार चक्कर लगा रहा है तथा पृथ्वी की ९९° के कोण पर झुका है।

उपग्रह में लगे तीन अत्याधुनिक कैमरे इंफ्रारेड प्रणाली से हैदराबाद से ७० कि० मी० दूर शाद नगर में राष्ट्रीय दूर संवेदन एजेंसी भू-केन्द्र पर बहुत साफ चित्र भेज रहे हैं। ये चित्र भारत के विशाल भू-भाग का सर्वेक्षण चन्द मिनटों में करने में समर्थ हैं। एक ही स्थान का सर्वेक्षण चन्द मिनटों में होगा। इससे कृषि, जंगल, पानी, खनिज की खोज भू-कटाव, शहरी भूमि का अध्ययन, मानचित्र निर्माण में सहायता मिलेगी।

आई० आर० एस—वन ए की श्रृंखला में इसी वर्ष स्ट्रेच्ड रोहिणी सैटेलाइट सीरीज तथा आई० आर० एस० श्रेणी के दो अन्य उपग्रह प्रक्षेपण की भी योजना है।

उपग्रहों के इतिहास में 'आर्यभट्ट' उपग्रह को सोवियत संघ से ७ जून १९७९ तथा भास्कर-२ को २० नवम्बर १९८१ को प्रक्षेपित किया गया। 'एपल' नाम का उपग्रह १९ जून १९८१ के दिन यूरोपीय स्पेस एजेन्सी की सहायता से अन्तरिक्ष में प्रक्षेपित किया गया। रोहिणी का प्रक्षेपण १८ जुलाई १९८० को तथा इसी श्रृंखला का आर० एस० डी०-२, जून १९८८ को अन्तरिक्ष में छोड़ा गया। असफल उपग्रहों में ए० एस० एल-३ तथा इन्सैट-१ ए को मुख्य रूप से गिना जाता है।

आजकल कार्यरत इन्सैट-१ बी (इण्डियन नेशनल सैटीलाइट) का प्रक्षेपण अमरीका के शटल चैलेंजर अन्तरिक्ष यान द्वारा ३० अगस्त १९८३ को किया

व्याकरण

वर्तनी शुद्धि

भाषा की शुद्धता के लिए व्याकरण का ज्ञान आवश्यक है। बच्चे शुद्ध लिख सकें तथा बोल सकें इसके लिए आवश्यक है कि उन्हें व्याकरण का सही ज्ञान दिया जाय। भाषा में निम्न प्रकार के दोष पाये जाते हैं—

अशुद्ध	शुद्ध
१ राम रावण को मारा।	१. राम ने रावण को मारा।
२. वह भाग गये।	२. वे भाग गये।
३. शीला कलम से लिखता है।	३ शीला कलम से लिखती है।
४. लड़का ने पुस्तक ली है।	४. लड़के ने पुस्तक ली है।
५ उसे तीन रुपये जुर्माने हुए।	५. उसे तीन रुपये जुर्माना हुआ।
६. राम दौड़ लगाई।	६. राम ने दौड़ लगाई।
७. वे घोड़ा पकड़े।	७. उन्होंने घोड़ा पकड़ा।
८. मोहन ने मिठाई खरीदता है।	८. मोहन मिठाई खरीदता है।
९. श्याम पानी पीया।	९. श्याम ने पानी पीया।
१०. रामको देखकर श्याम खुशी से भर गया।	१०. राम को देखकर श्याम का मन खुशी से भर गया।
११. यह कलम मेरा है।	११. यह कलम मेरी है।
१२. मेरी भाई अस्वस्थ हैं।	१२. मेरे भाई अस्वस्थ हैं।
१३. भगवान राम के अनेकों नाम है।	१३. भगवान राम के अनेकों नाम हैं।
१४. कोयल मीठा गाता है।	१४. कोयल मीठा गाती है।
१५. व्यक्ति को प्रत्येक दुःखों को सहना पड़ेगा।	१५. व्यक्ति को प्रत्येक दुख को सहना पड़ेगा।

१६. लखनऊ से अनेक समाचार पत्र प्रकाशित होता है।
१६. लखनऊ से अनेक समाचार पत्र प्रकाशित होते हैं।

१७. पाँच लड़की पढ़ रही हैं।
१७. पाँच लड़कियाँ पढ़ रही हैं।

१८. गंगा के अन्दर पानी भरा है।
१८. गंगा में पानी भरा है।

१९. घर पर सब कुशल हैं।
१९. घर में सब कुशल है।

२०. मैं शीतल जल को पी रहा हूँ।
२०. मैं शीतल जल पी रहा हूँ।

२१. शिकारी ने शेर पकड़ा।
२१. शिकारी ने शेर को पकड़ा।

२२. भाप इन्जन चलाती है।
२२. भाप इन्जन को चलाती है।

२३. मैंने एक रात सपने को देखा।
२३. मैंने एक रात सपना देखा।

२४. मैंने रात भर पढ़ना है।
२४. मुझे रात भर पढ़ना है।

२५. मकान की दायीं ओर सड़क है।
२५. मकान के दायीं ओर सड़क है।

२६. आपने झूठ क्यों बोली।
२६. आपने झूठ क्यों बोला।

२७. महादेवी वर्मा विद्वान महिला थीं।
२७. महादेवी वर्मा विदुषी महिला थीं।

२८. मैंने हँस पड़ा।
२८. मैं हँस पड़ा।

२९. वह कहा कि जाकर पढ़ो।
२९. उसने कहा कि जाकर पढ़ो।

३०. वह विद्यार्थी जो गुरु जनो का आदर नहीं करते अशिष्ट होते हैं।
३०. वे छात्र जो गुरु जनों का आदर नहीं करते अशिष्ट होते हैं।

३१. हम पुस्तक नहीं पढ़े।
मैंने पुस्तक नहीं पढ़ी।

३२. वह पुस्तक नहीं खरीदा।
३२. उसने पुस्तक नहीं खरीदी।

३३. एक बड़ा शहर में वह रहता है।
३३. वह एक बड़े शहर में रहता है।

३४. गाय का दूध बड़ी मीठी होती है।
३४. गाय का दूध बड़ा मीठा होता है।

३५. सब गाय दूध नहीं देती।
३५. सभी गायें दूध नहीं देती।

३६. श्याम की पुत्री हुई।
३६. श्याम के पुत्री हुई।

३७. देश प्रगति कैसे कर सकती है।
३७. देश प्रगति कैसे कर सकता है।

३८. मैंने गाय और बैल खरीदा।
३८. मैंने गाय और बैल खरीदे।

३९. श्याम कई सेव वेचा।	३९. श्याम ने कई सेव बेचें।
४० सुनी है राम कल जाने वाली है	४०. सुना है राम कल जाने वाला है।
४१ अंध्यक्ष ने कई जगह भाषण किया।	४१. अध्यक्ष ने कई जगह भाषण दिया।
४२. सीता की आँखों में आँसू था।	४२. सीता के आँखों में आँसू थे।
४३. तेरे को पिता जी ने बुलाया हैं।	४३. तुम्हें पिता जी ने बुलाया है।
४४. मैं आपका उपकार आजन्म नहीं भूलूँगा।	४४. मैं आपका उपकार आजीवन नहीं भूलूँगा।
४५. उसे व्यर्थ रुपये देने से कोई लाभ नहीं।	४५. उसे रुपये देने से कोई लाभ नहीं।
४६. आपकी सौभाग्यवती कन्या।	४६. आपकी आयुष्मती कन्या।
४७. वह पागल आदमी हो गया।	४७. वह आदमी पागल हो गया।
४८. बच्चे को दृष्टि लग गयी है।	४८. बच्चे को नजर लग गयी है।
४९ दस हजार का टिकट खो गया।	४९. दस हजार के टिकट खो गये।
५०. वह आरोग्य हो गया।	५०. वह निरोग हो गया।

छात्रों के कापी देखने ज्ञात होता है कि छात्र हिन्दी लिखने में वर्तनी भी अनेक भूलें करते हैं। छात्रों में निम्न प्रकार के वर्तनी दोष पाये जाते हैं—

(१) संयुक्त अक्षर की अशुद्धियाँ—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
ज्ञात	ग्नात	विस्तार	विसतार
शक्ति	शकति		

(२) 'ष' के स्थान पर 'श' का प्रयोग—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
षष्ठ	षश्ठ	शरीफा	षरीफा
निष्काम	निश्काम	विष	विश

(३) 'क्ष' के स्थान पर 'छ' का प्रयोग —

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
क्षितिज	छिंतिज	क्षत्री	छत्री
रक्षा	रच्छा	वृक्ष	वृच्छ

(४) 'ऋ' के स्थान पर 'रि' का प्रयोग—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
ऋतु	रितु	ऋषि	रिषि

(५) 'श' के स्थान पर 'स' का प्रयोग —

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
शक्ति	सक्ति	शासन	सासन
शुद्ध	सुद्ध	विशेष	विसेस

(६) 'व' के स्थान पर 'ब' का प्रयोग—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
वन	बन	विचार	बिचार
विद्यार्थी	बिद्यार्थी	व्याख्या	ब्याख्या

(७) मात्राओं की अशुद्धियाँ—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
विचार	वीचार	पुस्तक	पूस्तक
परिणत	परणित	हिन्दी	हीन्दी
विनती	बीनती		

(८) अनुस्वार एवं अनुनासिक की अशुद्धियाँ—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
पंजम	पंचम	हँसी	हंसी
खण्ड	खंड	पण्डित	पंडित
अखण्ड	अखंड		

(९) 'ए' के स्थान पर 'ये' का प्रयोग—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
चाहिए	चाहिये	रुकिए	रुकिये

(१०) विन्दुओं की अशुद्धियाँ—

कभी-कभी छात्र उचित स्थान पर विन्दु लगाना भूल जाते हैं, जैसे—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
गाड़ी	गाडी	पढ़ना	पढना
संतरा	सतंरा		

(११) 'ई' के स्थान पर 'यी' लिखना—

प्रायः छात्र 'ई' के स्थान पर 'यी' लिख देते हैं, जैसे—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
भाई	भायी	नाई	नायी

(१२) हलन्त का लोप कर देना—

अधिकतर छात्रहलन्त का महत्व नहीं समझते हैं और उनका लोप कर देते हैं जबकि हिन्दी भाषा में इसका विशेष महत्व है।

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
अर्थात्	अर्थात	श्रीमान्	श्रीमान
स्वयम्	स्वयम	पश्चात्	पश्चात

(१३) मात्राओं का लोप—

प्रायः छात्र लिखते समय मात्राओं का लोप कर देते हैं, जैसे—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
मैथिली	मैथली	गृहिणी	गृहणी

(१४) 'इ' के स्थान पर 'ई' लिखना—

अक्सर छात्र छोटी इ के स्थान पर बड़ी ई का प्रयोग कर देते हैं, जैसे—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
विनती	वीनती	विद्यालय	वीद्यालय
किताब	कीताब	विचार	वीचार

(१५) अक्षरों का स्थान परिवर्तन—

कभी-कभी छात्र शब्द लिखते समय अक्षरों को परिवर्तित कर देते हैं जैसे

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
लखनऊ	नखलऊ	ब्राह्मण	ब्राम्हण
स्वयं	स्वंय		

(१६) विसर्ग लोप—

छात्र लिखने में प्रायः विसर्ग लगाना भूल जाते हैं, जैसे—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
प्रातःकाल	प्रातकाल	दुःख	दुख
प्रायः	प्राय		

(१७) अर्ध अक्षर का पूर्ण में परिवर्तन—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
गर्म	गरम	सर्दी	सरदी
निर्मल	निरमल		

(१८) अनावश्यक अक्षरों का प्रयोग—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
फिजूल	बेफिजूल	बुधवार	बुद्धवार

(१९) विदेशी शब्दों के प्रयोग में अशुद्धियाँ—

शुद्ध	अशुद्ध	शुद्ध	अशुद्ध
सार्टीफिकेट	साटीफीकेट	स्टेशन	टेशन
ट्रेन	टरेन		

अन्य प्राप्ति स्थान-
शारदा भवन
डी० ३६/४४ अगस्त्य कुण्ड वाराणसी-२२१००१